विषयानुक्रमणिका

संक्रान्तिप्रकरणम्

विवाहप्रकरणम्

वधूप्रवेशप्रकरणम्

द्विरागमनप्रकरणम्

अग्न्याधानप्रकरणम्

राजाभिषेकप्रकरणम्

यात्राप्रकरणम्

किया है कि यदि यहाँ (पञ्चभागसाकृष्य) ऐसा पाठ कर दिया जाय त दोष नहीं होगा।

ग्रन्थनामनिरूपण—

क्रियाकलापप्रतिपत्तिहेतुं संक्षिप्तसारार्थविलासगर्भम् ।
अनन्तदैवज्ञसुतः स रामो मुहूर्तचिन्तामणिमातनोति ॥ २ ॥

अन्वयः—अनन्तदैवज्ञसुतः सः रामः क्रियाकलापप्रतिपत्तिहेतुं संक्षिप्तसारार्थविलासगर्भम् मुहूर्त्तचिन्तामणि आतनोति ॥ २ ॥

भा० टी०—अनन्त दैवज्ञ के पुत्र राम दैवज्ञ जातकर्मादि क्रियाओं के समूह के सम्यक् ज्ञान के हेतु और थोड़े ही में सार अर्थ को प्रकाशि करनेवाले मुहूर्त्तचिन्तामणि नामक ग्रन्थ को बनाते हैं ॥ २ ॥

तिथियों के स्वामी—

तिथीशा वह्निकौ गौरी गणेशोऽहिर्गुहो रविः ।
शिवो दुर्गान्तको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ॥ ३ ॥

अन्वयः—वह्निकौ, गौरी, गणेशः, अहिः, गुहः, रविः, शिवो, दुर्गा, अन्तको विश्वे, हरिः, कामः, शिवः, शशी, (एते) तिथीशाः (स्युः) ॥ ३ ॥

भा० टी०—प्रतिपदादि तिथियों के स्वामी क्रम से अग्नि, ब्रह्मा, गौरी गणेश, सर्प, स्वामिकार्त्तिकेय, रवि, शिव, दुर्गा, यमराज, विश्वेदेव, विष्णु कामदेव, शिव और चन्द्रमा हैं। अर्थात् प्रतिपदा के स्वामी अग्नि, द्वितीया के ब्रह्मा, तृतीया के गौरी, चतुर्थी के गणेश, पंचमी के सर्प, षष्ठी के स्वामि-कार्त्तिकेय, सप्तमी के रवि, अष्टमी के शिव, नवमी के दुर्गा, दशमी के यमराज, एकादशी के विश्वेदेव, द्वादशी के विष्णु, त्रयोदशी के कामदेव, चतुर्दशी के शिव और पूर्णिमा के चन्द्रमा तथा अमावास्या के पितर स्वामी हैं ॥३॥

विशेष—जिस देवता की जो तिथि हो उस देवता को उसी की तिथि में स्थापित करना चाहिये।

इसका उपयोग नक्षत्र प्रकरण के ६१ वें श्लोक में (स्वर्क्षतिथिश्रणेवा) में होता है ॥ ३ ॥

तिथियों की नन्दादि संज्ञायें और सिद्धयोग—

नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णेति तिथ्योऽशुभमध्यशस्ताः ।
सितेऽसिते शस्तसमाधमाः स्युः सितज्ञभौमार्किगुरौ च सिद्धाः ॥४॥

अन्वयः—सिते (शुक्लपक्षे) नन्दा च भद्रा च जया च रिक्ता पूर्णा इति तिथ्यः (क्रमेण) अशुभमध्यशस्ताः (ज्ञेयाः)। असिते (कृष्णपक्षे क्रमेण) शस्तसमाधमाः स्युः, च सितज्ञभौमार्किगुरौ (चेदेते तिथ्यस्तदा) सिद्धाः (सिद्धयोगाः स्युः) ॥ ४ ॥

भा० टी०—शुक्लपक्ष में क्रम से नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा तिथियाँ अशुभ, मध्यम और शुभ फल देनेवाली होती हैं। (प्रतिपदा से पूर्णिमा या अमावास्या तक तिथियों को क्रम से नंदादि नाम से कहा जाता है। जैसे प्रतिपदा को नन्दा, द्वितीया को भद्रा, तृतीया को जया, चतुर्थी को रिक्ता और पंचमी को पूर्णा, पुनः षष्ठी को नन्दा, सप्तमी को भद्रा, अष्टमी को जया, नवमी को रिक्ता और दशमी को पूर्णा, पुनः एकादशी को नन्दा, द्वादशी को भद्रा, त्रयोदशी को जया, चतुर्दशी को रिक्ता और पूर्णिमा और अमावास्या को पूर्णा कहते हैं अर्थात् दोनों पक्षों में १, ६, ११ तिथि को नन्दा, २, ७, १२ तिथि को भद्रा, ३, ८, १३ तिथि को जया, ४, ९, १४ तिथि को रिक्ता और ५, १०, १५ तिथि को पूर्णा तिथि कहते हैं। अर्थात् शुक्लपक्ष में नन्दा तिथि की तीनों तिथियाँ (१, ६, ११) क्रमशः अशुभ, मध्यम, शुभ होती हैं। इसी प्रकार भद्रा आदि संज्ञक तिथि में भी क्रमशः अशुभादि होती हैं। और कृष्णपक्ष में वे ही नन्दादि तिथियाँ क्रमशः शुभ, मध्यम और अशुभ होती हैं। दोनों पक्षों की नन्दादि तिथियाँ यदि क्रमशः शुक्रवार, बुधवार, भौमवार, शनिवार और गुरुवार को हों तो उस दिन सिद्धयोग होता है। अर्थात् शुक्रवार को नन्दा, बुधवार को भद्रा, भौमवार को जया, शनिवार को रिक्ता और गुरुवार को पूर्णा हो तो सिद्ध-योग होता है ॥ ४ ॥

विशेष—तिथियों का शुभाशुभ फल चन्द्रमा के ऊपर निर्भर होता है। नियमतः अमावास्या से शुक्लपक्ष के पंचमी पर्यन्त चन्द्रमा क्षीण माना जाता है और दशमी पर्यन्त मध्यम तथा एकादशी से कृष्णपक्ष के पंचमी पर्यन्त पूर्ण माना जाता है। इसीलिये शुक्लपक्ष में प्रतिपदा से पंचमी पर्यन्त की तिथियाँ अशुभ होती हैं और षष्ठी से दशमी तक मध्यम और एकादशी से पूर्णिमा तक शुभद मानी जाती हैं। इसी प्रकार कृष्णपक्ष में भी समझना चाहिये॥ ४ ॥

रव्यादिवारों में निषिद्ध तिथियाँ और दग्ध नक्षत्र—

नन्दा भद्रा नन्दिकाख्या जया च रिक्ता भद्रा पूर्णसंज्ञामृताऽर्कात् ।
याम्यं त्वाष्ट्रं वैश्वदेवं धनिष्ठार्यम्णं ज्येष्ठान्त्यं रवेर्दग्धभं स्यात् ॥५॥

अन्वयः—अर्कात् (क्रमेण) नन्दा, भद्रा, नन्दिकाख्या, जया, रिक्ता, भद्रा, पूर्णसंज्ञा मृता स्युः। च रवेः (सकाशात्) याम्यं, त्वाष्ट्रं, वैश्वदेवं, धनिष्ठा, अर्यम्णं, ज्येष्ठा, अन्त्यं दग्धभं (स्यात्) ॥ ५ ॥

भा० टी०—रविवारादि को क्रम से नन्दादि तिथियाँ हों तो अधम होती हैं। अर्थात् रविवार को नन्दा तिथि, सोमवार को भद्रा, भौमवार को नन्दा,

बुधवार को जया, गुरुवार को रिक्ता, शुक्रवार को भद्रा और शनिवार को पूर्णा तिथि हो तो मृतसंज्ञक (अधमयोग) होती है। इसी प्रकार रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, भौमवार को उत्तराषाढ़, बुधवार को धनिष्ठा, गुरुवार को उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवार को ज्येष्ठा और शनिवार को रेवती नक्षत्र हो तो दग्ध नक्षत्र होता है ॥ ५ ॥

विशेषः—कतिपय पुस्तकों में अधमार्कात्, अमृतार्कात्, मृतार्कात्, ये पाठ मिलते हैं। किन्तु पीयूषधाराकार के मत से मृतार्कात् यही पाठ ठीक है जैसा कि उन्होंने लिखा है (अत्र बहुषु नारदसंहितापुस्तकेषु मृतिप्रदा इति पाठमाश्रित्य मृतेति पदं प्रायोजि ग्रंथकृता। तथैवास्माभिर्व्यक्तितं च सकलदेशीयशिष्टसंमतत्वा-दापामरं तथैव व्यवहारदर्शनाच्च) अन्त में इन्होंने लिखा है कि "एवं सत्यपि शुभत्वे शिष्टाचारेण व्यवस्था ज्ञेया।" इनके वचन से यह आभास हो रहा है कि यह स्वयं कोई निर्णय न कर शिष्टाचार के ऊपर ही अपने निर्णय को छोड़ दिये हैं। इस बात को न समझकर कितने टीकाकार 'अमृतार्कात्' यही पाठ शुद्ध मानते हैं जो कि उनका भ्रम है ॥ ५ ॥

ककच और संवर्त्तक योग—

षठ्यादितिथयो मन्दाद्विलोमं प्रतिपद्बुधे।
सप्तम्यर्केऽधमाः षष्ठ्याद्यामाश्च रदधावने ॥ ६ ॥

अन्वयः—षष्ठ्यादितिथयः मन्दाद्विलोमं (वारं गणनीयम्), बुधे प्रतिपद्, अर्के सप्तमी, (अधमाः), च (पुनः) षष्ठ्याद्यामाः रदधावने अधमाः(स्युः) ॥६॥

भा० टी०—शनिवार से विलोम वार तथा षष्ठी आदि तिथि (अर्थात् शनिवार को षष्ठी, शुक्रवार को सप्तमी, गुरुवार को अष्टमी, बुधवार को नवमी, भौमवार को दशमी, सोमवार को एकादशी और रविवार को त्रयोदशी तिथि हो तो अधम (ककच) होती हैं। और बुधवार को प्रतिपदा रविवार को सप्तमी हो तो अधम (संवर्त्तक) होती हैं। तथा षष्ठी, प्रतिपद और अमा-वास्या दन्तधावन (दतुअन) करने में अधम (निषिद्ध) हैं ॥ ६ ॥

षष्ठ्यष्टमीभूतविधुक्षयेषु नो सेवेत ना तैलपले क्षुरं रतम्।
नाभ्यञ्जनं विश्वदशद्विके तिथौ धात्रीफलैः स्नानममाद्रिगोष्वसत् ॥७॥

अन्वयः—षष्ठ्यष्टमीभूतविधुक्षयेषु ना (पुरुषः) क्रमेण तैलपले क्षुरं रतम् नो सेवेत। विश्वदशद्विके तिथौ अभ्यंजनं नो सेवेत, अमाद्रिगोषु धात्रीफलैः स्नानं असत (स्यात्) ॥ ७ ॥

भा० टी०—षष्ठी, अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या इन तिथियों में मनुष्य क्रम से तैल, मांस, हजामत बनवाना, स्त्री-प्रसंग न करे, अर्थात्

षष्ठी तिथि को तेल का प्रयोग न करे, अष्टमी को मांस न खाय, चतुर्दशी तिथि को बाल न बनवावे और अमावास्या तिथि को स्त्री-प्रसंग न करे, त्रयोदशी, दशमी, द्वितीया इन तिथियों को अभ्यंजन (उबटन) न लगावें और अमावास्या, सप्तमी, नवमी तिथि को आँवला लगाकर स्नान न करे ॥ ७ ॥

दग्ध, विष और हुताशन योग—

सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दा वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः ।
सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशा दग्धा विषाख्याश्च हुताशनाश्च ॥ ८ ॥
सूर्यादिवारे तिथयो भवन्ति मघाविशाखाशिवमूलवह्निः ।
ब्राह्मं करोर्काद्यमघण्टकाश्च शुभे विवर्ज्या गमने त्ववश्यम् ॥ ९ ॥

अन्वयः—सूर्यादिवारे सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दाः, वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः, सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशाः तिथयः (क्रमेणचेद्भवन्ति तदा क्रमात्) दग्धाः, विषाख्याः, हुताशनाः (योगाः) भवन्ति । च (पुनः) अर्कात् (क्रमेण) मघाविशाखाशिवमूलवह्निः ब्राह्मंकरः (चेत्स्युस्तदा) यमघण्टकाः भवन्ति । (इमे) शुभे विवर्ज्याः, गमने तु अवश्यं (विवर्ज्याः) ॥८-९॥

भा० टी०—यदि रविवार को सूर्य द्वादशी, सोमवार को ईश एकादशी, भौमवार को पंचमी, बुधवार को अग्नि तृतीया, गुरुवार को रस षष्ठी, शुक्रवार को अष्टमी और शनिवार को नवमी हो तो दग्ध होता है। इसी प्रकार रविवार को चतुर्थी, सोमवार को षष्ठी, भौमवार को सप्तमी, भौमवार को द्वितीया, बुधवार को अष्टमी, गुरुवार को नवमी और शनिवार को सप्तमी तिथि हो तो उस दिन विष योग और रविवार को द्वादशी, सोमवार को षष्ठी, भोमवार को सप्तमी, बुधवार को अष्टमी, गुरुवार को नवमी, शुक्रवार को दशमी और शनिवार को एकादशी तिथि हो तो हुताशन योग होता है ।

इसी प्रकार रविवार को मघा, सोमवार को विशाखा, भौमवार को आर्द्रा, बुधवार को मूल, गुरुवार को कृत्तिका, शुक्रवार को रोहिणी और शनिवार को हस्त नक्षत्र हो तो यमघण्ट योग होता है । इन योगों को शुभकार्य में त्याग देना चाहिये तथा यात्रा में तो अवश्य त्याग देना चाहिये ॥८-९॥

चैत्रादि मासों में शून्य तिथियाँ—

भाद्रे चन्द्रदृशौ नभस्यनलनेत्रे माधवे द्वादशी
पौषे वेदशरा इषे दशशिवा मार्गेऽद्रिनागा मधौ ।
गोष्टौ चोभयपक्षगाश्च तिथयः शून्या बुधैः कीर्तिता
ऊर्जाषाढतपस्यशुक्रतपसां कृष्णे शराङ्गाब्धयः ॥ १० ॥

शक्राः पञ्च सिते शक्राद्र्यग्निविश्वरसाः क्रमात् ।

अन्वयः—भाद्रे चन्द्रदृशौ, नभसि अनलनेत्रे, माधवे द्वादशी, पौषे वेदशरा, इषे दशशिवा, मार्गे अद्रिनागाः, मधौ गोऽष्टौ, उभयपक्षगाः तिथयः वुधैः शून्याः कीर्तिताः। (तथा) ऊर्जापाढतपस्यशुक्रतपसां (मासानां) कृष्णे (पक्षे) क्रमात् शराङ्गाब्धयः शक्राः पञ्च सिते (पक्षे) शक्राद्र्यग्निविश्वरसाः शून्याः कीर्तिताः ॥१०॥

भा० टी०—भाद्रपद मास के (चन्द्र) प्रतिपद (दृश) द्वितीया, एवं श्रावण मास में (अनल) तृतीया (नेत्र) द्वितीया, वैशाख मास में द्वादशी, पौष मास में (वेद) चौथ, (शर) पंचमी, आश्विन मास में (दश) दशमी, (शिव) एकादशी, मार्गशीर्ष मास में (अद्रि) सप्तमी (नाग) अष्टमी, चैत्र मास में (गो) नवमी अष्टमी, इन मासों के दोनों पक्षों में उक्त तिथियों को पंडितों ने शून्य कहा है। तथा (ऊर्जा) कार्त्तिक आषाढ़ (तपस्य) फाल्गुन, (शुक्र) ज्येष्ठ, (तपस) माघ इन मासों में कृष्णपक्ष में क्रम से (शर) पंचमी, (अङ्ग) षष्ठी, (अब्धी) चतुर्थी, (शक्र) चतुर्दशी, पंचमी तथा इन्हीं मासों के शुक्लपक्ष में क्रम से चतुर्दशी, सप्तमी, तृतीया, (विश्व) त्रयोदशी, (रस) षष्ठी ये तिथियाँ क्रम से पण्डितों ने शून्य कही हैं ॥१०॥

तथा निन्द्यं शुभे सार्पं द्वादश्यां वैश्वमादिमे ॥ ११ ॥
अनुराधा द्वितीयायां पञ्चम्यां पित्र्यभं तथा ।
त्र्युत्तराश्च तृतीयायामेकादश्यां च रोहिणी ॥ १२ ॥
स्वातीचित्रे त्रयोदश्यां सप्तम्यां हस्तराक्षसे ।
नवम्यां कृत्तिकाष्टम्यां पूभा षष्ठ्यां च रोहिणी ॥ १३ ॥

अन्वयः—तथा शुभे (सर्वस्मिन् शुभे कार्ये) द्वादश्यां सार्पं निन्द्यं, आदिमें वश्वम् (निंद्यं), द्वितीयायां अनुराधा (निंद्यं) पञ्चम्यां पित्र्यभम् (निन्द्यम्) च तृतीयायां त्र्युत्तराः (निंद्याः), एकादश्यां रोहिणी (निंद्या) त्रयोदश्यां स्वातीचित्रे (निंद्ये) सप्तम्यां हस्तराक्षसे (निंद्ये) नवम्यां कृत्तिका (निंद्या) अष्टम्यां पू. भा. (निंद्या) षष्ठ्यां च रोहिणी (निंद्या) ॥११-१३॥

भा० टी०—इसी प्रकार द्वादशी को आश्लेषा हो, प्रतिपद को उत्तराषाढ़ हो, द्वितीया को अनुराधा हो, पंचमी को मघा हो, तृतीया को तीनों उत्तरा (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद) हो, एकादशी को रोहिणी हो, त्रयोदशी को स्वाती और चित्रा हो, सप्तमी को हस्त और मूल हो, नवमी को कृत्तिका हो, अष्टमी को पूर्वाभाद्रपद हो और षष्ठी को रोहिणी हो तो सभी शुभकार्य निन्दित हैं अर्थात् उक्त दिन कोई शुभक्रिया न करे ॥११-१३॥

चैत्रादि मासों में शून्य नक्षत्र—

कदास्त्रभे त्वाष्ट्रवायू विश्वेज्यौ भगवासवौ ।
वैश्वश्रुती पाशिपौष्णे अजपादग्निपितृभे ॥ १४ ॥
चित्राद्वीशौ शिवाऽश्व्यर्काः श्रुतिमूले यमेन्द्रभे ।
चैत्रादिमासे शून्याख्यास्तारा वित्तविनाशदाः ॥ १५ ॥

अन्वयः—चैत्रादिमासे (क्रमेण) कदास्त्रभे त्वाष्ट्रवायू, विश्वेज्यौ, भगवासवौ, वैश्वश्रुती, पाशिपौष्णे, अजपात्, अग्निपितृभे, चित्राद्वीशौ, शिवाऽश्व्यर्काः, श्रुतिमूले, यमेन्द्रभे शून्याख्याः ताराः वित्तविनाशदाः (ज्ञेयाः) ॥१४-१५॥

भा० टी०—चैत्र मास में रोहिणी और अश्विनी, वैशाख में चित्रा और स्वाती, ज्येष्ठ मास में उत्तराषाढ़ और पुष्य, आषाढ़ मास में पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावण मास में उत्तराषाढ़ और श्रवण, भाद्रपद मास में शतभिष और रेवती, आश्विन मास में पूर्वाभाद्रपद, कार्तिक मास में कृत्तिका और मघा, मार्गशीर्ष मास में चित्रा और विशाखा, पौष मास में आर्द्रा, अश्विनी और हस्त, माघ मास में श्रवण और मूल तथा फाल्गुन मास में भरणी और ज्येष्ठा नक्षत्र शून्य होते हैं और इनमें शुभ कार्य करने से धन का नाश होता है ॥१४-१५॥

चैत्रादि मासों में शून्य राशियाँ—

घटो झषो गौर्मिथुनं मेष-कन्यालि-तौलिनः ।
धनुः कर्को मृगः सिंहश्चैत्रादौ शून्यराशयः ॥ १६ ॥

अन्वयः—चैत्रादौ (मासक्रमेण) घटः, झषः, गौः, मिथुनम्, मेषकन्यालितौलिनः, धनुः, कर्कः, मृगः, सिंहः शून्यराशयः (ज्ञेयाः) ॥१६॥

भा० टी०—चैत्र मास में कुम्भ, वैशाख मास में मीन, ज्येष्ठ मास में वृष, आषाढ़ मास में मिथुन, श्रावण मास में मेष, भाद्रपद मास में कन्या, आश्विन मास में वृश्चिक, कार्तिक मास में तुला, मार्गशीर्ष मास में धनु, पौष मास में कर्क, माघ मास में मकर और फाल्गुन मास में सिंह, ये राशियाँ उक्त मासों में शून्य फल देनेवाली होती हैं ॥१६॥

तिथियों में दग्धलग्न—

पक्षादितस्त्वोजतिथौ घटैणौ मृगेन्द्रनक्रौ मिथुनाङ्गने च ।
चापेन्दुभे कर्कहरी हयान्त्यौ गोन्त्यौ च नेष्टे तिथिशून्यलग्ने ॥ १७ ॥

अन्वयः—पक्षादितः ओजतिथौ (विषमतिथौ क्रमेण) घटैणौ मृगेन्द्रनक्रौ, मिथुनाङ्गने, चापेन्दुभे, कर्कहरी, हयान्त्यौ, गोन्त्यौ, तिथिशून्यलग्ने नेष्टे ॥१७॥

भा० टी०—प्रत्येक पक्ष में पक्षादि से विषम तिथियों में (अर्थात् प्रतिपदा को तुला और मकर, तृतीया को सिंह और मकर पञ्चमी, को मिथुन

और कन्या, सप्तमी को धनु और कर्क, नवमी को कर्क और सिंह, एकादशी को धनु और मीन, त्रयोदशी को वृष और मीन) शून्य लग्न हैं जो कि शुभकर्म में निष्फल होती है ॥१७॥

दुष्ट योगों का परिहार—

तिथयो मासशून्याश्च शून्यलग्नानि यान्यपि ।
मध्यदेशे विवर्ज्यानि न दूष्याणीतरेषु तु ॥ १८ ॥

अन्वयः—मासशून्याः तिथयः अपि च यानि शून्यलग्नानि मध्यदेशे विवर्ज्यानि इतरेषु (देशेषु) तु न दूष्याणि (भवन्ति) ॥१८॥

भा० टी०—मास की शून्य तिथियाँ (भाद्रे चन्द्रदृशौ इत्यादि) और मास के शून्य लग्न (पक्षादितस्त्वोजतिथौ घटैणौ इत्यादि) मध्यदेश[1] में शुभकर्म में त्याग देना चाहिये, दूसरे देश में इसका दोष नहीं है ॥१८॥

पंगु-अंध आदि लग्न और शून्य राशियों का परिहार—

पङ्ग्वन्धकाणलग्नानि मासशून्याश्च राशयः ।
गौडमालवयोस्त्याज्या अन्यदेशे न गर्हिताः ॥१९॥

अन्वयः—पङ्ग्वन्धकाणलग्नानि, मासशून्याः राशयश्च गौडमालवयोः त्याज्याः अन्यदेशे न गर्हिताः ॥१९॥

भा० टी०—पंगु अंध काण लग्न (विवाहप्रकरण में ८१वाँ श्लोक—घस्रेतुलालीत्यादि) और मास में कही हुई शून्य राशियाँ (घटो झपो इत्यादि) गौड़ और मालव देश में निषिद्ध हैं, अन्य देशों में इसका दोष नहीं होता है ॥१९॥

विशेष—यहाँ अन्धकाण शब्द से केवल अन्ध लग्नों को ही दोनों शब्दों से कहा है।

सभी शुभ कर्मों में त्याज्य योग—

वर्जयेत् सर्वकार्येषु हस्तार्कं पञ्चमीतिथौ ।
भौमाश्विनीं च सप्तम्यां, षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं तथा ॥२०॥
बुधानुराधामष्टम्यां, दशम्यां भृगुरेवतीम् ।
नवम्यां गुरुपुष्यं चैकादश्यां शनिरोहिणीम् ॥२१॥

१—मध्यदेश—मद्रारिमेदमांडव्यशाल्वनीपोज्जिहानसंख्यानाः ।
मरुवत्सघोषयामुनसारस्वतमत्स्य माध्यमिकाः ॥
माथुरकोपज्योतिषधर्मारण्यानिशूरसेनाश्च ।
गौरग्रीवौ दैहिक पंचगुडाश्वत्थपांचालाः ॥
साकेतककुकुरुकालकोटिकुकुराश्च पारियात्रानगः ।
औदुंबरकापिष्ठकगजाह्वयाश्चेति मध्यमिदम् ॥

अन्वयः—सर्वकार्येषु पञ्चमीतिथौ हस्तार्क, सप्तम्यां भौमाश्विनीं तथा षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं, अष्टम्यां बुधानुराधा, दशम्यां भृगुरेवतीं, नवम्यां गुरुपुष्यं, एकादश्यां शनिरोहिणीं च वर्जयेत् ॥ २०-२१ ॥

भा० टी०—सभी शुभ कार्यों को, रविवार को पंचमी तिथि और हस्त-नक्षत्र हो तो नहीं करना चाहिये, इसी प्रकार भौमवार को सप्तमी तिथि अश्विनी नक्षत्र हो, सोमवार को षष्ठी तिथि मृगशिरा नक्षत्र हो, बुधवार को अष्टमी तिथि अनुराधा नक्षत्र हो, शुक्रवार को दशमी तिथि रेवती नक्षत्र हो, गुरुवार को नवमी तिथि पुष्य नक्षत्र हो और शनिवार को एकादशी तिथि रोहिणी नक्षत्र हो तो कोई शुभक्रिया न करे ॥२०-२१॥

कार्यविशेष में त्याज्य वार और नक्षत्र—

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम् ।
भौमाश्विनीं शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं विवर्जयेत् ॥२२॥

अन्वयः—गृहप्रवेशे, यात्रायां, च (पुनः) विवाहे यथाक्रमम् भौमाश्विनीं, शनौ ब्राह्मं, गुरौ पुष्यं विवर्जयेत् ॥२२॥

भा० टी०—गृहप्रवेश, यात्रा और विवाह में यथाक्रम से भौमवार को अश्विनी नक्षत्र, शनिवार को रोहिणी नक्षत्र, और गुरुवार को पुष्य नक्षत्र को त्याग दे, अर्थात् भौमवार को अश्विनी नक्षत्र हो तो गृहप्रवेश न करे, शनिवार को रोहिणी नक्षत्र हो तो यात्रा न करे और गुरुवार को पुष्य नक्षत्र हो तो उस दिन विवाह न करे ॥२२॥

आनन्द आदि योगों के नाम—

आनन्दाख्यः कालदण्डश्च धूम्रो धाता सौम्यो ध्वांक्षकेतू क्रमेण ।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरञ्च छत्रं मित्रं मानसं पद्मलुम्बौ ॥२३॥
उत्पात-मृत्यू किल काण-सिद्धी शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च ।
मातङ्ग-रक्षश्चर-सुस्थिराख्याः प्रवर्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥२४॥

अन्वयः—आनन्दाख्यः, कालदण्डः, च (पुनः) धूम्रः, धाता, सौम्यः, ध्वांक्षकेतू, श्रीवत्साख्यः, वज्रकं, च (पुनः) मुद्गरं, छत्रं, मित्रं, मानसं, पद्मलुम्बौ, उत्पातः मृत्युः, किल (निश्चयेन) काणः सिद्धिः, शुभः, अमृताख्यः मुसलं, गदः च (पुनः) मातङ्ग-रक्षश्चर-सुस्थिराख्यप्रवर्धमानाः (योगाः स्युः) स्वनाम्ना फलदाः ॥ २३-२४ ॥

भा० टी०—आनन्द १, कालदण्ड २, धूम्र ३, धाता ४, सौम्य ५, ध्वांक्ष ६, केतु ७, श्रीवत्स ८, वज्र ९, मुद्गर १०, छत्र ११, मित्र १२, मानस १३, पद्म १४, लुम्ब १५, उत्पात १६, मृत्यु १७, काण १८, सिद्धि १९, शुभ २०, अमृत २१,

मुसल २२, गद २३, मातङ्ग २४, रक्ष २५, चर २६, सुस्थिर २७, और प्रवर्ध-मान २८, ये २८ चल योग हैं। इनका नाम के तुल्य ही फल होता है ॥२३-२४॥

योगचक्रम्

सं.	योग	र.	चं.	मं.	बु.	गु.	शु.	श.
१	आनन्द	अ.	मृ.	श्ले.	ह.	अनु.	उ.षा.	श.
२	कालदंड	भ.	आ.	म.	चि.	ज्ये.	अभि.	पू. भा.
३	धूम्र	कृ.	पुन.	पू. फा.	स्वा.	मू.	श्र.	उ. भा.
४	धाता	रो.	पु.	उ. फा.	वि.	पू. षा.	ध.	रे.
५	सौम्य	मृ.	श्ले.	ह.	अनु.	उ.षा.	श.	अ.
६	ध्वांक्ष	आ.	म.	चि.	ज्ये.	अभि.	पू.भा.	भ.
७	ध्वज	पुन.	पू. फा.	स्वा.	मू.	श्र.	उ.भा.	कृ.
८	श्रीवत्स	पु.	उ.फा.	वि.	पू. षा.	ध.	रे.	रो.
९	वज्र	श्ले.	ह.	अनु.	उ. षा.	श.	अश्वि.	मृ.
१०	मुद्गर	म.	चि.	ज्ये.	अभि.	पू. भा.	भ.	आ.
११	छत्र	पू.फा.	स्वा.	मू.	श्र.	उ.भा.	कृ.	पुन.
१२	मित्र	उ.फा.	वि.	पू. षा.	ध.	रे.	रो.	पु.
१३	मानस	ह.	अनु.	उ. षा.	श.	अश्वि.	मृ.	श्ले.
१४	पद्म	चि.	ज्ये.	अभि	पू. भा.	भ.	आ.	म.
१५	लुम्ब	स्वा.	मू.	श्र.	उ. भा.	कृ.	पुन.	पू. फा.
१६	उत्पात	वि.	पू. षा.	ध.	रे.	रो.	पु.	उ.फा.
१७	मृत्यु	अनु.	उ. षा.	श.	अश्वि.	मृ.	श्ले.	ह.
१८	काण	ज्ये.	अभि.	पू. भा.	भ.	आ.	म.	चि.
१९	सिद्धि	मू.	श्र.	उ भा.	कृ.	पुन.	पू. फा.	स्वा.
२०	शुभ	पू. षा.	ध.	रे.	रो.	पु.	उ.षा.	वि.
२१	अमृत	उ.षा.	श.	अश्वि.	मृ.	श्ले.	ह.	अनु.
२२	मुसल	अभि.	पू भा.	भ.	आ.	म.	चि.	ज्ये.
२३	गद	श्र.	उ.भा.	कृ.	पुन.	पू. फा.	स्वा.	मू.
२४	मातंग	ध.	रे.	रो.	पु.	उ. फा	वि.	पू. षा.
२५	रक्ष	श.	अश्वि.	मृ.	श्ले.	ह.	अनु.	उ.षा.
२६	चर	पू. भा.	भ.	आ.	म.	चि.	ज्ये.	अभि.
२७	स्थिर	उ. भा.	कृ.	पुन.	पू. फा.	स्वा.	मू.	श्र.
२८	प्रवर्धमान	रे.	रो.	पु.	उ.फा	वि.	पू. षा.	ध.

आनन्द आदि योगों के जानने की रीति—

दास्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे कराद्बुधे ।
मैत्राद्गुरौ भृगौ वैश्वाद्गण्या मन्दे च वारुणात् ॥२५॥

अन्वयः—अर्के दास्राद्, इन्दौ मृगात्, भौमे सार्पात्, बुधे करात्, गुरौ मैत्रात्, भृगौ वैश्वाद्, मन्दे वारुणात् गण्याः ।।२५।।

भा० टी०—यदि रविवार को आनंद आदि योगों को जानना हो तो अश्विनी से उस दिन पंचांग में जो नक्षत्र हो वहाँ तक गिने, जो संख्या हो तत्तुल्य ही आनंदादि योगों में से योग होगा। इसी प्रकार सोमवार को मृगशिरा से, भौमवार को आश्लेषा से, बुधवार को हस्त से, गुरुवार को अनुराधा से, शुक्रवार को उत्तराषाढ़ से और शनिवार को शतभिष से दिन नक्षत्र तक गिनकर योगों को जानना चाहिये ।। २५ ।।

उदाहरण—जैसे ज्येष्ठ कृष्ण ५ गुरुवार को आनंदादि योगों में से कौन-सा योग होगा यह देखना है तो पंचांग में उस दिन पूर्वाषाढ़ नक्षत्र है, और गुरुवार को अनुराधा से गिनना चाहिये, अतः अनुराधा से पूर्वाषाढ़ तक गिनने से ४ संख्या हुई, इसलिये उक्त दिन आनंदादि योगों में से चौथा धाता नाम का योग होगा। शेष चक्र से स्पष्ट है।

अशुभ योगों का परिहार—

ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे चेषुनाड्यो वर्ज्या वेदाः पद्मलुम्बे गदेऽश्वाः ।
धूम्रे काणे मौसले भूर्द्वयं द्वे रक्षोमृत्यूत्पातकालाश्च सर्वे ।।२६।।

अन्वयः—ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे इषुनाड्यः, पद्मलुम्बे वेदाः, गदे अश्वाः नाड्यः वर्ज्याः। धूम्रे भूः, काणे द्वयं, मौसले द्वे च (पुनः) रक्षोमृत्यूत्पातकालाः सर्वे (नाड्यः) वर्ज्याः ।। २६ ।।

भा० टी०—ध्वांक्ष, वज्र और मुद्गर योगों की प्रारंभ से ५ घटी, पद्मलुम्ब योग की ४ घटी, गद योग की सात घटी त्याग देनी चाहिये। धूम्र योग की १ घटी, काण योग की दो घटी, मुसल योग की २ घटी त्याग देनी चाहिये। शेष घटियाँ शुभद हैं और राक्षस, मृत्यु और उत्पात योग की सभी घटी त्याग देनी चाहिये ।। २६ ।।

रवियोग—

सूर्यभाद्वेद-गो-तर्क-दिग्विश्वनख-सम्मिते ।
चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्युर्दोषसङ्घविनाशकाः ।।२७।।

अन्वयः—सूर्यभात् (सूर्याधिष्ठितनक्षत्रात्) वेद-गो-तर्कदिग्विश्वनखसम्मिते चन्द्रर्क्षे दोषसंघविनाशका रवियोगाः स्युः ।। २७ ।।

भा० टी०—सूर्य जिस नक्षत्र पर हों उससे चन्द्रनक्षत्र (जिस दिन जो नक्षत्र हो) तक गिनने से यदि ४।९।६।१०।१३।२० संख्यक नक्षत्र हो तो उस दिन दोषों के समूहों को नाश करनेवाला रवियोग होता है ।। २७ ।।

रव्यादिवारों में सर्वार्थसिद्धि योग—

सूर्येऽर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं चन्द्रे श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रम् ।
भौमेऽश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं ज्ञे ब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम् ।।२८।।
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं शुक्रेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभम् ।
शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि सर्वार्थसिद्धचै कथितानि पूर्वैः ।।२९।।

अन्वयः—सूर्ये (रविवासरे) अर्कमूलोत्तरपुष्यदास्रं, चन्द्रे (चन्द्रवासरे) श्रुतिब्राह्मशशीज्यमैत्रं, भौमे अश्व्यहिर्बुध्न्यकृशानुसार्पं, ज्ञे (बुधे) ब्राह्ममैत्रार्ककृशानुचान्द्रम्, जीवे (गुरौ) अन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्यधिष्ण्यं, शुक्रे अन्त्यमैत्राश्व्यदितिश्रवोभं, शनौ श्रुतिब्राह्मसमीरभानि, पूर्वैः सर्वार्थसिद्धचै कथितानि ।।२८-२९।।

भा० टी०—रविवार को हस्त, मूल, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, पुष्य, अश्विनी, सोमवार को श्रवण, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा, भौमवार को अश्विनी, उत्तराभाद्रपद, कृत्तिका, श्लेषा, बुधवार को रोहिणी, अनुराधा, हस्त, कृत्तिका, मृगशिरा, गुरुवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, शुक्रवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु, श्रवण और शनिवार को श्रवण, रोहिणी, स्वाती, नक्षत्र हों तो उक्त दिनों में सर्वार्थसिद्धियोग प्राचीन आचार्यों के मत से होता है।

उत्पातादियोग—

द्वीशात्तोयाद्वासवात्पौष्णभाच्च ब्राह्मात्पुष्यादर्यमर्क्षाच्चतुर्भैः ।
स्यादुत्पातो मृत्युकाणौ च सिद्धिर्वारेऽर्काद्ये तत्फलं नामतुल्यम् ।।३०।।

अन्वयः—अर्काद्ये वारे द्वीशात्, तोयात्, वासवात्, पौष्णभात्, ब्राह्मात्, पुष्यात्, अर्यमर्क्षात्, चतुर्भैः (क्रमात्) उत्पातः, मृत्युकाणौ, च सिद्धिः स्यात्, तत्फलं नामतुल्यं स्यात् ।। ३० ।।

भा० टी०—रविवारादि को क्रम से अर्थात् रविवार को विशाखा से, सोमवार को पूर्वाषाढ़ से, भौमवार को धनिष्ठा से, बुधवार को रेवती से, गुरुवार को रोहिणी से, शुक्रवार को पुष्य से और शनिवार को उत्तरा फाल्गुनी से चार चार नक्षत्र तक क्रम से उत्पात, मृत्यु, काण और सिद्धि योग होता है; अर्थात् रविवार को विशाखा हो तो उत्पात योग, अनुराधा हो तो मृत्यु योग, ज्येष्ठा हो तो काण योग और मूल हो तो सिद्धि योग होता है। इसी प्रकार अन्य वारों में भी जानना चाहिए। इनका नाम के तुल्य ही फल होता है।। ३० ।।

उदाहरण चक्र

	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	फल.
उत्पात	वि.	पू. षा.	ध.	रे.	रो.	पुष्य.	उ. फा.	अशुभ
मृत्यु	अनु.	उषा.	श.	अश्वि.	मृ.	श्ले.	ह.	अशुभ
काण.	ज्ये.	अभि.	पू. भा.	भ.	आ.	म.	चि.	अशुभ
सिद्धि.	मू.	ध.	उ. भा.	कृ.	पुन.	पू. फा.	स्वा.	शुभ.

देशभेद से दुष्ट योगों की व्यवस्था—

कुयोगास्तिथिवारोत्थास्तिथिभोत्था भवारजाः ।
हूणबङ्गखशेष्वेव वर्ज्यास्त्रितयजास्तथा ॥ ३१ ॥

अन्वयः—तिथिवारोत्थाः (कुयोगाः) तिथिभोत्थाः (कुयोगाः) भवारजाः (कुयोगाः) तथा त्रितयजाः कुयोगाः हूण-बंग-खशेषु एव वर्ज्याः ॥ ३१ ॥

भा० टी०—तिथि और वार से उत्पन्न (सूर्येशपंचाग्नि इत्यादि) कुयोग, तिथि और नक्षत्र से उत्पन्न (तथा निंद्यं शुभे सार्पमित्यादि) कुयोग, नक्षत्र और वार से उत्पन्न (याम्यं त्वाष्ट्रमित्यादि) और तीनों से तिथि-वार-नक्षत्र से उत्पन्न (वर्जयेत् सर्वकार्येषु हस्तार्के पंचमीत्यादि) कुयोग को हूण (पंजाब) प्रदेश, बङ्ग (बंगाल) और खश (नैपाल) देश में ही दोषकारक होते हैं ॥ ३१ ॥

सभी शुभ कार्यों में त्याज्य पदार्थ—

सर्वस्मिन्विधुपापयुक्तनुलवावर्धे निशाह्नोर्घटी-
त्र्यंशं वै कुनवांशकं ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयम् ।
उत्पातग्रहतोऽद्र्यहांश्च शुभदोत्पातैश्च दुष्टं दिनं
षण्मासं ग्रहभिन्नभं त्यज शुभे यौद्धं तथोत्पातभम् ॥३२॥

अन्वयः—सर्वस्मिन् शुभे विधुपापयुक्तनुलवौ, निशाह्नोः अर्धे घटीत्र्यंशं, वै (निश्चयेन) कुनवांशकं, ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयं, उत्पातग्रहतः अद्रयहान्, शुभदोत्पातैः दुष्टं दिनं त्यज । ग्रहभिन्नभं, यौद्धं तथा उत्पातभं षण्मासं त्यज ॥३२॥

भा० टी०—सभी शुभ कार्यों में चन्द्रमा और पापग्रह[1] से युक्त लग्न और नवमांश[2] अर्थात् जिस लग्न में और जिस नवमांश में चन्द्रमा और

१—पापग्रह—(क्षीणेन्द्वर्कमहीसुतार्कतनयः पापाः बुधस्तैर्युतः) क्षीणचन्द्रमा (कृष्णपक्ष के पंचमी से शुक्लपक्ष के पंचमी तक चन्द्रमा क्षीण होता है), सूर्य, भौम, शनि ये पापग्रह हैं। इनके साथ बुध हो तो वह भी पापग्रह होता है। शेष शुभग्रह हैं।
२—नवमांश—विवाह प्रकरण में ३९ वें श्लोक में देखना चाहिये। (क्रियैणतौलीन्द्रभतो नवांशविधिरुच्यते बुधैः) ।

पापग्रह हो, रात्रि और दिन के मध्य में एक घटी का तीसरा भाग अर्थात् २० पल, पापग्रह का नवमांश, ग्रहण से पहले तीन दिन, उत्पात और ग्रहण के बाद ७ दिन शुभद[1] उत्पात से दूषित दिन त्याग देना चाहिये। ग्रह से वेधित नक्षत्र, युद्ध का नक्षत्र (जिस नक्षत्र पर ग्रह का युद्ध हुआ हो) और जिस नक्षत्र पर कोई उत्पात हुआ हो उसे ६ मास तक त्याग दें ॥ ३२ ॥

ग्रास के अनुसार ग्रहणनक्षत्र का निषिद्धकाल—

नेष्टं ग्रहर्क्षं सकलार्धपादग्रासे क्रमात्तर्कगुणेन्दुमासान् ।
पूर्वं परस्तादुभयोस्त्रिघस्रा ग्रस्तेऽस्तगे वाभ्युदितेऽर्धखण्डे ॥३३॥

अन्वयः—सकलार्धपादग्रासे क्रमात् तर्कगुणेन्दुमासान् ग्रहर्क्षं नेष्टम्। ग्रस्तेऽस्तगे पूर्वं त्रिघस्रा नेष्टाः। ग्रस्तेऽभ्युदिते परस्ताद् त्रिघस्रा नेष्टाः। ग्रस्तेऽर्द्धखंडे उभयोः त्रिघस्रा नेष्टाः ॥ ३३ ॥

भा० टी०—सम्पूर्ण, आधे और चौथाई ग्रहण में क्रम से (तर्क) ६ मास, (गुण) ३ मास और (इन्दु) १ मास तक ग्रहण के नक्षत्र को शुभकृत्य में त्याग देना चाहिये। अर्थात् सम्पूर्ण ग्रहण लगा हो तो जिस नक्षत्र पर ग्रहण लगा हो उसमें ६ मास तक कोई शुभ क्रिया न करे तथा आधे ग्रहण में ३ मास तक और चौथाई ग्रहण में १ मास तक ग्रहण-नक्षत्र को त्याग दे। यदि ग्रहण लगा ही हुआ (रविचन्द्र) अस्त हो जाय तो ग्रहण से पहले तीन दिन तथा ग्रहण लगा हुआ ही उदय हो तो ग्रहण के बाद ३ दिन और आधा ग्रहण लगा हो तो ग्रहण के पहले ३ दिन और बाद में ३ दिन अशुभ होता है ॥३३॥

आवश्यक पंचाङ्गशुद्धि—

जन्मर्क्षमासतिथयो व्यतिपातभद्रावैधृत्यमापितृदिनानि तिथिक्षयर्द्धी ।
न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्द्धपात विष्कम्भवज्रघटिकात्रयमेव वर्ज्यम् ॥३४॥

१—शुभद उत्पात—वज्राशनिमहीकंपाः संध्यानिर्घातनिःस्वनाः ।
परिवेषरजोधूमरक्तार्कास्तमनोदयाः ॥ १ ॥
द्रुमेभ्योऽन्नरसः स्नेहमधुपुष्पफलोद्गमाः ।
गोपक्षिमधुवृद्धिश्च शिवाय मधुमाधवे ॥ २ ॥
तारोल्कापातकलुषं कपिलार्केन्दुमंडलम् ।
अनग्निज्वलनास्फोटधूमरेखानिलाकुलम् ॥ ३ ॥ इत्यादि

अन्वयः—जन्मर्क्ष-मास-तिथयः व्यतिपात-भद्रा-वैधृत्यमापितृदिनानि तिथिक्षयर्धी,न्यूनाधिमास-कुलिक-प्रहरार्द्ध-पात,विष्कम्भ-वज्रघटिकात्रयं एव वर्ज्याः ॥३४॥

भा० टी०—सभी शुभ कर्मों में जन्म का नक्षत्र, जन्म का मास, जन्म की तिथि, व्यतिपात, भद्रा, वैधृति, अमावस्या, माता-पिता का क्षयदिन, तिथिक्षय, तिथिवृद्धि, क्षयमास, अधिमास, कुलिक, अर्धयाम और पात वर्जित हैं और विष्कम्भ तथा वज्र योग के आरम्भ से तीन घड़ी त्याग देना चाहिये ॥३४॥

परिघादि योगों की त्याज्य घटी—

परिघार्धं पञ्च शूले षट् च गण्डातिगण्डयोः ।
व्याघाते नव नाड्यश्च वर्ज्याः सर्वेषु कर्मसु ॥ ३५ ॥

अन्वयः—सर्वेषु कर्मसु परिघार्धं, शूले पञ्च, गण्डातिगण्डयोः षट्, व्याघाते नव नाड्यः वर्ज्याः ॥३५॥

भा० टी०—सभी कार्यों में परिघ योग का पूर्वार्ध, शूल योग के आरम्भ से पाँच घटी, गण्ड-अतिगण्ड योग के आरम्भ से ६ घटी और व्याघात योग के आरंभ से ९ घटी त्याग देना चाहिए। शेष घटियाँ शुभद होती हैं ॥३५॥

पक्ष की रन्ध्र तिथियाँ—

वेदाङ्गाष्टनवार्केन्द्रपक्षरन्ध्रतिथौ त्यजेत् ।
वस्वङ्कमनुतत्त्वाशाः शरा नाडीः पराः शुभाः ॥ ३६ ॥

अन्वयः—वेदाङ्गाष्टनवार्केन्द्रपक्षरन्ध्रतिथौ (क्रमेण) वस्वङ्कमनुतत्वाशाः शराः नाडीः त्यजेत्, पराः (नाड्यः) शुभाः ॥३६॥

भा० टी०—दोनों पक्षों की चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, द्वादशी, चतुर्दशी ये रन्ध्र (अशुभ) तिथियाँ हैं, इनके आदि की क्रम से ८, ९, १४, २५, १०, ५ घड़ियाँ सभी शुभ कार्यों में त्याग देनी चाहिये। शेष शुभद हैं ॥३६॥

कुलिक आदि मुहूर्त्तों के जानने का प्रकार—

कुलिकः कालवेला च यमघण्टश्च कण्टकः ।
वाराद्द्विघ्ने क्रमान्मन्दे बुधे जीवे कुजे क्षणः ॥ ३७ ॥

अन्वयः—वारात् (वर्तमानवारात्) मन्दे, बुधे, जीवे, कुजे (गण्ये) द्विघ्ने क्रमात् कुलिकः, कालवेला, कण्टकः क्षणः (स्यात्) ॥३७॥

भा० टी०—वर्तमान वार से शनि, बुध, गुरु और भौमवार तक गिनने से जो संख्या हो उसे दूना कर दे। जो संख्या हो तत्तुल्य ही उस दिन क्रम से कुलिक, कालवेला, यमघण्ट और कण्टक मुहूर्त्त होते हैं ॥३७॥

उदाहरण—जैसे वर्तमान रविवार को इन मुहूर्त्तों का विचार करना है तो रवि से शनि तक गिनने से ७ संख्या हुई, इसे दूना किया तो १४ हुआ, अतः रवि को

१४ वाँ मुहूर्त कुलिक हुआ, पुनः रवि से बुधवार तक गिनने से संख्या ४ हुई, इसे दूना किया तो ८ हुआ अतः उक्त दिन ८ वाँ मुहूर्त कालवेला होगा, पुनः रवि से गुरुवार तक गिनने से संख्या ५ हुई इसे दूना किया तो १० हुए, अतः रवि को १० वाँ मुहूर्त यमघण्ट हुआ और रवि से भौमवार तक संख्या ३ हुई इसे दूना करने से ६ हुआ अतः इस दिन ६ वाँ मुहूर्त कंटक हुआ। इसी प्रकार प्रत्येक वार को गिनकर मुहूर्त्तों को जानना चाहिये ॥३७॥

स्पष्टार्थ चक्र

	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
कुलिक	१४	१२	१०	८	६	४	२
कालवेला	८	६	४	२	१४	१२	१०
यमघण्ट	१०	८	६	४	२	१४	१२
कंटक	६	४	२	१४	१२	१०	८

रव्यादिवारों में दुष्ट मुहूर्त—

सूर्ये षट्-स्वर-नाग-दिङ्-मनुमिताश्चन्द्रेऽब्धिषट्कुञ्जरा-
ङ्काऽर्का विश्वपुरन्दराः, क्षितिसुते द्व्यब्ध्यग्नि-तर्का दिशः ।
सौम्ये द्व्यब्धिगजाङ्क-दिङ्-मनुमिता, जीवे द्वि-षड्-भास्कराः
शक्राख्यास्तिथयः कलाश्च, भृगुजे वेदेषु-तर्क-ग्रहाः ॥३८॥
दिग्-भास्करा मनुमिताश्च, शनौ शशि-द्वि-
नागा दिशो भव-दिवाकर-सम्मिताश्च ।
दुष्टः क्षणः कुलिक-कण्टक-कालवेलाः
स्युश्चार्द्धयामयमघण्टगता कलांशाः ॥ ३९ ॥

अन्वयः—सूर्ये षट्-स्वर-नाग-दिङ्-मनुमिताः, चन्द्रे अब्धिषट्कुञ्जराङ्कार्काः विश्वपुरन्दराः, क्षितिसुते द्व्यब्ध्यग्नितर्का दिशः, सौम्ये द्व्यब्धिगजाङ्कदिङ्मनुमिताः, जीवे द्विषड्भास्कराः शक्राख्यास्तिथयः कलाश्च, भृगुजे वेदेषु-तर्कग्रहा दिग्भास्करा मनुमिताश्च, शनौ शशिद्विनागा दिशो भवदिवाकरसम्मिताश्च मुहूर्त्ताः कलांशाः दुष्टक्षणः कुलिक-कंटक-कालवेलाः स्युः। अर्धयाम-यमघण्टगताः स्युः ॥३८-३९॥

भा० टी०—रविवार को ६, ७, ८, १०, १४ वाँ, सोमवार को ४, ६, ८, ९, १२, १३, १४ वाँ, भौमवार को २, ४, ३, ६, १० वाँ, बुधवार को २, ४, ८, ९, १०, १४ वाँ, गुरुवार को २, ६, १२, १४, १५, १६ वाँ, शुक्रवार को ४, ५, ६, ९, १०, १२, १४ वाँ और शनिवार को १, २, ८, १०, ११, १२ वाँ मुहूर्त षोडशांश (दिनमान का सोलहवाँ भाग एक मुहूर्त्त का मान होता है) दुर्मुहूर्त्त, कुलिक, कंटक, कालवेला, अर्द्धयाम[1] और यमघंट होता है। इन वारों में उक्त मुहूर्त्तों को शुभकार्य में त्याग देना चाहिये ॥३८-३९॥

होलिकाष्टक का विचार—

विपाशेरावतीतीरे शुतुद्र्याश्च त्रिपुष्करे ।
विवाहादिशुभे नेष्टं होलिकाप्राग्दिनाष्टकम् ॥ ४० ॥

अन्वयः—विपाशेरावतीतीरे शुतुद्र्याश्च (तीरे) त्रिपुष्करे (क्षेत्रे) विवाहादिशुभे होलिकाप्राग्दिनाष्टकं नेष्टं स्यात् ॥४०॥

भा० टी०—विपाशा (व्यास नदी), इरावती (रावी नदी), शुतुद्रु (सतलज) इन नदियों के तीर पर बसे हुए देशों में तथा त्रिपुष्कर क्षेत्र (पुष्कर सरोवर अजमेर के प्रांत) में होलिका (फाल्गुनशुक्ल पूर्णिमा) के पहले ८ दिन विवाहादि शुभ कृत्यों में त्याग देना चाहिये ॥४०॥

मृत्यु-क्रकचादि योगों का परिहार—

मृत्यु-क्रकच-दग्धादीनिन्दौ शस्ते शुभान् जगुः ।
केचिद्यामोत्तरञ्चान्ये यात्रायामेव निन्दितान् ॥ ४१ ॥

अन्वयः—मृत्युक्रकचदग्धादीन् (योगान्) इन्दौ (चन्द्रे) शस्ते (गोचरेण शुभत्वे), शुभान् जगुः। केचित (आचार्याः) यामोत्तरं (शुभान् जगुः), अन्ये (आचार्याः) यात्रायामेव निन्दितान् जगुः ॥४१॥

भा० टी०—मृत्युयोग (आनंदादि योगों में कहा हुआ), क्रकचयोग (षष्ठ्यादितिथयो इत्यादि), दग्धयोग (सूर्येशपञ्चाग्नि) और विषहुताशनादि योग चन्द्रमा के गोचर से शुभद होने से शुभद होते हैं। किसी आचार्य के मत से एक प्रहर के बाद शुभद होते हैं और किसी आचार्य के मत से केवल यात्रा में ही इन योगों का दोष होता है ॥४१॥

१—विशेष—रविवार से वर्तमान वार तक गिनकर आठ से भाग देकर शेष में एक जोड़ देने से जो संख्या हो वही उस दिन अर्धयाम होता है। (वारस्त्रिघ्नोऽभिस्तष्टः सैकः स्यादर्धयामकः)।

दुर्मुहूर्त्त—विवाह प्रकरण में ५४ वें श्लोक में कहा गया है (रवावर्यमा इत्यादि)।

दुष्टयोगों का पुनः परिहार—

अयोगे सुयोगोऽपि चेत् स्यात्तदानीमयोगं निहत्यैव सिद्धिं तनोति ।
परे लग्नशुद्धया कुयोगादिनाशं दिनार्द्धोत्तरं विष्टिपूर्वं च शस्तम् ॥४२॥

अन्वयः—चेत् अयोगे (दुर्योगे सति) सुयोगोऽपि स्यात्तदानीं एषः (सुयोगः) अयोगं निहत्य कार्यसिद्धिं तनोति । परे (आचार्याः) लग्नशुद्धया कुयोगादिनाशं (वदन्ति) विष्टिपूर्वं दिनार्धोत्तरं शस्तं (प्रवदन्ति) ॥४२॥

भा० टी०—यदि अयोग (क्रकच आदि दुर्योग) के दिन कोई सुयोग (सर्वार्थ-सिद्ध-अमृतसिद्ध आदि) भी हो तो यह सुयोग अयोग का नाश करके कार्य को सिद्ध कर देता है। दूसरे आचार्यों का कहना है कि (कार्यकालिक) लग्नशुद्धि हो तो अयोग का नाश हो जाता है। और दिन के आधे के बाद भद्रा और उसके पूर्व के वैधृति व्यतीपातादि दुष्टयोग भी शुभद होते हैं ॥४२॥

विशेष—उक्तं च—

विष्टिरङ्गारकश्चैव व्यतीपातश्च वैधृतिः ।
प्रत्यरिर्जन्मनक्षत्रं मध्याह्नात् परतः शुभम् ॥ इति ॥

भद्रा का समय-निर्णय—

शुक्ले पूर्वार्धेऽष्टमी-पञ्चदश्योर्भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्धे ।
कृष्णेऽन्त्यार्धे स्यात्तृतीया-दशम्योः पूर्वे भागे सप्तमी-शम्भुतिथ्योः ॥

अन्वयः—शुक्ले (पक्षे) अष्टमीपञ्चदश्योः पूर्वार्धे भद्रा (भवति) तथा एकादश्यां चतुर्थ्यां परार्धे (भद्रा भवति)। (एवं) कृष्णे (पक्षे) तृतीया-दशम्योः अन्तरार्धे (तथा) सप्तमी-शम्भुतिथ्योः पूर्वे भागे भद्रा स्यात् ॥४३॥

भा० टी०—शुक्ल पक्ष में अष्टमी और पूर्णमासी तिथि को (अर्थात् जब से ये तिथियाँ लगती हैं तभी से) पूर्वार्ध में भद्रा होती है (अर्थात् पूर्वार्ध तक रहती है) तथा चतुर्थी और एकादशी को उत्तरार्ध में (याने पूर्वार्ध के बाद से तिथि के आखीर तक) भद्रा रहती है। कृष्णपक्ष में तृतीया और दशमी को अंत्यार्ध में और सप्तमी तथा चतुर्दशी को पूर्वार्ध में भद्रा[1] होती है ॥४३॥

१—विशेष—विष्टि करण का उपनाम भद्रा है। प्रत्येक तिथि को दो करण होते हैं, जिनमें चार स्थिर और सात चल करण होते हैं। सात चल करणों के नाम—

ववाह्वयं बालवकौलवाख्यं ततो भवेत्तैतिलनामधेयम् ।
गराभिधानं वणिजं च विष्टिरित्याहुरार्या करणानि सप्त ॥

चार स्थिरकरणों के नाम—

चतुर्दशी या शशिना प्रहीना तस्यादिभागे शकुनी द्वितीये ।
दर्शार्धयोर्नागचतुष्पदे च किंस्तुघ्नमाद्ये प्रतिपद्दले च ॥

भद्रा के मुख-पुच्छ का विचार—

पञ्चद्व्यद्रिकृताष्टरामरसभूयामादिघट्यः शरा
विष्टेरास्यमसद्गजेन्दुरसरामाद्यश्विबाणाब्धिषु ।
यामेष्वन्त्यघटीत्रयं शुभकरं पुच्छं तथा वासरे
विष्टिस्तिथ्यपरार्धजा शुभकरी रात्रौ तु पूर्वार्धजा ॥४४॥

अन्वयः—पञ्चद्व्यद्रिकृताष्टरामरसभूयामादि शराः घट्यः विष्टेः आस्यं असत्। तथा गजेन्दुरसरामाद्यश्विबाणाब्धिषु यामेषु अन्त्यघटीत्रयं विष्टेः पुच्छं शुभकरम्। तिथ्यपरार्धजा विष्टिः वासरे (चेत्) तथा पूर्वार्धजा रात्रौ शुभकरी प्रोक्ता ॥४४॥

भा० टी०—शुक्लपक्ष में भद्रोक्त तिथियों में तिथिक्रम से अर्थात् चतुर्थी-अष्टमी, एकादशी और पूर्णिमा को क्रम से पाचवें, दूसरे, सातवें, चौथे प्रहर के आदि से पाँच घटी और कृष्णपक्ष में तिथिक्रम से याने तृतीया, सप्तमी, दशमी और चतुर्दशी को क्रम से आठवें, तीसरे, छठे और पहले प्रहर के आदि से पाँच घटी भद्रा का मुख होता है। (अर्थात् शुक्लपक्ष में चतुर्थी के पाँचवें प्रहर के आदि से ५ घटी भद्रा का मुख होगा। इसी प्रकार अन्य तिथियों में भी समझना चाहिये।) यह मुख अशुभ होता है। इसी प्रकार शुक्लपक्ष में उक्त तिथि क्रम से सातवें, आठवें, पाँचवें, छठे और तीसरे प्रहर के अंत में तीन घटी एवं कृष्णपक्ष में तिथि-क्रम से सातवें, दूसरे, पाँचवें और चौथे प्रहर के अंत्य में तीन घटी भद्रा का पुच्छ होता है। (अर्थात् चतुर्थी तिथि के ७ वें प्रहर के अंत्य में तीन घटी भद्रा का पुच्छ होता है। इसी प्रकार अन्य तिथियों को समझना चाहिये)। यह पुच्छ शुभकर होता है। तिथि के उत्तरार्ध की (अर्थात् जिन तिथियों के पूर्वार्ध के बाद भद्रा होती है) भद्रा दिन में हो और तिथि के पूर्वार्ध की भद्रा रात्रि में हो तो शुभप्रद होती है। प्रत्येक तिथि में आठ प्रहर होते हैं। अतः तिथि का आठवाँ भाग एक प्रहर का मान होता है ॥४४॥

भद्रा के मुख-पुच्छ-ज्ञानार्थ चक्र—

	शुक्लपक्ष				कृष्णपक्ष			
तिथि	४	८	११	१५	३	७	१०	१४
भद्राकाल	अंत्यार्ध	पूर्वार्ध	अंत्यार्ध	पूर्वार्ध	अंत्यार्ध	पूर्वार्ध	अंत्यार्ध	पूर्वार्ध
प्रहर	५	२	७	४	८	३	६	१
मुखघटी	५	५	५	५	५	५	५	५
प्रहर	८	१	६	३	७	२	५	४
पुच्छघटी	३	३	३	३	३	३	३	३

भद्रा का वास और उसका फल—

कुम्भकर्कद्वये मर्त्ये स्वर्गेऽब्जेऽजात्त्रयेऽलिगे ।
स्त्रीधनुर्जूकनक्रेऽधो भद्रा तत्रैव तत्फलम् ॥ ४५ ॥

अन्वयः—कुम्भकर्कद्वये अब्जे (चन्द्रे) मर्त्ये, अजात्त्रयेऽलिगे (अब्जे) स्वर्गे, स्त्रीधनुर्जूकनक्रे (अब्जे) अधः भद्रा (तिष्ठति) तत्रैव तत्फलम् (स्यात्) ॥४५॥

भा० टी०—कुम्भ, मीन, कर्क, सिंह, इन राशियों के चन्द्रमा में भद्रा मृत्युलोक में; मेष, वृष, मिथुन और वृश्चिक राशि के चन्द्रमा में स्वर्गलोक में और कन्या, धन, तुला और मकर राशि के चन्द्रमा में पाताल लोक में भद्रा का वास रहता है। जिस लोक में भद्रा रहती है उसी लोक में उसका फल होता है ॥४५॥

गुरु-शुक्र के अस्तादि में त्याज्य कर्म—

वाप्याराम-तडाग-कूप-भवनारम्भप्रतिष्ठे व्रता-
रम्भोत्सर्ग-वधूप्रवेशन-महादानानि सोमाष्टके ।
गोदानाग्रयण-प्रपा-प्रथमकोपाकर्म वेदव्रतं
नीलोद्वाहमथातिपन्नशिशुसंस्कारान् सुरस्थापनम् ॥४६॥
दीक्षा-मौञ्जि-विवाह-मुण्डनमपूर्वं देवतीर्थेक्षणं
संन्यासाऽग्निपरिग्रहौ नृपतिसन्दर्शाऽभिषेकौ गमम् ।
चातुर्मास्यसमावृती श्रवणयोर्वेधं परीक्षां त्यजेद्-
वृद्धत्वास्तशिशुत्व इज्यसितयोर्न्यूनाधिमासे तथा ॥ ४७ ॥

अन्वयः—इज्यसितयोः वृद्धत्वास्तशिशुत्वे तथा न्यूनाधिमासे वाप्याराम-तडाग-कूप-भवनारम्भप्रतिष्ठे, व्रतारम्भोत्सर्ग-वधूप्रवेशनमहादानानि, सोमाष्टके, गोदानाग्रयण-प्रपा-प्रथमकोपाकर्म, वेदव्रतम्, नीलोद्वाहं; अथ अतिपन्नशिशुसंस्कारान्, सुरस्थापनम्, दीक्षा-मौञ्जि-विवाह-मुण्डनम्, अपूर्वं देवतीर्थेक्षणम्, संन्यासाग्निपरिग्रहौ, नृपतिसन्दर्शाभिषेकौ, गमम्, चातुर्मास्यसमावृती, श्रवणयोर्वेधं, परीक्षां त्यजेत् ॥४६–४७॥

भा० टी०—जब वृहस्पति शुक्र, वृद्ध, अस्त और बाल हों तथा क्षयमास और अधिक मास में बावली, बगीचा, तालाब, कुआँ (कूप), मकान इनका आरंभ और प्रतिष्ठा, व्रत का आरम्भ और उद्यापन, वधूप्रवेश, महादान, सोमयज्ञ, अष्टका श्राद्ध, गोदान (ब्रह्मचारी का केशान्त संस्कार), नवान्न, जलशाला, प्रथम श्रावणी कर्म, वेदव्रत, नीलवृषोत्सर्ग, अतिपन्न संस्कार (बालकों का जातकर्मादि संस्कार जो समय पर नहीं हुआ है), देव प्रतिष्ठा, गुरु से दीक्षा, यज्ञोपवीत, विवाह, मुण्डन, पहले-पहल किसी देवता या तीर्थ का दर्शन, संन्यास, अग्निहोत्र, राजा का दर्शन, राज्याभिषेक, यात्रा, चार्तुमासयज्ञ, समावर्तन, कर्णवेध और किसी दिव्यान्तरिक्ष वस्तु की परीक्षा नहीं करना चाहिये ॥४६-४७॥

सिंहस्थ गुरु आदि का दोष—

अस्ते वर्ज्यं सिंहनक्रस्थजीवे वर्ज्यं केचिद्वक्रगे चातिचारे ।
गुर्वादित्ये विश्वघस्रेऽपि पक्षे प्रोचुस्तद्वद्दन्तरत्नादिभूषाम् ॥४८॥

अन्वयः—(यत्कार्यं) अस्ते वर्ज्यं (तत्) सिंहनक्रस्थजीवेऽपि वर्ज्यम् प्रोचुः । केचित् (आचार्याः) वक्रगे (तथा) अतिचारे गुर्वादित्ये विश्वघस्रे पक्षेऽपि (वर्ज्यं) तद्वत् दन्तरत्नादिभूषां च वर्ज्यम् प्रोचुः ॥४८॥

भा० टी०—जो कार्य गुरु के अस्त में वर्जित हैं वे सिंह और मकर राशि के गुरु में भी वर्जित हैं। किसी किसी आचार्य के मत से (जो कार्य गुरु के अस्त में वर्जित हैं गुरु के वक्र और अतिचार[1] होने में भी उन कार्यों को नहीं करना चाहिये। गुर्वादित्य[2] (गुरु की राशि में सूर्य हों और सूर्य की राशि में गुरु हों) और १३ दिन के पक्ष में भी उन कार्यों को नहीं करना चाहिये। इसी प्रकार उक्त समयों में हाथी के दाँत का पदार्थ और रत्नयुक्त आभूषण का धारण करना भी निषिद्ध है ॥४८॥

सिंहस्थ गुरु का तीन प्रकार से परिहार—

सिंहे गुरौ सिंहलवे विवाहो नेष्टोऽथ गोदोत्तरतश्च यावत् ।
भागीरथीयाम्यतटं हि दोषो नान्यत्र देशे तपनेऽपि मेषे ॥४९॥

अन्वयः—सिंहे गुरौ सिंहलवे (सति) विवाहः नेष्टः। अथ गोदोत्तरतः भागीरथीयाम्यतटं यावत् दोषः अन्यत्र देशे न (दोषः) मेषे (मेषराशौ) तपने (सूर्ये) सति न दोषः ॥४९॥

भा० टी०—सिंह राशि में सिंह के ही नवमांश में (अर्थात् चार राशि तेरह अंश २० कला के बाद चार राशि १६ अंश ४० कला तक) गुरु हों तो विवाहादि निषिद्ध है। यह एक परिहार हुआ। इसके बाद गोदावरी नदी के उत्तर तट से गंगा के दक्षिण तट तक (अर्थात् गोदावरी और गंगा के बीच के देशों मध्य भारत, मध्यप्रान्त, राजपूताना में) सिंह राशि के गुरु में विवाहादि निषिद्ध है। यह दूसरा परिहार है। और तीसरा परिहार यह है कि मेष राशि के सूर्य हों तो सिंहस्थ गुरु का दोष कहीं नहीं होता है ॥४९॥

सिंहस्थ गुरु के निषेधवाक्यों का निर्णय

मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः ।
गङ्गागोदान्तरं हित्वा शेषांघ्रिषु न दोषकृत् ॥ ५० ॥

१—(अतिशयेन चारः अतिचारः) अर्थात् निश्चित समय पर्यन्त राशि का भोग न करके अग्रिम राशि पर संचार करने को अतिचार कहते हैं।

२—गुर्वादित्य लक्षण—एकराशिगतौ सूर्यजीवौ स्यातां यदा पुनः ।
व्रतबन्धविवाहादिशुभकर्माखिलं त्यजेत् ॥

मेषेऽर्के सन् व्रतोद्वाहो गङ्गागोदान्तरेऽपि च ।
सर्वः सिंहगुरुर्वर्ज्यः कलिङ्गे गौडगुर्जरे ॥ ५१ ॥

अन्वयः—मघादिपञ्चपादेषु गुरुः सर्वत्र निन्दितः। शेषांघ्रिषु गङ्गागोदान्तरं हित्वा दोषकृत् न (भवति)। मेषेऽर्के गङ्गागोदान्तरेऽपि व्रतोद्वाहः सन् (शुभः)। सर्वः सिंहगुरुः कलिङ्गे गौडगुर्जरे वर्ज्यः ॥५०–५१॥

भा० टी०—मघा से पाँच चरण तक (अर्थात् चार चरण मघा का और एक चरण पूर्वाफाल्गुनी का) सिंह के गुरु सभी देशों में निन्दित हैं। शेष पूर्वाफाल्गुनी के ३ चरण और उत्तरा फाल्गुनी के एक चरण में गङ्गा और गोदावरी के मध्य के देशों को छोड़कर अन्य देशों में दोष नहीं है। मेष राशि के सूर्य में गङ्गा गोदावरी के मध्य में भी (सिंहस्थ के गुरु के रहते हुए भी) व्रतबन्ध और विवाह शुभ है। तथा सम्पूर्ण सिंह राशि का गुरु कलिङ्ग देश (राजमहेन्द्री, विजगापट्टम और गंजाम जिले तक), गौड़ (बंगाल से बर्दवान तक) और गुर्जर (गुजरात) में त्याज्य है ॥५०–५१॥

मकर राशि के गुरु का परिहार—

रेवापूर्वे गण्डकीपश्चिमे च शोणस्योदग्दक्षिणे नीच इज्यः ।
वर्ज्यो नायं कौङ्कणे मागधे च गौडे सिन्धौ वर्जनीयः शुभेषु ॥५२॥

अन्वयः—रेवापूर्वे गण्डकीपश्चिमे, शोणस्य उदक्दक्षिणे च नीच इज्यः न वर्ज्यः। अयं (नीच इज्यः) कौङ्कणे, मागधे, गौडे, सिन्धौ च शुभेषु वर्जनीयः ॥५२॥

भा० टी०—रेवा नदी (नर्मदा) के पूर्व, गण्डकी नदी के पश्चिम और शोणभद्र नदी के उत्तर और दक्षिण भाग में नीच राशि (मकर राशि) का गुरु हो तो शुभ क्रियायें करनी चाहिये। यह (नीच राशि का गुरु) कौंकण (कनारा, रत्नागिरि, बम्बई आदि प्रदेश), मगध (विहार का दक्षिण भाग), गौड़ और सिन्धु देश में शुभ कार्य में निषिद्ध है, अर्थात् इन प्रदेशों में नीचस्थ गुरु में शुभ कार्य न करे ॥५२॥

लुप्तसंवत्सर का विचार और अपवाद—

गोजान्त्यकुम्भेतरभेऽतिचारगो नो पूर्वराशिं गुरुरेति वक्रितः ।
तदा विलुप्ताब्द इहातिनिन्दितः शुभेषु रेवा-सुरनिम्नगान्तरे ॥५३॥

अन्वयः—गोजान्त्यकुम्भेतरभे अतिचारगः गुरुः वक्रितः (सन्) पूर्वराशिं नो एति तदा विलुप्ताब्दः (उच्यते) स इह रेवासुरनिम्नगान्तरे शुभेषु अतिनिन्दितः ॥५३॥

भा० टी०—वृष, मेष, मीन, कुम्भ, इन राशियों को छोड़कर इनसे भिन्न राशियों पर गुरु अतिचार होकर जाय तो जब तक वक्र होकर अपनी पूर्वराशि (याने जिस राशि से अतिचार होकर दूसरी राशि पर गया है) पर न आ जावे तब तक लुप्त संवत्सर होता है (अर्थात् यदि ऐसी स्थिति हो तो लुप्त संवत्सर होता है)।

यह लुप्तसंवत्सर[1] रेवा नदी और गंगा नदी के मध्य के देशों में शुभ कार्य में निन्दित है ॥५३॥

वारप्रवृत्ति जानने की विधि—

पादोनरेखापरपूर्वयोजनैः पलैर्युतोनास्तिथयो दिनार्धतः ।
ऊनाधिकास्तद्विवरोद्भवैः पलैरूर्ध्वं तथाधो दिनपप्रवेशनम् ॥५४॥

अन्वयः—रेखापरपूर्वयोजनैः पलैः पादोनः (कार्यः) तैः पलैः तिथयः (पञ्चदशघट्यः) युतोना (कार्या), दिनार्धतः ऊनाधिकाः तदा तद्विवरोद्भवैः पलैः ऊर्ध्वं तथा अधः दिनपप्रवेशनम् स्यात् ॥५४॥

भा० टी०—रेखादेश[2] और अपने देश का जो पूर्वापर अंतर योजनात्मक

१—संहिताकार के मत से वृहस्पति मध्यम गति से जितने काल में एक राशि को भोगता है उतने ही समय का एक संवत्सर होता है। इसी प्रकार यदि स्पष्ट गति से लिया जाय तो भी संवत्सर का समय आवेगा। स्पष्ट गति से गुरु एक राशि के भोग काल के पहले ही अपनी पूर्वराशि का त्याग कर अग्रिम राशि-पर चला जाय तो इसे अतिचार कहते हैं। जैसे—वर्तमान गुरु सिंह राशि संबंधी संवत्सर में पूर्वराशि मिथुन का त्याग कर संवत्सर पूरा होने के पहले ही कन्या राशि पर चला जाय तो इसे गुरु का अतिचार कहते हैं। ऐसी स्थिति में सिंह नामोपलक्षित संवत्सर में ही कन्या संज्ञक संवत्सर की प्रवृत्ति हुई और आगे चलकर गुरु वक्री होकर पुनः सिंह पर आ गया तो जब से कन्या पर गया और पुनः लौटकर सिंह पर आया इतने समय की गणना लुप्तसंवत्सर में होगी। यही समय शुभ कृत्यों में त्याग देना चाहिये, ऐसा मेरा विचार है।—ग. द. पा.।

२—लङ्का उज्जयिनी आदि पुरों पर होता हुआ सूत्र सुमेरु पर जाता है वह जिन २ स्थानों को स्पर्श करे वह रेखा-देश कहलाता है।

अत्रोपपत्तिः—लङ्कायाः याम्योत्तरं रेखादेशसंज्ञकम्। रेखास्वयाम्योत्तरयोरन्तरं नाडीवृत्ते पूर्वापरं घटचादि देशान्तरं भवति। तदानयनार्थमनुपातः—यदि मध्यमभूपरिधियोजनैः ४८०० अहोरात्रवृत्तीयपलानि ३६०० लभ्यते तदा देशान्तर-योजनैः किमिति लब्धं देशान्तरपलानि $= \frac{३६०० \times \text{दे अं यो}}{४८००} = \frac{३ \times \text{दे अं यो}}{४}$

$= \text{दे अं यो} = \frac{\text{दे अं यो}}{४}$ । अथ रेखादेश—रेखादेशीयक्षितिजयोरन्तरमहोरात्र-

वृत्ते पञ्चदश घटिकाः, तदुक्तपरपूर्वदेशान्तरपलैः क्रमेण युतोनं तदा स्वयाम्योऽत्तर-रेखोदयक्षितिजयोरन्तरमेव $= १५ \pm \left(\text{दे अं यो} = \frac{\text{दे अं यो}}{४}\right)$ इदं चेत्स्वदिनार्धादल्पं तदा

स्वक्षितिजाल्लङ्काक्षितिजमूर्ध्वमतस्तदन्तरघटीभिः स्वक्षितिजादूर्ध्वं रेखाक्षितिजोदयः, तथा दिनार्धादधिकं चेत्तदा स्वक्षितिजाल्लङ्काक्षितिजमधस्तदा तदन्तरघटीभिः स्वक्षितिजोदयात्पूर्वमेव लंकाक्षितिजोदयो भवति। लंकाक्षितिजे एव वारप्रवृत्तिसंभवात्। तथा चोक्तं भास्करेण—

'लङ्कानगर्यामुदयाच्चभानोस्तस्यैव वारे प्रथमं बभूव ।
मधोः सितादेर्दिनमासवर्षयुगादिकानां युगपत्प्रवृत्तिः ॥' इत्युपपन्नम् ॥५४॥

अर्थात् रेखादेश से अपना देश पूर्व या पश्चिम में जितने योजन पर हो) उसका चतुर्थांश उसी में घटा देना शेष को पल मानकर पन्द्रह घटी में युत अथवा ऊन करके (अर्थात् रेखा देश से पूर्व में अपना देश हो तो पन्द्रह घटी में जोड़ देना अन्यथा पन्द्रह घटी में घटा देना) जो घटी पल आवे उसे जिस दिन वारप्रवृत्ति देखना है उस दिन के दिनमान के आधे से कम या अधिक हो दोनों का अन्तर करना शेष घटी पल तुल्य काल में यदि दिनार्ध से न्यून है अर्थात् दिनार्ध में ही घट गया हो तो शेष तुल्य में सूर्योदय के बाद और दिनार्ध से अधिक हो तो अन्तर तुल्य काल में सूर्योदय के पहले ही वारप्रवृत्ति होती है ।।५४।।

उदाहरण—जैसे काशी का रेखादेश कुरुक्षेत्र है और उससे (कुरुक्षेत्रसे) काशी ६३ योजन पूर्व में है। इस पूर्वयोजन का चतुर्थांश १५।४५ हुआ। इसे पूर्वोक्त योजन में घटाने से ४७।१५ पलादि बचा, इसे पूर्व योजन होने के कारण पन्द्रह घटी में घटाया तो शेष घट्यादि १४।१२।४५ बचा। यह दिनार्ध १७।२ से अल्प है तो दोनों का अन्तर किया तो २।४७।१५ घट्यादि हुआ तो उक्त दिन सूर्योदय के बाद उक्त घट्यादि (२।४७।१५) पर वारप्रवृत्ति हुई ।

कालहोरेश के जानने की विधि—

वारादेर्घटिका द्विघ्नाः स्वाक्षहृच्छेषवर्जिताः ।
सैकास्तष्टा नगैः कालहोरेशा दिनपात् क्रमात् ।। ५५ ।।

अन्वयः—वारादेर्घटिकाः द्विघ्नाः स्वाक्षहृच्छेषवर्जिताः सैकाः नगैः तष्टाः दिनपात् क्रमात् होरेशाः (स्युः) ।।५५।।

भा० टी०—वारप्रवृत्ति के समय से इष्ट घटी को दूना करके दो जगह रख दे, दूसरे स्थान में ५ से भाग देकर शेष को पहले स्थान में रखे हुए दूने इष्ट घटी

अत्रोपपत्तिः—वारप्रवृत्तेर्गदिता दिनेशात्कालाख्यहोरापतयः क्रमेण ।
सार्धेन नाडीद्वितयेन तष्टः षष्ठश्च षष्ठश्च पुनः पुनः स्यात् ।।

इति वचनेन अहोरात्रे चतुर्विंशतिकालहोरा भवन्ति। अत्रानुपातः—यदि घटिकानां षष्ठ्या चतुर्विंशतिहोरा २४ लभ्यन्ते तदेष्टस्यटिकया किमिति

$$= \frac{२४ \times \text{इष्टघटी}}{६०} = \frac{२ \times \text{इ. घ.}}{५} = \text{इष्टहोरा} = \frac{\text{ग.हो.} + \text{शे}}{५}$$

$$\therefore \text{ग. हो.} = \frac{२ \times \text{इ. घ.} - \text{शे}}{५} ।$$

अथ उपर्युक्तवचनेन एकैकस्यां होरायां होराधिपवारसंख्यान्तरं पञ्च। अतः पुनरन्यानुपातो यद्येकस्यां होरायां होरापतिवारसंख्यान्तरं पञ्च तदा गतहोराभिः किमिति $= \frac{(२ \times \text{इ. घ.} - \text{शे}) \times ५}{५ \times १} = २ \times \text{इ. घ.} - \text{शे}$ लब्धं सैकं तदा वारेशवर्तमानहोरेशयोन्तरम् । वारसंख्यायाः सप्तमितत्वात् सप्तशेषे सति वारेशादिगणनया वर्तमान कालहोरेशज्ञानं स्यादित्युपपन्नम् ।।५५।।

में घटा दे। शेष में एक जोड़कर सात से भाग दे तो शेष तुल्य दिनपति से (जिस दिन कालहोरेश देखना है उससे) क्रम से गिनने से कालहोरेश होता है ॥५५॥

उदाहरण :—जैसे रविवार को वारप्रवृत्ति के बाद ६ घटी पर किसकी होरा होगी यह देखना है तो इष्टघटी ६ को दूना किया तो १२ हुये, इसे दो जगह रखकर एक जगह ५ से भाग दिया तो शेष २ बचा, इसे अन्यत्र स्थापित १२ में घटाया तो शेष १० हुआ। इसमें सात का भाग दिया तो शेष ३ बचा। इसमें १ जोड़ दिया तो ४ हुये। अतः रविवार से गिनने से चौथा बुध का होरा हुआ।

कालहोरा आदि का प्रयोजन—

वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेऽस्य।
कुर्याद्दिक्छूलादि चिन्त्यं क्षणेषु नैवोल्लंघ्यः पारिघश्चापि दण्डः ॥५६॥

अन्वयः—(यत्कार्यं) वारे प्रोक्तं (तत्) तस्य कालहोरासु कार्यं, (यत्) धिष्ण्ये प्रोक्तं (तत् अस्य नक्षत्रस्य) स्वामितिथ्यंशके (मुहूर्ते) कार्यम्। क्षणेषु दिक्शूलादि चिन्त्यम्। (क्षणेषु) पारिघश्चापि दण्डः नैवोल्लंघ्यः ॥५६॥

भा० टी०—जो कार्य वार में करने को कहा गया है वह कार्य उस वारेश के काल होरा में भी कर सकते हैं, जो कार्य नक्षत्र में करने को कहा है वह कार्य उस नक्षत्र के स्वामी के तिथ्यंश (मुहूर्त) में करना चाहिये। मुहूर्त में दिक्शूल आदि का विचार करना चाहिये और परिघदंड (यात्राप्रकरण ३६ श्लोक) का उल्लंघन नहीं करना चाहिये ॥५६॥

मन्वादि और युगादि तिथियाँ—

मन्वाद्यास्त्रितिथौ मधौ तिथिरवी ऊर्जे शुचौ दिक्तिथी
ज्येष्ठेऽन्त्ये च तिथिस्त्विषे नव तपस्यश्वाः सहस्ये शिवाः।
भाद्रेऽग्निश्च सिते त्वमाष्टनभसः कृष्णे युगाद्याः सिते
गोऽग्नी बाहुलराधयोर्मदनदर्शौ भाद्रमाघासिते ॥५७॥

अन्वयः—मधौ त्रितिथी, ऊर्जे तिथिरवी, शुचौ दिक्तिथी, ज्येष्ठे अन्त्ये च तिथिः, इषे नव, तपसि अश्वाः, सहस्ये शिवाः, भाद्रे अग्निः, सिते (पक्षे) नभसः कृष्णे तु अमाष्ट मन्वाद्या भवन्ति। बाहुलराधयोः सिते (पक्षे) गोऽग्नी, भाद्रमाघासिते मदनदर्शौ युगाद्या भवन्ति ॥५७॥

भा० टी०—चैत्र शुक्लपक्ष में तृतीया और पूर्णिमा, कार्तिक शुक्लपक्ष में पूर्णिमा और द्वादशी, आषाढ़ शुक्लपक्ष में दशमी और पूर्णिमा, ज्येष्ठ शुक्लपक्ष में पूर्णिमा, फाल्गुन शुक्लपक्ष में पूर्णिमा, आश्विन शुक्लपक्ष में नवमी, माघ शुक्लपक्ष में सप्तमी, पौष शुक्लपक्ष में एकादशी, भाद्रशुक्लपक्ष की तृतीया और श्रावण कृष्णपक्ष में अमावस्या और अष्टमी, मन्वादि तिथियाँ हैं (अर्थात् इन्हीं तिथियों में मनुओं का आविर्भाव होता है)। तथा कार्तिक, शुक्ल नवमी, वैशाख शुक्ल ३, भाद्रपद कृष्ण त्रयोदशी और माघ कृष्ण अमावास्या ये युगादि तिथियाँ हैं (अर्थात् इन तिथियों को युगारम्भ हुआ है) ॥५७॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ शुभाशुभप्रकरणम् ॥१॥

———

नक्षत्रप्रकरणम्

नक्षत्रों के स्वामी—

नासत्याऽन्तक-वह्नि-धातृ-शशभृद्रुद्राऽदितीज्योरगा
ऋक्षेशाः पितरो भगोऽर्यमरवी त्वष्टाऽऽशुगश्च क्रमात् ।
शक्राऽग्नी खलु मित्र इन्द्रनिर्ऋतिक्षीराणि विश्वे विधि-
र्गोविन्दो वसु-तोयपाऽजचरणाऽहिर्बुध्न्य-पूषाभिधाः ॥ १ ॥

अन्वयः—नासत्यान्तक-वह्नि-धातृ-शशभृद्-रुद्राऽदितीज्योरगाः, पितरः, भगः, अर्यम-रवी, त्वष्टा, आशुगः, शक्राग्नी, मित्रः, इन्द्रनिर्ऋतिक्षीराणि, विश्वे, विधिः, गोविन्दः, वसु-तोयपाऽजचरणाऽहिर्बुध्न्य-पूषाभिधाः क्रमात् ऋक्षेशाः (स्युः) ॥१॥

भा० टी०—अश्विनी से रेवती पर्यन्त क्रम से प्रत्येक नक्षत्र के अश्विनीकुमार, यम, अग्नि, ब्रह्मा, चन्द्रमा, शिव, अदिति, बृहस्पति, सर्प, पितर, भग (सूर्य), अर्यमा (सूर्य), रवि, त्वष्टा (विश्वकर्मा), वायु, शक्राग्नी, मित्र (सूर्य), इन्द्र, निर्ऋति (राक्षस), जल, विश्वेदेव, ब्रह्मा, विष्णु, वसु (अष्टवसु), वरुण, अजचरण (सूर्यविशेष), अहिर्बुध्न्य (सूर्यविशेष), पूषा (सूर्यविशेष) स्वामी हैं ॥ १ ॥

ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र और उनके कृत्य—

उत्तरात्रय-रोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ॥ २ ॥

अन्वयः—उत्तरात्रय-रोहिण्यः, भास्करः ध्रुवं (ध्रुवसंज्ञं) च (पुनः) स्थिरं (स्थिरसंज्ञं भवति) । तत्र (तस्मिन्) स्थिरं (स्थिरकर्म) बीजगहशान्त्यारामादिसिद्धये (भवति) ॥ २ ॥

भा० टी०—तीनों उत्तरा (उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद), रोहिणी ये नक्षत्र और रविवार इनको ध्रुव और स्थिर संज्ञा है। इनमें स्थिर कार्य, गृह-संबंधी कार्य, बीज बोना, शान्तिकर्म और बगीचा आदि लगाना शुभद होता है ॥ २ ॥

चरसंज्ञक नक्षत्र और उनके कृत्य—

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ।
तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥ ३ ॥

अन्वयः—स्वात्यादित्ये, श्रुतेः त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलं (ज्ञेयम्) तस्मिन् गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् (सिध्यति) ॥ ३ ॥

भा० टी०—स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष ये नक्षत्र और सोमवार इनकी चर और चल संज्ञा है। इनमें हाथी आदि पर चढ़ना, बगीचा के लिये यात्रा आदि कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ३ ॥

उग्र संज्ञक नक्षत्र और उनके कृत्य—

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिध्यति ॥ ४ ॥

अन्वयः—पूर्वात्रयं याम्यमघे तथा कुजः उग्रं क्रूरं (भवति)। तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिध्यति ॥ ४ ॥

भा० टी०—तीनों पूर्वा (पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वभाद्रपद), भरणी, मघा इन नक्षत्रों और भौमवार की उग्र और क्रूर संज्ञा है। इसमें घात, अग्नि, शठता, विष और शस्त्रादि कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ४ ॥

मिश्रसंज्ञक नक्षत्र और उनके कृत्य—

विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।
तत्राऽग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्धयति ॥ ५ ॥

अन्वयः—विशाखाग्नेयभे सौम्यः मिश्रं साधारणं स्मृतम्। तत्र अग्निकार्य मिश्रं च (कार्यं) वृषोत्सर्गादि सिध्यति ॥ ५ ॥

भा० टी०—विशाखा, कृत्तिका और बुधवार इनकी मिश्र और साधारण संज्ञा है। इनमें अग्निकार्य, मिलावट का कार्य और वृषोत्सर्गादि सिद्ध होते हैं ॥५॥

लघुसंज्ञक नक्षत्र और उनके कृत्य—

हस्ताऽश्वि-पुष्याऽभिजितः क्षिप्रं लघु गुरुस्तथा ।
तस्मिन् पण्यरतिज्ञानं भूषाशिल्प-कलादिकम् ॥ ६ ॥

अन्वयः—हस्ताश्विपुष्याभिजितः तथा गुरुः क्षिप्रं लघु (संज्ञकं) स्यात्। तस्मिन् पण्यरतिज्ञानं भूषाशिल्पकलादिकम् (सिध्यति) ॥ ६ ॥

भा० टी०—हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् और गुरुवार इनकी क्षिप्र और लघु संज्ञा है। इसमें पण्य (किसी चीज का भाव), रति, ज्ञान, आभूषण, शिल्प, कला आदि सिद्ध होते हैं ॥ ६ ॥

मृदुसंज्ञक नक्षत्र और उनके कृत्य—

मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदु मैत्रं भृगुस्तथा ।
तत्र गीताम्बरक्रीडा मित्रकार्यं विभूषणम् ॥ ७ ॥

भा० टी०—ब्राह्मण की आज्ञा से तथा विवाह में और राजा की प्रसन्नता से दिया हुआ वस्त्र निन्दित नक्षत्र वार तिथि आदि होने पर भी धारण करना चाहिये । यह पंडितों ने कहा है ॥१२॥

वृक्ष-रोपण, राज-दर्शन, मद्य और पशु क्रय-विक्रय का मुहूर्त—

राधामूलमृदुध्रुवर्क्षवरुणक्षिप्रैर्लतापादपा-
रोपोऽथो नृपदर्शनं ध्रुवमृदुक्षिप्रश्रवोवासवैः ।
तीक्ष्णोग्राम्बुपभेषु मद्यमुदितं क्षिप्रान्त्यवह्नीन्द्रभा-
दित्येन्द्राम्बुपवासवेषु हि गवां शस्तः क्रयो विक्रयः ॥ १३ ॥

अन्वयः—राधामूल मृदुर्क्षवरुणक्षिप्रैः लतापादपारोपः (शुभः), अथ ध्रुव-मृदुक्षिप्रश्रवोवासवैः नृपदर्शनं (शुभम्), तीक्ष्णोग्राम्बुपभेषु मद्यंउदि तम्, क्षिप्रा-न्त्यवह्नीन्द्रभादित्येन्द्राम्बुपवासवेषु हि गवां क्रयो विक्रयः शस्तः (स्यात्) ॥१३॥

भा० टी०—विशाखा, मूल, मृदु संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, शतभिष और क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्रों में लता, वृक्ष इनका लगाना शुभद होता है। ध्रुवसंज्ञक, मृदुसंज्ञक, क्षिप्र-संज्ञक, श्रवण और धनिष्ठा में राजा का दर्शन करना शुभद होता है। तीक्ष्ण-संज्ञक, उग्रसंज्ञक, शतभिष इन नक्षत्रों में मद्य (शराब) बनाना या पीना शुभद होना है । क्षिप्रसंज्ञक, रेवती, विशाखा, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, शतभिष और धनिष्ठा इन नक्षत्रों में गौओं का खरीदया और बेचना शुभद होता है ॥१३॥

पशुओं की रक्षा आदि का मुहूर्त—

लग्ने शुभे चाष्टमशुद्धिसंयुते रक्षा पशूनां निजयोनिभे चरे ।
रिक्ताऽष्टमी-दर्श-कुज-श्रवो ध्रुवत्वाष्ट्रेषु यानं स्थितिवेशनं न सत् ॥१४॥

अन्वयः—निजयोनिभे चरे अष्टमशुद्धिसंयुते शुभे लग्ने पशूनां रक्षा (शुभा स्यात्) । रिक्ताऽष्टमीदर्शकुजश्रवो ध्रुवत्वाष्ट्रेषु (पशूनां यानं स्थितिवेशनं न सत् (स्यात्) ॥१४॥

भा० टी०—निज योनि (विवाह प्रकरणोक्त श्लो० २५-२६) तथा चर नक्षत्र में जिस लग्न से अष्टम स्थान शुद्ध हो (अर्थात् आठवें स्थान में कोई शुभ ग्रह या पापग्रह न हों) ऐसे शुभ लग्न में (अर्थात् जिसका स्वामी शुभ ग्रह हो ऐसे लग्न में) पशुओं की रक्षा करना शुभद है, रिक्ता (४, ९, १४) तिथि, अष्टमी तिथि, अमावस्या तिथि, मंगलवार, श्रवण, ध्रुव संज्ञक और चित्रा नक्षत्र में पशुओं को गोशाला से निकालना, गोशाला में रखना और प्रवेश कराना शुभद नहीं होता है ॥१४॥

औषध-सेवन और कपड़ा सीने का मुहूर्त—

भैषज्यं सल्लघुमृदुचरे मूलभे द्व्यङ्गलग्ने
शुक्रेन्द्विज्ये विदि च दिवसे चापि तेषां रवेश्च ।
शुद्धे रिष्फद्युनमृतिगृहे सत्तिथौ नो जनेर्भे
सच्चीकर्माऽप्यदिति-वसुभ-त्वाष्ट्र-मित्राश्वि-पुष्ये ॥ १५ ॥

अन्वयः—लघुमृदुचरे, मूलभे, रिष्फद्युनमृतिगृहे शुद्धे, द्व्यङ्गलग्ने शुक्रेन्द्विज्ये विदि च (सत्सु), तेषां (शुक्रेन्द्विज्यानां) रवेश्चापि दिवसे, सत्तिथौ, भैषज्यं सत् (स्यात्) । जनेर्भे नो सत्। अदितिवसुभत्वाष्ट्रमित्राश्विपुष्ये सूचीकर्मापि सत् स्यात् ॥१५॥

भा० टी०—लघु, मृदु, चर संज्ञक तथा मूल नक्षत्र में लग्न से द्वादश, सप्तम और अष्टम शुद्ध हों ऐसे द्विस्वभाव लग्न में शुक्र, चन्द्रमा, गुरु और बुध हों तथा इन्हीं लोगों के दिन में तथा रविवार को शुभ तिथि (रिक्ता को छोड़कर) में औषध खाना शुभद होता है। पुनर्वसु, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, अश्विनी, पुष्य में सिलाई का काम सीखना शुभ होता है ॥१५॥

खरीदने और बेचने का मुहूर्त—

क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टो विक्रयर्क्षे क्रयोऽपि न ।
पौष्णाम्बुपाश्विनीवातश्रवश्चित्राः क्रये शुभाः ॥ १६ ॥

अन्वयः—क्रयर्क्षे विक्रयो नेष्टः। विक्रयर्क्षे क्रयः अपि न (सत्) पौष्णाम्बुपाश्विनी वातश्रवश्चित्रा क्रये शुभाः (स्युः) ॥१६॥

भा० टी०—क्रय[1] (खरीदना) के नक्षत्र में विक्रय करना (बेचना) भी शुभद नहीं होता है। रेवती, शतभिष, अश्विनी, स्वाती, श्रवण, चित्रा ये नक्षत्र खरीदने में शुभद होते हैं ॥१६॥

१—शङ्का—विक्रय (बेचना) मूल्य लेकर वस्तु को देना इसे विक्रय कहते हैं और मूल्य को देकर किसी वस्तु को लेने को क्रय कहते हैं। जिस समय एक खरीदेगा उसी समय दूसरा बेचेगा तो क्रय विक्रय के नक्षत्रों के भिन्न भिन्न होने से एक ही समय में दोनों मुहूर्त्त कैसे हो सकते हैं ?

उत्तर—जब बेचनेवाले को मुहूर्त्त प्राप्त हो उस समय वह खरीदनेवाले की प्रिय वस्तु को अपने मकान से अलग रख दे, इसे विक्रय कहते हैं और जब खरीदनेवाले को मुहूर्त प्राप्त हो उस समय खरीदनेवाला अपनी इष्ट वस्तु (जिसे बेचनेवाले ने अलग कर दिया है) का मूल्य बेचनेवाले को देकर खरीद ले, इसे क्रय कहते हैं। इस प्रकार से बेचने और खरीदने से दोनों के मुहूर्त्त की संगति लग जाती है अथवा एक ही दिन में नक्षत्रों के तिथ्यंश में (जो कि विवाह प्रकरण श्लो० ५२ में कहा गया है) भी करने से दोनों की संगति हो जायगी ।

बेचने और दूकान खोलने का मुहूर्त्त—

पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे केन्द्रत्रिकोणे शुभैः
षट्त्र्यायेष्वशुभैर्विना घटतनुं सन्विक्रयः सत्तिथौ ।
रिक्ताभौमघटान् विना च विपणिर्मित्रध्रुवक्षिप्रभै-
र्लग्ने चन्द्रसिते व्ययाष्टरहितैः पापैः शुभैर्द्व्यायखे ॥ १७ ॥

अन्वयः—पूर्वाद्वीशकृशानुसार्पयमभे केन्द्रत्रिकोणे शुभैः षट्त्र्यायेषु अशुभैः, घटतनुं विना सत्तिथौ विक्रयः सत् स्यात्, रिक्ताभौमघटान् विना च मित्रध्रुव-क्षिप्रभैः (नक्षत्रे) लग्ने चन्द्रसिते, व्ययाष्टरहितैः पापैः, शुभैः द्व्यायखे (स्थितैः) विपणिः (शुभा स्यात्) ॥१७॥

भा० टी०—तीनों पूर्वा (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़-पूर्वाभाद्रपद), विशाखा, कृत्तिका, श्लेषा, भरणी इन नक्षत्रों में और जिस लग्न से केन्द्र (१।४।७।१० स्थानों में), त्रिकोण (५-९ स्थानों में) शुभ ग्रह हों और छठे, तीसरे, ग्यारहवें स्थान में पापग्रह हों ऐसे लग्न में कुम्भ लग्न को छोड़कर शुभ तिथि, वार और लग्नों में बेचना शुभद होता है। रिक्ता (४।९।१४) तिथि, भौमवार और कुम्भ लग्न को छोड़कर शेष तिथि, वार और लग्नों में मित्र, ध्रुव और क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में तथा जिस लग्न में चन्द्रमा और शुक्र हों तथा लग्न से शुभग्रह दूसरे, ग्यारहवें और दशम में हों, पापग्रह बारहवें और आठवें स्थान को छोड़कर शेष स्थानों में हों तो दूकान करना शुभद होता है ॥१७॥

हाथी और घोड़े के कृत्यों का मुहूर्त्त—

क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येष्वरिक्तारदिने प्रशस्तम् ।
स्याद्वाजिकृत्यं त्वथ हस्तिकार्यं कुर्यान्मृदुक्षिप्रचरेषु विद्वान् ॥१८॥

अन्वयः—क्षिप्रान्त्यवस्विन्दुमरुज्जलेशादित्येषु अरिक्तारदिने वाजिकृत्यं प्रशस्तं स्यात्। अथ मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु विद्वान् हस्तिकार्यं कुर्यात् ॥१८॥

भा० टी०—क्षिप्र संज्ञक, रेवती, धनिष्ठा, मृगशिरा, स्वाती, पूर्वाषाढ़, आर्द्रा, पुनर्वसु इन नक्षत्रों में रिक्ता (४।९।१४) तिथि, भौमवार इसे छोड़कर शेष तिथि-वारों में घोड़े का कृत्य (घोड़े पर चढ़ना, उसे फेरना आदि) करना शुभद होता है, और मृदु संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक और चर संज्ञक नक्षत्रों में विद्वान् हाथी के कार्यों को करे ॥१८॥

आभूषण और शस्त्र बनवाने के मुहूर्त्त—

स्याद्भूषाघटनं त्रिपुष्करचरक्षिप्रध्रुवे रत्नयुक्
तत्तीक्ष्णोग्रविहीनभे रविकुजे मेषालिसिंहे तनौ ।

तन्मुक्तासहितं चरध्रुवमृदुक्षिप्रे शुभे सत्तनौ
तीक्ष्णोग्राश्विमृगे द्विदैवदहने शस्त्रं शुभं घट्टितम् ॥ १९ ॥

अन्वयः—त्रिपुष्करचरक्षिप्रध्रुवे भूषाघटनं सत् स्यात् । तीक्ष्णोग्रविहीनभे रविकुजे मेषालिसिंहे तनौ तत् रत्नयुक् (विधेयम्), चरध्रुवमृदुक्षिप्रे शुभे (वारे) सतनौ तन्मुक्तासहितं सत् स्यात्, तीक्ष्णोग्राश्विमृगे द्विदैवदहने शस्त्रं घट्टितं शुभं स्यात् ॥१९॥

भा० टी०—त्रिपुष्कर योग में (नक्षत्रप्रकरणोक्त ५० श्लो०), चर संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक और ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में आभूषण का गढ़ाना शुभद होता है । तीक्ष्ण संज्ञक, उग्र संज्ञक नक्षत्रों को छोड़कर शेष नक्षत्रों में, रविवार और भौमवार को तथा मेष, वृश्चिक और सिंह लग्नों में उसमें रत्न जड़ाना शुभद होता है । चर, मृदु और क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में तथा शुभ दिन में और शुभ लग्न में उसमें मोती जड़वाना चाहिये । तीक्ष्ण संज्ञक, उग्र संज्ञक, अश्विनी, मृगशिरा, विशाखा और कृत्तिका इन नक्षत्रों में हथियार गढ़ाना शुभद होता है ॥१९॥

मुद्रापातन और वस्त्रक्षालन का मुहूर्त—

मुद्राणां पातनं सद्ध्रुवमृदुचरभक्षिप्रभैर्वीन्दुसौरे
घस्रे पूर्णाजयाख्ये न च गुरुभृगुजास्ते विलग्ने शुभैः स्यात् ।
वस्त्राणां क्षालनं सद्वसुहयदिनकृत्पञ्चकादित्यपुष्ये
नो रिक्तापर्वषष्ठीपितृदिनरविजज्ञेषु कार्यं कदापि ॥ २० ॥

अन्वयः—ध्रुवमृदुचरभक्षिप्रभैः वीन्दुसौरे घस्रे, पूर्णाजयाख्ये तिथौ गुरुभृगुजास्ते च न, शुभैः विलग्ने, मुद्राणां पातनं सत् स्यात् । वसुहयदिनकृत्पंचकादित्यपुष्ये, वस्त्राणां क्षालनं सत् स्यात् । रिक्तापर्वषष्ठीपितृदिनरविजज्ञेषु (वस्त्राणां क्षालनं) कदापि नो कार्यम् ॥२०॥

भा० टी०—ध्रुव, मृदु, चर और क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में, चन्द्र और शनि वारों को छोड़कर शेष वारों में, पूर्णा और जया तिथियों में, गुरु और शुक्र अस्त न हों ऐसे समय में मुद्रा (रुपया) ढालना शुभद होता है । धनिष्ठा, अश्विनी, हस्त से पाँच (हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा), पुनर्वसु, पुष्य इन नक्षत्रों में कपड़ों का धुलवाना शुभद होता है । रिक्ता, पर्वदिन, षष्ठी, माता-पिता के क्षयदिन में तथा शनि और बुध वार को वस्त्रों को कभी भी नहीं धुलाना चाहिये ॥२०॥

खड्गादि शस्त्रों के धारण और शय्या आदि के भोग का मुहूर्त—

सन्धार्याः कुन्त-वर्मेष्वसन-शर-कृपाणाऽसि-पुत्र्यो विरिक्ते
शुक्रेज्यार्केऽह्नि मैत्र-ध्रुव-लघुसहितादित्यशाक्रद्विदैवे ।
स्युर्लग्नेऽपि स्थिराख्ये शशिनि च शुभदृष्टे शुभैः केन्द्रगैः स्याद्-
भोगः शय्यासनादेर्ध्रुव-मृदु-लघु-हर्यन्तकादित्य इष्टः ॥२१॥

अन्वयः—विरिक्ते तिथौ, शुक्रेज्यार्केऽह्नि, मैत्रध्रुवलघुसहितादित्यशाक्र-द्विदैवे, स्थिराख्ये लग्नेऽपि, शशिनि च शुभदृष्टे, शुभैः केन्द्रगैः (एवम्भूते लग्ने) कुन्त-वर्म्मेष्वसन-शर-कृपाणाऽसिपुत्र्यः सन्ध्यार्याः स्युः। ध्रुवमृदुलघुहर्यन्तकादित्ये शय्यासनादेः भोगः इष्टः स्यात् ॥२१॥

भा० टी०—रिक्ता से भिन्न तिथि में शुक्र, गुरु और रविवार को मित्र, ध्रुव, लघु संज्ञक के सहित पुनर्वसु, ज्येष्ठा और विशाखा नक्षत्रों में, स्थिर लग्न में चन्द्रमा को शुभ ग्रह देखते हों, केन्द्र में शुभ ग्रह हों, ऐसे लग्न में भाला, कवच, धनुप, वाण, तलवार और छुरी धारण करना चाहिये। ध्रुव संज्ञक, मृदु संज्ञक, लघु संज्ञक, श्रवण, भरणी और पुनर्वसु नक्षत्र में शय्या (चारपाई), आसन आदि का उपभोग करना शुभद होता है॥२१॥

अन्ध-मन्दादि नक्षत्र—

अन्धाक्षं वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं
मन्दाक्षं रविविश्वमित्रजलपाश्लेषाश्विचान्द्रं भवेत्।
मध्याक्षं शिवपित्रजैकचरणत्वाष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं
स्वक्षं स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम् ॥ २२ ॥

अन्वयः—वसुपुष्यधातृजलभद्वीशार्यमान्त्याभिधं अन्धाक्षं भवेत्। रविविश्व-मित्रजलपाश्लेषाश्विचान्द्रं मन्दाक्षं भवेत्। शिवपित्रजैकचरणत्वाष्ट्रेन्द्रविध्यन्तकं मध्याक्षं भवेत्। स्वात्यदितिश्रवोदहनभाहिर्बुध्न्यरक्षोभगम् स्वक्षं भवेत् ॥२२॥

भा० टी०—धनिष्ठा, पुष्य, रोहिणी, पूर्वाषाढ़, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी और रेवती, ये अन्धलोचन हैं। हस्त, उत्तराषाढ़, अनुराधा, शतभिष, श्लेषा, अश्विनी और मृगशिरा ये मन्दलोचन हैं। आर्द्रा, मघा, पूर्वाभाद्रपद, चित्रा, ज्यष्ठा, अभिजित् और भरणी ये मध्यलोचन संज्ञक हैं। स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपद, मूल और पूर्वाफाल्गुनी ये नक्षत्र सुलोचन हैं ॥२२॥

अन्धादि नक्षत्रों का विशेष फल—

विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नतः।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्याप्ती न सुलोचने ॥ २३ ॥

अन्वयः—विनष्टार्थस्य अन्धे शीघ्रं लाभः स्यात्, मन्दे प्रयत्नतः (लाभः स्यात्), मध्ये दूरे श्रवणं स्यात्, सुलोचने श्रुत्याप्ती न भवेताम् ॥२३॥

भा० टी०—यदि अन्धलोचन नक्षत्रों में द्रव्य नष्ट (अर्थात् चोरी गई हुई या खोई हुई वस्तु) हो जाय तो शीघ्र लाभ हो जाता है, मन्दलोचन में नष्ट हो जाय तो प्रयत्न करने से लाभ होता है, मध्याक्ष में नष्ट हो तो दूर से (कुछ दिनों के बाद) सुनाई देता है और सुलोचन में नष्ट हो जाय तो न मिलता है और न सुनाई देता है ॥२३॥

धन के प्रयोग में निषिद्ध नक्षत्र—

तीक्ष्णमिश्रध्रुवोग्रैर्यद् द्रव्यं दत्तं निवेशितम् ।
प्रयुक्तं च विनष्टं च विष्टयां पाते च नाप्यते ॥ २४ ॥

अन्वयः—तीक्ष्णमिश्रध्रुवोग्रैः विष्ट्यां पाते च यद्द्रव्य दत्तं निवेशितम्, प्रयुक्तञ्च, विनष्टं च न आप्यते ॥२४॥

भा० टी०—तीक्ष्ण संज्ञक, मिश्र संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, उग्र संज्ञक नक्षत्रों में तथा भद्रा में और व्यतीपात में जो द्रव्य किसी को दिया जाता है, पृथ्वी में गाड़ दिया जाता है, व्यवहार में लगाया जाता है और नष्ट हो जाता है वह नहीं मिलता है ॥२४॥

जलाशय खोदने और नाच सीखने का मुहूर्त—

मित्रार्कध्रुववासवाम्बुपमघातोयान्त्यपुष्येन्दुभिः
पापैर्हीनबलैस्तनौ सुरगुरौ ज्ञे वा भृगौ खे विधौ ।
आप्ये सर्वजलाशयस्य खननं व्यम्भोमघैः सेन्द्रभै-
स्तैर्नृत्यं हिबुके शुभैस्तनुगृहे ज्ञऽब्जे ज्ञराशौ शुभम् ॥ २५ ॥

अन्वयः—मित्रार्कध्रुववासवाम्बुपमघातोयान्त्यपुष्येन्दुभिः, पापैः हीनबलैः तनौ सुरगुरौ वा ज्ञे, भृगौ खे, विधौ आप्ये (सति) सर्वजलाशयस्य खननं शुभम् । व्यम्भोमघैः सेन्द्रभैः तैः (पूर्वोक्तैः नक्षत्रैः) शुभैः (शुभग्रहैः) हिबुके, ज्ञे तनुगृहे, अब्जे ज्ञराशौ नृत्यं शुभं स्यात् ॥२५॥

भा० टी०—अनुराधा, हस्त, ध्रुव संज्ञक, धनिष्ठा, शतभिष, मघा, पूर्वाषाढ़, रेवती, पुष्य और मृगशिरा इन नक्षत्रों में, पापग्रह निर्बल हों, लग्न में वृहस्पति या बुध हों, शुक्र (लग्न से) दशम में हो और चन्द्रमा जलचर राशि में हों ऐसे समय में सभी जलाशयों (कूप-तालाब आदि) का खनन आरंभ करना शुभद होता है। पूर्वोक्त नक्षत्रों में से शतभिष और मघा को छोड़कर तथा ज्येष्ठा के साथ शेष के सभी नक्षत्रों में शुभ ग्रह (लग्न से) चौथे स्थान में हों, लग्न में वुध हों और चन्द्रमा बुध की राशि में हों तो नाच सीखना शुभद होता है ॥२५॥

नौकरी करने का मुहूर्त्त

क्षिप्रे मैत्रे वित्सितार्केज्यवारे सौम्ये लग्नेऽर्के कुजे वा खलाभे ।
योनेर्मैत्र्यां राशिपोश्चापि मैत्र्यां सेवा कार्या स्वामिनः सेवकेन ॥२६॥

अन्वयः—क्षिप्रे मैत्रे वित्सितार्केज्यवारे, सौम्ये लग्ने, अर्के कुजे वा खलाभे योनेर्मैत्र्यां राशिपोश्चापि मैत्र्यां (सत्यां) स्वामिनः सेवकेन सेवा कार्या ॥२६॥

भा० टी०—क्षिप्र संज्ञक और मैत्र संज्ञक नक्षत्रों में, बुधवार, शुक्रवार, रवि-बार और गुरुवार को शुभग्रह लग्न में हों, सूर्य या मंगल दशम या एकादश में हों,

स्वामी और सेवक की योनिमैत्री और राशिमैत्री (विवाह-प्रकरणोक्त रीति से) बनती हों तो स्वामी सेवक से सेवा करावे ।।२६।।

द्रव्य-प्रयोग और ऋण लेने का मुहूर्त्त—

स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे चरे
लग्ने धर्मसुताष्टशुद्धिसहिते द्रव्यप्रयोगः शुभः ।
नारे ग्राह्यमृणं तु संक्रमदिने वृद्धौ करेऽर्केऽह्नि यत्
तद्वंशेषु भवेदृणं न च बुधे देयं कदाचिद्धनम् ।। २७ ।।

अन्वयः—स्वात्यादित्यमृदुद्विदैवगुरुभे कर्णत्रयाश्वे धर्मसुताष्ट शुद्धिसहिते चरे लग्ने द्रव्यप्रयोगः शुभः स्यात् । आरे, संक्रमदिने, वृद्धौ करेऽर्केऽह्नि ऋणं न ग्राह्यं, यत् तद्वंशेषु ऋणं भवेत्, च (पुनः) बुधे कदाचिद्धनं न देयम् ।।२७।।

भा० टी०—स्वाती, पुनर्वसु, मृदु संज्ञक, विशाखा, पुष्य, श्रवण से तीन (श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) और अश्विनी नक्षत्रों में जिस चर लग्न से नवम, पंचम और अष्टम स्थान शुद्ध हो (अर्थात् इन स्थानों में कोई शुभ पाप न हों) ऐसे लग्न में द्रव्य को व्यवहार में लगाना चाहिये। भौमवार और जिस दिन संक्रान्ति हो, वृद्धि-योग में, रविवार के दिन हस्त नक्षत्र हो उस दिन कर्जा नहीं लेना चाहिये। यदि कोई लेता है तो वह कर्ज उसके वंश-वंशान्तर में चला जाता है और बुधवार के दिन किसी को धन नहीं देना चाहिये ।।२७।।

हल चलाने का मुहूर्त्त—

मूलद्वीशमघाचरध्रुवमृदुक्षिप्रैर्विनार्कं शनिं
पापैर्हीनबलैर्विधौ जललवे शुक्रे विधौ मांसले ।
लग्ने देवगुरौ हलप्रवहणं शस्तं, न सिंहे घटे
कर्कार्जैणधटे तनौ क्षयकरं रिक्तासु षष्ठ्यां तथा ।। २८ ।।

अन्वयः—मूलद्वीशमघाचरध्रुवमृदुक्षिप्रैः (नक्षत्रैः) अर्कं शनिं विना पापैः हीनबलैः, विधौ जललवे, शुक्रे, विधौ मांसले, देवगुरौ लग्ने हलप्रवहणं शस्तम्। सिंहे, घटे कर्कार्जैणधटे तनौ, रिक्तासु तथा षष्ठ्यां क्षयकरं (भवति) ।।२८।।

भा० टी०—मूल, विशाखा, मघा, चर संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, मृदु संज्ञक और क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में और रवि, शनि वारों को छोड़कर शेष वारों में, पापग्रह निर्बल हों, चन्द्रमा जलचर राशि के नवांश में हो, शुक्र और चन्द्रमा बलवान् हों, बृहस्पति लग्न में हों तो हल चलाना श्रेष्ठ होता है। सिंह, कुम्भ, कर्क, मेष और तुला लग्न में तथा रिक्ता और षष्ठी तिथि में हल चलाने से खेती का नाश होता है ।।२८।।

बीज बोने का मुहूर्त्त और नक्षत्र-शुद्धि-चक्र—

एतेषु श्रुतिवारुणादितिविशाखोडूनि भौमं विना
बीजोप्तिर्गदिता शुभा, त्वगुभतोऽष्टाग्नीन्दुरामेन्दवः ।

रामेन्द्वग्नियुगान्यसच्छुभकराण्युप्तौ हलेऽर्कोज्झिता-
द्भाद्रामाष्टनवाष्टभानि मुनिभिः प्रोक्तान्यसत्सन्ति च ॥ २९ ॥

अन्वयः——एतेषु (पूर्वोक्तेषु हलप्रवहणोक्तभेषु) श्रुतिवारुणादितिविशाखोडूनि भौमं विना बीजोप्तिः शुभा गदिता। तु (पुनः) उप्तौ (बीजोप्तौ) अगुभतः (राहुभतः) अष्टाग्नीन्दुरामेन्दव-रामेन्द्वग्नियुगानि (भानि) असत् शुभकराणि प्रोक्तानि। हले (हलप्रवहणे) अर्कोज्झिताद्भात् रामाष्टनवाष्टभानि मुनिभिः असत्सन्ति प्रोक्तानि ॥२९॥

भा० टी०——हल चलाने के नक्षत्रों में से श्रवण, शतभिष, पुनर्वसु, विशाखा को त्याग कर शेष नक्षत्रों में और भौमवार को छोड़कर शेप वारों में बीज वोना शुभद होता है। जिस नक्षत्र में बीज वोना हो वह यदि राहु के नक्षत्र से आठ नक्षत्र के अन्दर हो तो अशुभ, इसके बाद तीन नक्षत्र के अन्दर हो तो शुभद, इसके बाद एक नक्षत्र तक अशुभ, इसके बाद तीन नक्षत्र तक शुभद फिर एक नक्षत्र तक अशुभ, फिर तीन नक्षत्र तक शुभद फिर एक नक्षत्र तक अशुभ, फिर तीन नक्षत्र तक शुभद और इसके बाद ४ चार नक्षत्र तक अशुभ होता है। इसी प्रकार हल चलाने के नक्षत्र को सूर्य के त्यागे हुए नक्षत्र से तीन नक्षत्र तक शुभद, इसके बाद आठ नक्षत्र तक अशुभ, इसके बाद नव नक्षत्र तक शुभद और इसके बाद आठ नक्षत्र तक अशुभ होता है ॥२९॥

वमन-विरेचन आदि और धर्मक्रिया का मुहूर्त्त——

त्वाष्ट्रान्मित्रकभाद्द्वयेऽम्बुपलघुश्रोत्रे शिरामोक्षणं
भौमार्केज्यदिने, विरेकवमनाद्यं स्याद्बुधार्की विना ।
मित्रक्षिप्रचरध्रुवे रविशुभाहे लग्नवर्गे विदो
जीवस्यापि तनौ गुरौ निगदिता धर्मक्रिया तद्बले ॥ ३० ॥

अन्वयः——त्वाष्ट्रान्मित्रकभाद्द्वये अम्बुपलघुश्रोत्रे भौमार्केज्यदिने शिरामोक्षणं सत् स्यात्। बुधार्की विना (पूर्वोक्तनक्षत्रेषु) विरेकवमनाद्यं सत् स्यात्। मित्रक्षिप्रचरध्रुवे, रविशुभाहे विदः जीवस्य अपि लग्नवर्गे, गुरौ तनौ तद्बले धर्मक्रिया शुभा निगदिता ॥३०॥

भा० टी०——चित्रा से दो (चित्रा-स्वाती), अनुराधा से दो (अनुराधा-ज्येष्ठा), रोहिणी से दो (रोहिणी-मृगशिरा), शतभिषा, लघुसंज्ञक और श्रवण इन नक्षत्रों में, भौम, रवि और गुरु इन वारों में शिरामोक्षण (नस से रक्त निकलवाना या फस्त खुलवाना) शुभद होता है। बुधवार और शनिवार को छोड़कर शेष वारों में तथा पूर्वोक्त नक्षत्रों में विरेक (जलाब-दस्त कराना) और वमन (क) कराना शुभद होता है। मित्र संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, चर संज्ञक, ध्रुव संज्ञक

नक्षत्रों में, रवि और शुभ ग्रह के वारों में, बुध और गुरु के षड्वर्ग से युक्त लग्न में और लग्न में गुरु हों तथा बलवान् हों तो धार्मिक क्रिया करनी चाहिये ॥३०॥

अन्नों के काटने का मुहूर्त्त—

तीक्ष्णाजपादकरवह्निवसुश्रुतीन्दु-
स्वातीमघोत्तरजलान्तकतक्षपुष्ये ।
मन्दाररिक्तरहिते दिवसेऽतिशस्ता
धान्यच्छिदा निगदिता स्थिरभे विलग्ने ॥ ३१ ॥

अन्वयः—तीक्ष्णाजपादकरवह्निवसुश्रुतीन्दुस्वातीमघोत्तरजलान्तकतक्षपुष्ये, मन्दाररिक्तरहिते दिवसे स्थिरभे विलग्ने धान्यच्छिदा अतिशस्ता निगदिता ॥३१॥

भा० टी०—तीक्ष्णसंज्ञक, पूर्वाभाद्रपद, हस्त, कृत्तिका, धनिष्ठा, श्रवण, मृगशिरा, स्वाती, मघा, तीनों उत्तरा (उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद), पूर्वाषाढ़, भरणी, चित्रा और पुष्य इन नक्षत्रों में शनिवार, भौमवार और रिक्ता तिथि छोड़कर शेष वार और तिथियों और स्थिर लग्न में धान्य को (किसी अन्न को खेत से) काटना शुभद होता है ॥३१॥

कणमर्दन (धान को दाँने) का, धान्यरोपण का मुहूर्त्त—

भाग्यार्यमश्रुतिमघेन्द्रविधातृमूल-
मैत्रान्त्यभेषु कथितं कणमर्दनं सत् ।
द्वीशाजपान्निर्ऋतिधातृशतार्यमक्ष
सस्यस्य रोपणमिहार्किकुजौ विना सत् ॥ ३२ ॥

अन्वयः—भाग्यार्यमश्रुतिमघेन्द्रविधातृमूलमैत्रान्त्यभेषु कणमर्दनं सत् कथितम्। द्वीशाजपान्निर्ऋतिधातृशतार्यमर्क्षे, आर्किकुजौ विना इह सस्यस्य रोपणं सत् स्यात् ॥३२॥

भा० टी०—पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, श्रवण, मघा, ज्येष्ठा, रोहिणी, मूल, अनुराधा और रेवती इन नक्षत्रों में कणमर्दन (दँवरी) कराना शुभद होता है। विशाखा, पूर्वाभाद्रपद, मूल, रोहिणी, शतभिषा, उत्तराफाल्गुनी इन नक्षत्रों में शनि और मंगल को छोड़कर शेष वारों में धान का रोपना शुभद होता है ॥३२॥

भंडार में धान्य रखने का मुहूर्त्त—

मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु
कर्काजतौलिरहिते च तनौ शुभाह ।
धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता, ध्रुवेज्य-
द्वीशेन्द्रदस्रचरभेषु च धान्यवृद्धिः ॥ ३३ ॥

अन्वयः—मिश्रोग्ररौद्रभुजगेन्द्रविभिन्नभेषु च (पुनः) कर्काजतौलिरहिते तनौ शुभाहे धान्यस्थितिः शुभकरी गदिता। ध्रुवेज्यद्वीशेन्द्रदस्रचरभेषु धान्यवृद्धिः शुभकरी गदिता ॥३३॥

भा० टी०—मिश्र संज्ञक, उग्र संज्ञक, आर्द्रा, श्लेषा, ज्येष्ठा इन नक्षत्रों को छोड़कर शेष नक्षत्रों में और कर्क-मेष तथा तुला को छोड़कर शेष लग्नों में भण्डार (बखार) में धान्य का रखना शुभद होता है। ध्रुव संज्ञक, पुष्य, विशाखा, ज्येष्ठा, अश्विनी और चर संज्ञक नक्षत्रों में धान्य सवाई या डेढ़िया इत्यादि पर देना शुभद होता है ॥३३॥

शान्ति करने आदि का मुहूर्त्त—

क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु शस्तं
स्याच्छान्तिकं च सह मङ्गलपौष्टिकाभ्याम् ।
खेऽर्के विधौ सुखगते तनुगे गुरौ नो
मौढ्यादिदुष्टसमये शुभदं निमित्ते ॥ ३४ ॥

अन्वयः—क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु, खेऽर्के, विधौ सुखगते, गुरौ तनुगे, मङ्गलपौष्टिकाभ्यां सह शान्तिकं शस्तं स्यात्। मौढ्यादिदुष्टसमये नो शुभदम्। निमित्ते शुभदं स्यात् ॥३४॥

भा० टी०—क्षिप्र संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, रेवती, चर संज्ञक, अनुराधा और मघा इन नक्षत्रों में लग्न से दशम में सूर्य हों तथा चौथे चन्द्रमा हों और लग्न में गुरु हों ऐसे समय में मङ्गल और पुष्टि के निमित्त शान्ति करना शुभद होता है। अस्तादि (गुरु और शुक्र के बाल-वृद्ध और अस्त समय में) दुष्ट समयों में नहीं करना चाहिये। किन्तु निमित्त (उल्कापात, केतु-दर्शन आदि समयों पर उनके दुष्ट फल के शान्त्यर्थ) दुष्ट समय रहते हुए भी शान्ति करनी चाहिये ॥३४॥

हवन की आहुति का विचार—

सूर्यभात् त्रित्रिभे चान्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः ।
चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टा होमाहुतिः खले ॥ ३५ ॥

अन्वयः—सूर्यभात् त्रित्रिभे चान्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः चन्द्रारेज्यागुशिखिनः, खले होमाहुतिः नेष्टा ॥३५॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से क्रम से चन्द्रमा के नक्षत्र तक (अर्थात्—जिस दिन हवन करना हो उस दिन जो नक्षत्र हो वही चन्द्रनक्षत्र होता है) तीन-तीन नक्षत्र तक गिने तो क्रम से सूर्य, बुध, शुक्र, शनि, चन्द्र, मङ्गल, गुरु, राहु और केतु स्वामी होते हैं। इसमें जिन नक्षत्रों के स्वामी पापग्रह हों उन नक्षत्रों में होम की आहुति निषिद्ध है अर्थात् उस दिन हवन नहीं करना चाहिये ॥३५॥

अग्नि का वास और उसका फल—

सैका तिथिर्वारयुता कृताप्ता शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः ।
सौख्याय होमे शशियुग्मशेषे प्राणार्थनाशौ दिवि भूतले च ॥ ३६ ॥

अन्वयः—तिथिः (शुक्लादिः) सैका वारयुता कृताप्ता गुणेऽभ्रे शेषे भुवि

वह्निवासः होमे सौख्याय (भवति) च (पुनः) शशियुग्मशेषे दिवि भूतले वह्नि-वासः होमे प्राणार्थनाशौ (भवतः) ॥३६॥

भा० टी०—शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से (जिस तिथि को हवन करना है वहाँ तक गिनकर) तिथि-संख्या में एक जोड़कर उसमें रविवार से वर्तमान वार की संख्या को जोड़ दे, इसमें चार का भाग देवे। यदि तीन शेष बचे तो भूमि पर अग्नि का वास होता है; उस दिन हवन करने से सुख होता है। यदि चार का भाग देने से एक और दो शेष बचे तो आकाश और पाताल में (अर्थात् एक शेष में आकाश में और दो शेष में पाताल में) अग्नि का वास होता है। इस दिन हवन करने से क्रम से प्राण और धन का नाश होता है ॥३६॥

उदाहरण—जैसे वैशाख कृष्ण ७ शुक्रवार को हवन करना है तो शुक्लादि तिथि १५ और कृष्ण की ७ दोनों मिलकर तिथि-संख्या २२ हुई, इसमें १ और वार संख्या ६ जोड़ देने से २९ हुआ, इसमें ४ का भाग दिया तो शेष १ बचा इससे अग्नि का वास आकाश में हुआ, इसलिये इस दिन हवन करने से प्राणभय होगा।

विशेष—यहाँ पर कोई-कोई शंका करते हैं कि अग्निवास तीन ही स्थान में है और चार से भाग दिया जाता है ऐसा क्यों? यह शंका व्यर्थ है क्योंकि किसी-किसी आचार्य के मत से घन (बादल) में अग्नि का वास होता है किन्तु घन का स्थान आकाश में ही होने से यह कल्पना व्यर्थ प्रतीत होती है। किसी-किसी आचार्य ने ३, ४ शेष बचने पर भूमि पर ही अग्निवास माना है। उक्तं च—**तिथिवारयुतिः सैका वेदभक्तावशेषकात्। निवासोऽग्नेर्व्योम्निरूपे वित्तप्राणविनाशकः॥ पाताले द्विक-शेषेण धनसंचयनाशकः। गुणवेदावशेषेण भूमौ विपुलसौख्यदः॥ संस्कारेषु विचारोऽस्य न कार्यो नापि वैष्णवे। नित्ये नैमित्तिके कार्ये न चाब्दे मुनिभिः स्मृतः॥**

नवान्न-भक्षण का मुहूर्त्त—

नवान्नं स्याच्चरक्षिप्रमृदुभे सत्तनौ शुभम्।
विना नन्दा-विषघटी-मधु-पौषाऽऽर्कि-भूमिजाम्॥ ३७॥

अन्वयः—चरक्षिप्रमृदुभे सत्तनौ नन्दा-विषघटी-मधु-पौषार्किभूमिजाम् विना नवान्नं शुभं स्यात् ॥३७॥

भा० टी०—चर संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, मृदु संज्ञक नक्षत्रों में, शुभ लग्न में, नन्दा (१।६।११) तिथि, नक्षत्रों की विषघटी (विवाह प्रकरण का ४७वाँ श्लोक), चैत्र तथा पौष मास और शनि तथा भौमवार को छोड़कर शेष वारों में नवीन अन्न का खाना शुभद होता है ॥३७॥

नौका गढ़ाने का मुहूर्त्त—

याम्यत्रयविशाखेन्द्रसार्पपित्र्येशभिन्नभे।
भृग्वीज्यार्कदिने नौकाघटनं सत्तनौ शुभम्॥ ३८॥

अन्वयः—याम्यत्रयविशाखेन्द्रसार्पपित्र्येशभिन्नभे भृग्वीज्यार्कदिने सत्तनौ नौकाघटनं शुभम् (स्यात्) ॥३८॥

भा० टी०—भरणी से तीन (भरणी, कृत्तिका, रोहिणी), विशाखा, ज्येष्ठा, श्लेषा, मघा, आर्द्रा इनसे भिन्न नक्षत्रों में शुक्र, गुरु और रविवार के दिन शुभ लग्नों में नौका (नाव) गढ़ाना शुभद होता है ॥३८॥

वीर साधन और अभिचार कार्य का मुहूर्त्त—

मूलार्द्राभरणीपित्र्यमृगे सौम्ये घटे तनौ ।
सुखे शुक्रेऽष्टमे शुद्धे सिद्धिर्वीराभिचारयोः ॥ ३९ ॥

अन्वयः—मूलार्द्राभरणीपित्र्यमृगे घटे तनौ सौम्ये, सुखे शुक्रे अष्टमे शुद्धे वीराभिचारयोः सिद्धिः स्यात् ॥३९॥

भा० टी०—मूल, आर्द्रा, भरणी, मघा, मृगशिरा इन नक्षत्रों में बुध से युक्त कुम्भ लग्न में, चतुर्थ में शुक्र हों और अष्टम स्थान शुद्ध हो ऐसे समय में वीर साधन (प्रेतादि की सिद्धि) तथा अभिचार कार्य (मारण-मोहनादि) सिद्ध होते हैं ॥३९॥

रोगमुक्त स्नान मुहूर्त्त—

व्यन्त्यादितिध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये
रिक्ते तिथौ चरतनौ विकवीन्दुवारे ।
स्नानं रुजा विरहितस्य जनस्य शस्तं
हीने विधौ खलखगैर्भवकेन्द्रकोणे ॥ ४० ॥

अन्वयः—व्यन्त्यादिति ध्रुवमघानिलसार्पधिष्ण्ये, रिक्ते तिथौ, चरतनौ, विकवीन्दुवारे, हीने विधौ, खलखगैः भवकेन्द्रकोणे रुजा विरहितस्य (जनस्य) स्नानं शस्तं स्यात् ॥४०॥

भा० टी०—रेवती, पुनर्वसु, ध्रुव संज्ञक, मघा, स्वाती, श्लेषा इन नक्षत्रों को छोड़कर शेष नक्षत्रों में, रिक्ता (४।९।१४) तिथि में, शुक्र, चन्द्र इन वारों को छोड़-कर शेष वारों में, निर्बल चन्द्रमा में और पापग्रह एकादश, एक, चार, सात, दस, नवम और पाँचवें स्थान में हों ऐसे लग्न में रोग से मुक्त मनुष्य का स्नान करना शुभद होता है ॥४०॥

शिल्पविद्या सीखने का मुहूर्त्त—

मृदु-ध्रुव-क्षिप्र-चरे ज्ञे गुरौ वा खलग्नगे ।
विधौ ज्ञजीववर्गस्थे शिल्पविद्या प्रशस्यते ॥ ४१ ॥

अन्वयः—मृदुध्रुवक्षिप्रचरे ज्ञे वा गुरौ खलग्नगे विधौ ज्ञजीववर्गस्थे शिल्प-विद्या प्रशस्यते ॥४१॥

भा० टी०—मृदु संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक और चर संज्ञक नक्षत्रों में, बुध या गुरु दशम या लग्न में हों और चन्द्रमा बुध या गुरु के षड्वर्ग में हों तो शिल्पविद्या (कारीगरी) सीखना शुभद होता है ॥४१॥

सन्धि (मित्रता) का मुहूर्त—

सुरेज्यमित्रभाग्येषु चाष्टम्यां तैतिले हरौ ।
शुक्रदृष्ट-तनौ सौम्यवारे सन्धानमिष्यते ॥ ४२ ॥

अन्वयः—सुरेज्यमित्रभाग्येषु, अष्टम्यां हरौ (तिथौ) तैतिले शुक्रदृष्टे तनौ, सौम्यवारे सन्धानं इष्यते ॥४२॥

भा० टी०—पुष्य, अनुराधा, पूर्वाफाल्गुनी इन नक्षत्रों में, अष्टमी, द्वादशी तिथि में, तैतिल करण में, शुक्र लग्न को देखना हो ऐसे लग्न में, शुभ ग्रह के दिन में सन्धान (मित्रता) करना शुभद होता है ॥४२॥

किसी वस्तु की परीक्षा का मुहूर्त—

त्यक्त्वाऽष्टभूतशनिविष्टिकुजान् जनुर्भ-
मासौ मृतौ रविविधू अपि भानि नाड्याः ।
द्व्यङ्के चरे तनुलवे शशिजीवतारा-
शुद्धौ करादितिहरीन्द्रकपे परीक्षा ॥ ४३ ॥

अन्वयः—अष्टभूतशनिविष्टिकुजान्, जनुर्भमासौ, मृतौ रविविधू, अपि नाड्याः भानि त्यक्त्वा, द्व्यङ्के चरे तनुलवे शशिजीवताराशुद्धौ करादितिहरीन्द्र-कपे परीक्षा शुभा स्यात् ॥४३॥

भा० टी०—अष्टमी, चतुर्दशी तिथि, शनिवार, भौमवार, भद्रा, जन्म का नक्षत्र और जन्म का मास, जन्म-राशि से आठवें सूर्य और चन्द्र तथा नाड़ी के नक्षत्रों को छोड़कर द्विस्वभाव अथवा चर लग्न और इन्हीं के नवांश में चन्द्रमा, गुरु और तारा शुद्ध हों तो हस्त, पुनर्वसु, श्रवण, ज्येष्ठा और शतभिष नक्षत्र में परीक्षा (किसी वस्तु के सन्देह में शपथ रूप) लेना शुभद होता है ॥४३॥

सामान्यतः सभी शुभ कार्यों में लग्नशुद्धि—

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते ।
चन्द्रे त्रिषड्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥ ४४ ॥

अन्वयः—व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते त्रिषड्दशायस्थे चन्द्रे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥४४॥

भा० टी०—लग्न से बारहवाँ और आठवाँ स्थान शुद्ध हो तथा अपनी जन्म-राशि या जन्म-लग्न से उपचय (३।६।१०।११ राशि) राशि लग्न हो, और वह शुभ ग्रह से युत तथा दृष्ट हो, चन्द्रमा तीसरे छठें और ग्यारहवें स्थान में हो ऐसे लग्न में सभी कार्यों का आरम्भ करना शुभद होता है ॥४४॥

नक्षत्रों में रोगोत्पत्ति की अवधि—

स्वातीन्द्र-पूर्वा-शिव-सार्प-भे मृतिर्ज्वरेऽन्त्यमैत्रे स्थिरता भवेद्रुजः ।
याम्यश्रवोवारुणतक्षभे शिवा घस्रा हि पक्षो द्व्यधिपार्कवासवे ॥ ४५ ॥

मूलाग्निदास्त्रे नव पित्र्यभे नखा बुध्न्यार्यमेज्यादितिधातृभे नगाः ।
मासोऽब्जवैश्वेऽथ यमाहिमूलभे मिश्रेशपित्र्ये फणिदंशने मृतिः ॥४६॥

अन्वयः—स्वातीन्द्रपूर्वाशिवसार्पभे ज्वरे (सति) मृतिः स्यात् । अन्त्यमैत्रे रुजः स्थिरता भवेत् । याम्यश्रवोवारुणतक्षभे शिवा घस्रा, द्व्यधिपार्कवासवे पक्षः, मूलाग्निदास्त्रे नव, पित्र्यभे नखाः, बुध्न्यार्यमेज्यादिति धातृभे नगाः, अब्जवैश्वे मासः (रुजस्थैर्यं भवति) । अथ यमाहिमूलभे मिश्रेशपित्र्ये फणिदंशने मृतिः स्यात् ॥ ४५-४६ ॥

भा० टी०—यदि स्वाती, ज्येष्ठा, तीनों पूर्वा (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपदा), आर्द्रा और श्लेषा इन नक्षत्रों में ज्वर हो तो मृत्यु हो जाती है । रेवती, अनुराधा में रोगोत्पत्ति होने से रोग स्थिर हो जाता है । भरणी, श्रवण, शतभिष और चित्रा में ज्वरादि हो तो ग्यारह दिन तक, विशाखा हस्त, धनिष्ठा में ज्वरादि हो तो पन्द्रह दिन तक, मूल, कृत्तिका, अश्विनी में हो तो नव दिन तक, मघा में हो तो वीस दिन तक, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी में हो तो सात दिन तक और मृगशिरा तथा उत्तराषाढ़ में रोगादि हो तो एक मास तक रोग रहता है । यदि भरणी, श्लेषा, मूल, मिश्र संज्ञक और आर्द्रा तथा मघा में सर्प काट ले तो मृत्यु हो जाती है ॥४५-४६ ॥

रोगोत्पत्ति में शीघ्र मृत्युकारक नक्षत्र—

रौद्राहिशाक्राम्बुपयाम्यपूर्वाद्विदैववस्वग्निषु पापवारे ।
रिक्ताहरिस्कन्ददिने च रोगे शीघ्रं भवेद्रोगिजनस्य मृत्युः ॥४७॥

अन्वयः—रौद्राहिशाक्राम्बुपयाम्यपूर्वाद्विदैवस्वग्निषु पापवारे रिक्ताहरिस्कन्ददिने च रोगे सति रोगिजनस्य शीघ्रं मृत्युर्भवेत् ॥४७॥

भा० टी०—आर्द्रा, श्लेषा, ज्येष्ठा, शतभिषा, भरणी, तीनों पूर्वा, विशाखा, धनिष्ठा और कृत्तिका नक्षत्र में तथा पापग्रह के दिन में और रिक्ता, द्वादशी और षष्ठी तिथि में रोग हो तो रोगी की शीघ्र ही मृत्यु होती है ॥४७॥

प्रेतक्रिया (पुत्तल) का मुहूर्त्त और पंचक का विचार—

क्षिप्राहिमूलेन्दुहरीशवायुभे प्रेतक्रिया स्याज्झषकुम्भगे विधौ ।
प्रेतस्य दाहं यमदिग्गमं त्यजेच्छय्यावितानं गृहगोपनादि च ॥४८॥

अन्वयः—क्षिप्राहिमूलेन्दुहरीशवायुभे प्रेतक्रिया स्यात् । झषकुम्भगे विधौ प्रेतस्य दाहं, यमदिग्गमं, शय्यावितानं, गृहगोपनादि च त्यजेत् ॥४८॥

भा० टी०—क्षिप्र संज्ञक, श्लेषा, मूल, मृगशिरा, श्रवण, आर्द्रा, स्वाती इन नक्षत्रों में प्रेत की क्रिया (पुत्तल का विधान) करना शुभद होता है । मीन और कुम्भ राशि के चन्द्रमा जब हों (अर्थात् धनिष्ठा के तीसरे चरण से रेवती के अन्त तक—इसी को पंचक कहते हैं) तो प्रेत (शव) का दाह, दक्षिण दिशा की यात्रा,

चारपाई का बीनना और घर का छवाना और लकड़ी भूसा आदिका संचय नहीं करना चाहिये ॥४८॥

त्रिपुष्कर-द्विपुष्कर योग—

भद्रा-तिथौ रविजभूतनयार्कवारे द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्निवैश्वे ।
त्रैपुष्करो भवति मृत्युविनाशवृद्धौ त्रैगुण्यदो द्विगुणकृद्वसुतक्षचान्द्रे ॥४९॥

अन्वयः—भद्रातिथौ, रविजभूतनयार्कवारे, द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्निवैश्वे त्रैपुष्करो भवति (सच) मृत्युविनाशवृद्धौ त्रैगुण्यदः (भवति) (एवं) भद्रातिथौ, वसुतक्षचान्द्रे द्विपुष्करो, भवति, (स च) मृत्युविनाशवृद्धौ द्विगुणकृद् (भवति) ॥४९॥

भा० टी०—भद्रा तिथि (२।७।१२), शनि, मंगल, रविवार और विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपदा, पुनर्वसु, कृत्तिका और उत्तराषाढ़ नक्षत्र हो तो उस दिन त्रिपुष्कर योग होता है। इसमें यदि मृत्यु, विनाश और वृद्धि हो तो तिगुना और होती है। और भद्रा तिथि, शनि, भौम और रवि के दिन धनिष्ठा, चित्रा, मृगशिरा नक्षत्र हो तो द्विपुष्कर योग होता है। यह मृत्यु, विनाश और वृद्धि में द्विगुणित फल देता है ॥४९॥

जलाने की लकड़ी आदि रखने में नक्षत्र-शुद्धि-चक्र—

सूर्यर्क्षाद्रसभैरधःस्थलगतैः पाको रसैः संयुतः
शीर्षे युग्ममितैः शवस्य दहनं मध्ये युगैः सर्पभीः ।
प्रागाशादिषु वेदभैः स्वसुहृदां स्यात्सङ्गमो रोगभीः
क्वाथादेः करणं सुखं च गदितं काष्ठादिसंस्थापने ॥

अन्वयः—सूर्यर्क्षात् अधःस्थलगतैः रसभैः पाकः रसैः संयुतः स्यात्। शीर्षे युग्ममितैः शवस्य दहनं, मध्ये युगैः सर्पभीः, प्रागाशादिषु वेदभैः स्वसुहृदां सङ्गमः, रोगभीः, क्वाथादेः करणं, सुखं च काष्ठादिसंस्थापने गदितम् ।

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से ६ नक्षत्र अधःस्थल में कल्पना करे, इसमें लकड़ी कंडा आदि रखने से उस लकड़ी से रसोई स्वादयुक्त होती है। फिर चार नक्षत्र सिर पर कल्पना करे, उसमें लकड़ी आदि रखने से वह काष्ठ मुर्दा जलाने के काम में आता है। फिर ४ नक्षत्र मध्य में कल्पना करे, इसमें रखने से सर्प का भय होता है। फिर पूर्वादि दिशाओं में चार चार नक्षत्र कल्पना करे, इसमें काष्ठादि स्थापन से पूर्व में मित्रों का समागम, दक्षिण वाले में रोग का भय, पश्चिम वाले में क्वाथादि (काढ़ा) करने के काम में और उत्तर वाले नक्षत्रों में काष्ठादि रखने से उससे सुख प्राप्त होता है ।

पुत्तल-विधान में समय का विचार—

शुक्रारार्किषु दर्शभूतमदने नन्दासु तीक्ष्णोग्रभे
पौष्णे वारुणभे त्रिपुष्करदिने न्यूनाधिमासेऽयने ।
याम्येऽब्दात्परतश्च पातपरिघे देवेज्यशुक्रास्तके
भद्रावैधृतयोः शवप्रतिकृतेर्दाहो न पक्षे सिते ॥ ५० ॥

अन्वयः—शुक्रारार्किषु, दर्शभूतमदने नन्दासु, तीक्ष्णोग्रभे पौष्णे वारुणभे, त्रिपुष्करदिने, न्यूनाधिमासे, अब्दात् परतः याम्ये अयने च (पुनः) पातपरिघे, देवेज्यशुक्रास्तके, भद्रावैधृतयोः, सिते पक्षे, शवप्रतिकृतेर्दाहः न (कार्यः) ॥५०॥

भा० टी०—शुक्र, भौम, शनि इन वारों में, अमावस्या, चतुर्दशी, त्रयोदशी और नन्दा तिथियों में, तीक्ष्ण संज्ञक, उग्र संज्ञक, रेवती, शतभिषा नक्षत्रों में, त्रिपुष्कर योग में, क्षयमास और अधिमास में, एक वर्ष के बाद, दक्षिणायन में, व्यतीपात और परिघ योग में, गुरु और शुक्र के अस्त में, भद्रा और वैधृति में और शुक्लपक्ष में शव-प्रतिकृति (पुत्तल) का दाह नहीं करना चाहिये ॥५०॥

पुत्तल-दाह करनेवाले के लिये शुभ और अशुभ समय—

जन्मप्रत्यरितारयोर्मृतिसुखान्त्येऽब्जे च कर्तुर्न स-
न्मध्यो मैत्रभगादितिध्रुवविशाखाद्व्यंघ्रिभे ज्ञेऽपि च ।
श्रेष्ठोऽर्केज्यविधोर्दिने श्रुतिकरस्वात्यश्विपुष्ये तथा
त्वाशौचात्परतो विचार्यमखिलं मध्ये यथासम्भवम् ॥ ५१ ॥

अन्वयः—जन्मप्रत्यरितारयोः मृतिसुखान्त्ये च अब्जे कर्तुः न सत् । मैत्रभगादितिध्रुवविशाखाद्व्यंघ्रिभे ज्ञेऽपि (वारे) कर्तुः मध्यः (स्यात्) । अर्केज्यविधोर्दिने, श्रुतिकरस्वात्यश्विपुष्ये कर्तुः श्रेष्ठः स्यात् । इदं निखिलं अशौचात्परतः विचार्य मध्ये यथासम्भवं (कार्यम्) ॥५१॥

भा० टी०—जन्म और प्रत्यरि तारा में, चौथे, आठवें, बारहवें चन्द्रमा में, पुत्तल-दाह करना कर्त्ता के लिये अशुभ है। अनुराधा, पूर्वाफाल्गुनी, पुनर्वसु, विशाखा, दो चरण के नक्षत्र (मृगशिरा, चित्रा, धनिष्ठा) और बुधवार को दाह करना मध्यम है। और रवि, गुरु, चन्द्र इन वारों में तथा श्रवण, हस्त, स्वाती, अश्विनी, पुष्य, इन नक्षत्रों में दाह करना श्रेष्ठ होता है। यह सम्पूर्ण अशौच के बाद ही विचार करना चाहिए और मध्य में अर्थात् अशौच के मध्य में यथासंभव जैसा हो वैसा विचार करे ॥५१॥

अभुक्त मूल का लक्षण—

अभुक्तमूलं घटिकाचतुष्टयं ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं हि नारदः ।
वसिष्ठ एकद्विघटीमितं जगौ बृहस्पतिस्त्वेकघटीप्रमाणकम् ॥५२॥

अन्वयः—ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं घटिकाचतुष्टयं अभुक्तमूलं स्यात् इति नारदः जगौ, तथा (ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं) एकद्विघटीमितं अभुक्तमूलं (इति) वशिष्ठः जगौ, (ज्येष्ठान्त्यमूलादिभवं) एकघटीप्रमाणकम् अभुक्तमूलं स्यादिति बृहस्पतिः जगौ ॥५२॥

भा० टी०—ज्येष्ठा के अन्त की और मूल के आदि की दोनों को मिलाकर चार घटी अभुक्त मूल होता है। यह नारदका मत है। वसिष्ठ के मत से ज्येष्ठा के अन्त में एक घटी और मूल के आदि में दो घटी अभुक्त मूल होता है। और बृहस्पति के मत से ज्येष्ठा के अन्त और मूल के आदि दोनों को मिलाकर एक ही घटी अभुक्त मूल होता है ॥५३॥

अभुक्त मूल में विशेष—

अथोचुरन्ये प्रथमाष्टघट्यो मूलस्य शाक्रान्तिमपञ्च नाड्यः ।
जातं शिशुं तत्र परित्यजेद्वा मुखं पिताऽस्याष्टसमा न पश्येत् ॥५३॥

अन्वयः—अथ अन्ये (त्वेवं) ऊचुः (यत्) मूलस्य प्रथमाष्टघट्यः शाक्रान्तिमपंचनाड्यः (अभुक्तमूलं स्यात्) तत्र जातं शिशुं परित्यजेत्, वा (अथवा) पिता अस्य मुखं अष्टसमा न पश्येत् ॥५३॥

भा० टी०—अन्य आचार्यों का मत है कि मूल के प्रथम में आठ घटी और ज्येष्ठा के अन्त की पाँच घटी अभुक्त मूल होता है। इस अभुक्तमूल में उत्पन्न बालक को त्याग देना चाहिये। अथवा इस बालक का मुख आठ वर्ष तक पिता न देखे ॥५३॥

मूल और श्लेषा का फल—

आद्ये पिता नाशमुपैति मूलपादे द्वितीये जननी तृतीये ।
धनं चतुर्थोऽस्य शुभोऽथ शान्त्या सर्वत्र सत्स्यादहिभे विलोमम् ॥५४॥

अन्वयः—आद्ये मूलपादे पिता नाशं उपैति, द्वितीये जननी, तृतीये धनं नाशं उपैति, अस्य चतुर्थः (चरणः) शुभं स्यात्। शान्त्या सर्वत्र सत् स्यात्। अहिभे विलोमं स्यात् ॥५४॥

भा० टी०—मूल के प्रथम चरण में जन्म हो तो पिता को अनिष्ट होता है, दूसरे चरण में माता को, तीसरे चरण में धन का नाश होता है और चौथे चरण में जन्म हो तो शुभद होता है। शान्ति कर देने से सभी चरण शुभद होते हैं। श्लेषा में इसका विपरीत फल होता है। अर्थात् श्लेषा के चौथे चरण में जन्म हो तो पिता का, तीसरे में माता का, दूसरे में धन का नाश करता है और प्रथम चरण में जन्म हो तो शुभद होता है ॥५४॥

मूल के वास का विचार—

स्वर्गे शुचिप्रौष्ठपदेषमाघे भूमौ नभःकार्तिकचैत्रपौषे ।
मूलं ह्यधस्तास्तु तपस्यमार्गवैशाखशुक्रेष्वशुभं च तत्र ॥ ५५ ॥

अन्वय:—शुचिप्रौष्ठपदेषमाघे स्वर्गे (मूलवासः), नभःकार्त्तिकचैत्रपौषे भूमौ। (पुनः) तपस्यमार्गवैशाखशुक्रेषु अधस्तात् (तिष्ठति) तत्र अशुभं ज्ञेयम् ॥५५॥

भा० टी०—आषाढ़, भाद्रपद, आश्विन, माघ, इन मासों में मूल नक्षत्र का निवास स्वर्गलोक में रहता है। श्रावण, कार्त्तिक, चैत्र और पौष मास में भूमि पर मूल का वास रहता है और फाल्गुन, मार्गशीर्ष, वैशाख और ज्येष्ठ मास में पाताल में मूल का वास रहता है। जिस मास में जहाँ रहता है वहीं उसका फल होता है॥५५॥

बालक होने का अशुभ समय—

गण्डान्तेन्द्रभशूलपातपरिघव्याघातगण्डावमे
संक्रान्तिव्यतिपातवैधृतिसिनीवालीकुहूदर्शके
वज्रे कृष्णचतुर्दशीषु यमघण्टे दग्धयोगे मृतौ
विष्टौ सोदरभे जनिर्न पितृभे शस्ता शुभा शान्तितः ॥ ५६ ॥

अन्वय:—गण्डान्तेन्द्रभशूलपातपरिघव्याघातगण्डावमे, संक्रान्तिव्यतिपात-वैधृतिसिनीवालीकुहूदर्शके, वज्रे कृष्णचतुर्दशीषु, यमघण्टे, दग्धयोगे, मृतौ, विष्टौ, सोदरभे, पितृभे जनिः न शस्ता, शान्तितः शुभा भवति ॥५६॥

भा० टी०—गण्डान्त, ज्येष्ठा, शूलयोग, महापात, परिघ, व्याघात, गण्डयोग, अवम (तिथिक्षय), संक्रान्ति, व्यतीपात, वैधृति, सिनीवाली[1] और कुहूवाली अमावास्या, वज्रयोग, कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, यमघण्ट (शुभाशुभ प्रकरणोक्त ९ श्लोक), दग्धयोग (शुभाशुभ प्रकरण ८ वाँ श्लोक), मृत्युयोग (शुभाशुभ प्रकरण ३० वाँ श्लोक), भद्रा, भाई के नक्षत्र में तथा माता-पिता के जन्म-नक्षत्र में बालक का जन्म हो तो अशुभ होता है। शान्ति कर देने से शुभद होता है ॥५६॥

नक्षत्रों के ताराओं की संख्यायें—

त्रित्र्यङ्गपञ्चाग्निकुवेदवह्नयः　शरेषुनेत्राश्विशरेन्दुभूकृताः ।
वेदाग्निरुद्राश्वियमाग्निवह्नयोऽब्धयः शतं द्विद्विरदा भतारकाः ॥५७॥

अन्वय:—(श्लोकक्रमेण स्पष्टम्), भतारकाः अश्विन्यादिभानां तारकाः तारासंख्या, ज्ञेयाः ॥५७॥

भा० टी०—अश्विनी में ३, भरणी में ३, कृत्तिका में ६, रोहिणी में ५, मृग-शिरा में ३, आर्द्रा में १, पुनर्वसु में ४, पुष्य में ३, श्लेषा में ५, मघा में ५, पूर्वाफाल्गुनी में २, उत्तराफाल्गुनी में २, हस्त में ५, चित्रा में १, स्वाती में १, विशाखा में ४,

---

१—सा नष्टेन्दुः सिनीवाली सा दृश्येन्दुः कलाकुहुः। जिस अमावास्या को चन्द्र-दर्शन न हो उसे सिनीवाली अमावास्या और जिस अमावास्या को चन्द्र-दर्शन हो उसे कुहूवाली अमावास्या कहते हैं।

अनुराधा में ४, ज्येष्ठा में ३, मूल में ११, पूर्वाषाढ़ में २, उत्तराषाढ़ में २, अभिजित् में ३, श्रवण में ३, धनिष्ठा में ४, शतभिष में १००, पूर्वाभाद्रपद में २, उत्तराभाद्रपद में २ और रेवती में ३२ तारायें आकाश में होती हैं ॥ ५७ ॥

अश्व्यादिरूपं तुरगास्ययोनिक्षुरोऽन एणास्यमणिर्गृहं च ।
पृषत्कचक्रे भवनं च मञ्चः शय्या करो मौक्तिकविद्रुमं च ॥५८॥
तोरणं बलिनिभं च कुण्डलं सिंहपुच्छगजदन्तमञ्चकाः ।
त्र्यस्त्रि च त्रिचरणाभमर्दलौ वृत्तमञ्चयमलाभमर्दलाः ॥५९॥

अन्वयः—तुरगास्य-योनिः क्षुरः, अनः एणास्य-मणिः गृहं च पृषत्कचक्रे, भवनं च, मञ्चः शय्या, करः, मौक्तिक-विद्रुमं च, तोरणं, बलिनिभं च, कुण्डलं, सिंहपुच्छ-गजदन्तमञ्चकाः, त्र्यस्त्रि च, त्रिचरणाभ-मर्दलौ, वृत्त-मञ्चयमलाभ-मर्दलाः अश्व्यादि (नक्षत्राणां) रूपम् (ज्ञेयम्) ॥५८-५९॥

भा० टी०—अश्विन्यादि नक्षत्रों का स्वरूप क्रम से यह है, अर्थात् अश्विनी का घोड़े के मुख के सदृश, भरणी का योनि के, कृत्तिका का छुरे के, रोहिणी का गाड़ी के, मृगशिरा का हरिण के मुख के, आर्द्रा का मणि के, पुनर्वसु का गृह के, पुष्य का वाण के, श्लेषा का चक्र के, मघा का मकान के, पूर्वाफाल्गुनी का मञ्च (मचान) के, उत्तराफाल्गुनी का शय्या (चारपाई) के, हस्त का हाथ के, चित्रा का मोती के, स्वाती का मूँगा के, विशाखा का तोरण के, अनुराधा का भात के ढेर के, ज्येष्ठा का कुंडल के, मूल का सिंह की पूँछ के, पूर्वाषाढ़ का हाथी के दाँत के, उत्तराषाढ़ का मचान के, अभिजित् का त्रिकोण के, श्रवण का त्रिचरण (वामन) के, धनिष्ठा का मृदङ्ग के, शतभिषा का वृत्त (गोलाकार) के, पूर्वाभाद्रपद का मचान के, उत्तराभाद्रपद का यमल (जुटे हुए दो आदमी) के, और रेवती का मृदङ्ग के सदृश है ॥५८-५९॥

किसी भी जलाशय, बगीचा और देवप्रतिष्ठा का मुहूर्त्त—

जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा सौम्यायने जीवशशाङ्कशुक्रे ।
दृश्ये मृदुक्षिप्रचरध्रुवे स्यात्पक्षे सिते स्वर्क्षतिथिक्षणे वा ॥६०॥
रिक्तारवर्ज्ये दिवसेऽतिशस्ता शशाङ्कपापैस्त्रिभवाङ्गसंस्थैः ।
व्यन्त्याष्टगैः सत्खचरैर्मृगेन्द्रे सूर्यो घटे को युवतौ च विष्णुः ॥६१॥
शिवो नृयुग्मे द्वितनौ च देव्यः क्षुद्राश्चरे सर्व इमे स्थिरर्क्षे ।
पुष्ये ग्रहा विघ्नपयक्षसर्पभूतादयोऽन्त्ये श्रवणे जिनश्च ॥६२॥

अन्वयः—सौम्यायने, जीवशशांकशुक्रे दृश्ये, मृदुक्षिप्रचरध्रुवे, सिते पक्षे, वा स्वर्क्षतिथिक्षणे, रिक्तारवर्ज्ये दिवसे, शशांकपापैः त्रिभवाङ्गसंस्थैः, व्यन्त्याष्टगैः

सत्खचरैः, जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा अतिशस्ता स्यात्। मृगेन्द्रे सूर्यः, घटे कः, युवतौ विष्णुः, नृयुग्मे च शिवः, च (पुनः) द्वितनौ देव्यः, चरे क्षुद्राः, (अथवा) इमे सर्वे स्थिरर्क्षे स्थाप्याः। पुष्ये ग्रहाः, विघ्नपयक्षसर्पभूतादयः अन्त्ये (स्थाप्याः) श्रवणे जिनः (स्थाप्यः) ॥६०-६२॥

भा० टी०—उत्तरायण (मकर से ६ राशि अर्थात् मिथुन पर्यन्त) सूर्य में, गुरु चन्द्रमा और शुक्र उदित हों, मृदु संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, चर संज्ञक और ध्रुव संज्ञक नक्षत्र में, शुक्लपक्ष में अथवा जिस देवता की प्रतिष्ठा करनी हो उसके नक्षत्र, तिथि और मुहूर्त्त में, रिक्ता तिथि और भौमवार को छोड़कर शेप तिथि और वारों में, लग्न से चन्द्रमा और पापग्रह तीसरे, ग्यारहवें और छठे स्थान में हों तथा बारहवें और आठवें को छोड़कर शेप स्थानों में शुभ ग्रह हों तो जलाशय (बावली, कूप, तालाब), बगीचा, देवता की स्थापना करना शुभद होता है। सूर्य की सिंह लग्न में, कुम्भ लग्न में ब्रह्मा की, कन्या लग्न में विष्णु की, मिथुन लग्न में शिव की, द्विस्वभाव लग्नों में देवियों की, क्षुद्र देवता (योगिनी आदि) की चर लग्न में अथवा इन सभी देवताओं की स्थिर लग्न में स्थापना करनी चाहिये। पुष्य नक्षत्र में ग्रहों को, गणेश, यक्ष, सूर्य, भूत आदि को रेवती में और जिन (बुद्ध) देवता को श्रवण में स्थापित करना चाहिये ॥६०-६२॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ नक्षत्रप्रकरणम् ॥ २ ॥

नक्षत्रों के स्वामी आदि देखने का चक्र—

नक्षत्र	अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	श्लेषा	मघा	पूर्वा फा.	उत्तरा फा.	हस्त	चित्रा
स्वामी	अश्वि. कुमार	यम	अग्नि	ब्रह्मा	चन्द्रमा	शिव	अदिति	गुरु	सर्प	पितर	भग	अर्यमा	रवि	त्वष्टा
स्वरूप	घोड़ा	भग	छुरी	गाड़ी	हरिण	मणि	गृह	बाण	चक्र	घर	मचान	शय्या	हाथ	मोती
तारा	३	३	६	५	३	१	४	३	५	५	२	२	५	१
अवकहडा	चू चे चो ला	ली लू ले लो	अ ई उ ए	ओ वा वी वू	वे वो का की	कु घ ङ छ	के को हा ही	हू हे हो डा	डी डू डे डो	मा मी मू मे	मो टा टी टू	टे टो पा पी	पू ष ण ठ	पे पो रा री
राशि	मेष	मेष	१ च. मेष / वृष	वृष	२ च. वृष / मिथुन	मिथुन	३ च. मिथुन / कर्क	कर्क	कर्क	सिंह	सिंह	१ च. सिंह / कन्या	कन्या	२ च. कन्या / तुला
गण	देवता	मनुष्य	राक्षस	मनुष्य	देवता	मनुष्य	देवता	देवता	राक्षस	राक्षस	मनुष्य	मनुष्य	देवता	राक्षस
योनि	अश्व	गज	मेष	सर्प	सर्प	श्वान	मार्जार	मेष	मार्जार	मूषक	मूषक	गौ	महिष	व्याघ्र
नाड़ी	आदि	मध्य	अन्त्य	अन्त्य	मध्य	आदि	आदि	मध्य	अन्त्य	अन्त्य	मध्य	आदि	आदि	मध्य
संज्ञा	चर	चर	१च. चर / स्थिर	स्थिर	२च. स्थिर / द्वि. स्व.	द्वि.स्व.	द्वि. स्व. / चर	चर	चर	स्थिर	स्थिर	स्थिर / द्वि. स्व.	द्वि. स्व.	द्वि. स्व. / चर
राशीश	भौम	भौम	भौम / शुक्र	शुक्र	शुक्र / बुध	बुध	बुध / गुरु	गुरु	गुरु	सूर्य	सूर्य	सूर्य / बुध	बुध	बुध / शुक्र

नक्षत्रों के स्वामी आदि देखने का चक्र—

नक्षत्र	स्वाती	विंशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल	पूर्वाषाढ़	उत्तराषाढ़	अभिजित्	श्रवण	धनिष्ठा	शतभिषा	पूर्वाभाद्रपदा	उत्तराभाद्र प.	रेवती
स्वामी	वायु	इन्द्राग्नी	मित्र	इन्द्र	राक्षस	जल	विश्वेदेव	विधि	विष्णु	वसु	वरुण	अजचरण	अहिर्बुध्न्य	पूषा
स्वरूप	मूँगा	तोरण	भात का ढेर	कुंडल	सिंहपुच्छ	हाथीदाँत	मचान	त्रिकोण	वामन	मृदङ्ग	वृत्त	मचान	यमल	मृदङ्ग
तारा	१	४	४	३	११	३	२	३	३	४	१००	२	२	३२
अवकहडा	रू रे रो ता	ती तू ते तो	ना नी नू ने	नो य यी यू	ये यो भ भी	भू ध फ ढ	भे भो ज जी	जू जे जो ख	खी खू खे खो	गा गी गू गे	गो सा सी सू	से सो दा दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
राशि	तुला	३ च. तुला / वृश्चि.	वृश्चिक	वृश्चिक	धन	धन	१ च. धन / मकर	मकर	मकर	२ च. मकर / कुम्भ	कुम्भ	३ च. कुम्भ / मीन	मीन	मीन
गण	देवता	राक्षस	देवता	राक्षस	राक्षस	मनुष्य	मनुष्य	देवता	देवता	राक्षस	राक्षस	मनुष्य	मनुष्य	देवता
योनि	महिष	व्याघ्र	मृग	मृग	श्वान	वानर	नेवला	नेवला	वानर	सिंह	अश्व	सिंह	गौ	गज
नाड़ी	अन्त्य	अन्त्य	मध्य	आदि	आदि	मध्य	अन्त्य	०	अन्त्य	मध्य	आदि	आदि	मध्य	अन्त्य
संज्ञा	चर	चर / स्थिर	स्थिर	स्थिर	द्वि. स्व.	द्वि.स्व.	द्वि. स्व. / चर	चर	चर	चर / स्थिर	स्थिर	स्थिर / द्वि. स्व.	द्वि. स्व	द्वि.स्व.
राशीश	शुक्र	शुक्र / भौम	भौम	भौम	गुरु	गुरु	गुरु / शनि	शनि	शनि	शनि	शनि	शनि / गुरु	गुरु	गुरु

संक्रान्तिप्रकरणम्

वार और नक्षत्र के योग से संक्रान्ति[1] का नाम और फल—

घोरार्कसंक्रमणमुग्ररवौ हि शूद्रान्
ध्वांक्षी विशो लघुविधौ च चरर्क्षभौमे ।
चौरान्महोदरयुता नृपतीन् ज्ञमैत्रे
मन्दाकिनी स्थिरगुरौ सुखयेच्च मन्दा ॥ १ ॥
विप्रांश्च मिश्रभभृगौ तु पशूंश्च मिश्रा
तीक्ष्णार्कजेऽन्त्यजसुखा खलु राक्षसी च ।

अन्वयः—अर्कसंक्रमणं (यदा) उग्ररवौ (स्यात्तदा) घोरा (संक्रान्तिः सा) शूद्रान् सुखयेत्, लघुविधौ ध्वांक्षी (नाम्नी) सा विशः सुखयेत्, च (पुनः) चरर्क्षभौमे महोदरयुता (नाम्नी) सा चौरान् (सुखयेत्), ज्ञमैत्रे मन्दाकिनी (नाम्नी) सा नृपतीन् सुखयेत्, स्थिरगुरौ मन्दा (नाम्नी) सा विप्रान् सुखयेत्, तु (पुनः) मिश्रभभृगौ मिश्रा (नाम्नी) सा पशून् सुखयेत्, तीक्ष्णार्कजे राक्षसी (नाम्नी) सा अन्त्यजसुखा भवति ॥ १ ॥

भा० टी०—सूर्य की संक्रान्ति यदि उग्र संज्ञक नक्षत्र, रविवार के दिन हो तो घोरा नामक होती है; यह शूद्रों को सुखदायक होती है। सोमवार के दिन लघु संज्ञक नक्षत्र में हो तो ध्वांक्षी नामक होती है, वैश्यों को सुखकर होती है। चर संज्ञक नक्षत्र भौमवार को हो तो महोदर नाम की होती है, यह चोरों को सुखदायक होती है। बुधवार के दिन मैत्र संज्ञक नक्षत्र में हो तो मन्दाकिनी नाम की होती है, यह राजाओं को सुख देती है। स्थिर संज्ञक नक्षत्र गुरुवार के दिन हो तो मन्दा नाम की ब्राह्मणों को सुखकर होती है, मिश्र संज्ञक नक्षत्र शुक्रवार को हो तो मिश्रा नाम की होती है, यह पशुओं को सुखकारक होती है और तीक्ष्ण संज्ञक नक्षत्र शनिवार को हो तो राक्षसी नाम की होती है, इसमें चांडालों को सुख होता है ॥ १ ॥

१—तत्र ग्रहाणां प्राग्राशितोऽपरराशौ संक्रमणं संक्रातिरिति संक्रान्तिलक्षणम् । सा च द्विविधा मध्यमा स्पष्टा च । षट्कर्मसंस्कृतो मध्यमग्रहो राश्यन्तरं यदा संक्रामति सा मध्यमसंक्रान्तिरुच्यते । यदा तु स्पष्टीकृतसंस्कारविशिष्टो ग्रहो राश्यन्तरं गच्छेत्सा स्पष्टसंक्रान्तिरुच्यते । तत्र मध्यममानस्य स्पष्टीकरणार्थत्वादेव तज्जनितसंस्कारानुपयोगादत्र तत्स्थाने स्पष्टसंक्रान्तिरेव गृह्यते । सापि द्विविधा । सायनांशा निरयनांशा चेति । तत्र यदा सिद्धान्तगणनागतायनांशसंस्कृता ग्रहा राश्यन्तरगमनमुररीकुर्वते सायनांशा संक्रान्तिरुच्यते । यदा अयनांशसंस्काररहिता ग्रहा राश्यन्तरगास्तदा निरयनांशा संक्रान्तिरुच्यते ।

दिन-रात्रि के विभाग से संक्रान्ति का फल और अयन की परिभाषा—

त्र्यंशे दिनस्य नृपतीन् प्रथमे निहन्ति
मध्ये द्विजानपि विशोऽपरके च शूद्रान् ॥ २ ॥
अस्ते निशाप्रहरकेषु पिशाचकादी-
न्नक्तञ्चरानपि नटान् पशुपालकांश्च ।
सूर्योदये सकललिङ्गिजनं च सौम्य-
याम्यायनं मकरकर्कटयोर्निरुक्तम् ॥ ३ ॥

अन्वयः—दिनस्य प्रथमे त्र्यंशे नृपतीन् निहन्ति, मध्ये (त्र्यंशे) द्विजान् (निहन्ति) अपरके (त्र्यंशे) विशः (निहन्ति) च (पुनः) अस्ते शूद्रान् (निहन्ति) (एवं) निशाप्रहरकेषु (रात्रित्रिभागेषु क्रमेण) पिशाचकादीन्, नक्तञ्चरान्, नटान्, अपि च पशुपालकान् निहन्ति, सूर्योदये सकललिङ्गिजनं निहन्ति । च (पुनः) मकरकर्कटयोः सौम्ययाम्यायनं निरुक्तम् ॥२-३॥

भा० टी०—जिस दिन सूर्य की संक्रान्ति हो रही हो उस दिन के दिनमान का तीन भाग करके फल का विचार करे। यदि पहले भाग में संक्रान्ति लगे तो राजाओं का नाश करती है, दूसरे भाग में लगे तो ब्राह्मणों का और और तीसरे भाग में लगे तो वैश्यों का नाश करती है। अस्तकाल में लगे तो शूद्रों का नाश करती है। इसी प्रकार रात्रिमान के चार भाग कर दे। यदि पहले भाग में लगे तो पिशाचों का, दूसरे भाग में राक्षसों का, तीसरे भाग में नटों का और चौथे भाग में पशुपालक (गोपालों) का नाश करती है और सूर्योदय समय में लगे तो सभी साधु-संन्यासियों का नाश करती है। मकर से ६ राशि तक (मकर-कुम्भ-मीन-मेष-वृष-मिथुन) की संक्रान्ति को उत्तरायण (सौम्यायन) और कर्क से ६ राशि (कर्क-सिंह-कन्या-तुला-वृश्चिक-धन) की संक्रान्ति को याम्यायन (दक्षिणायन) कहते हैं ॥ २-३॥

संक्रान्तियों की अन्य संज्ञायें—

षडशीत्याननं चापनृयुक्कन्याझषे भवेत् ।
तुलाजौ विषुवं विष्णुपदं सिंहालिगोघटे ॥ ४ ॥

अन्वयः—चापनृयुक्कन्याझषे षडशीत्याननं नाम संक्रमणं भवेत्, तुलाजौ विषुवं नाम भवेत् सिंहालिगोघटे विष्णुपदं नाम भवेत् ॥ ४ ॥

भा० टी०—धन, मिथुन, कन्या और मीन राशि की संक्रान्ति को षडशीतिमुख नाम की, तुला और मेष की संक्रान्ति को विषुव और सिंह, वृश्चिक, वृष तथा कुम्भ राशि की संक्रान्ति को विष्णुपद नाम की संक्रान्ति कहते हैं ॥ ४ ॥

साधारणतया संक्रान्तिपुण्यकाल का निरूपण—

संक्रान्तिकालादुभयत्र नाडिकाः पुण्या मताः षोडश षोडशोष्णगोः ।
निशीथतोऽर्वागपरत्र संक्रमे पूर्वाऽपराहान्तिमपूर्वभागयोः ॥ ५ ॥

अन्वयः—उष्णगोः संक्रान्तिकालात् उभयत्र षोडश षोडश नाडिकाः पुण्या मताः। निशीथतः अर्वागपरत्र संक्रमे (क्रमेण) पूर्वापराह्नान्तिमपूर्वभागयोः (पुण्य-नाडिकाः भवंति) ॥ ५ ॥

भा० टी०—सूर्य की संक्रान्ति जिस समय लग रही हो उससे दोनों तरफ अर्थात् पहले और बाद को सोलह-सोलह घटी संक्रान्ति का पुण्यकाल होता है। अर्धरात्रि के पहले या बाद यदि संक्रान्ति हो तो पूर्व और पर दिन का अन्तिम तथा पूर्व भाग पुण्यकाल होता है; अर्थात् अर्धरात्रि के पहले संक्रान्ति लग रही हो तो संक्रान्ति के पूर्व दिन का अन्तिम भाग ग, यदि अर्धरात्रि के बाद संक्रान्ति लग रही हो तो संक्रान्ति के आगे के दिन का पूर्वभाग पुण्यकाल होता है ॥५॥

अत्रोपपत्तिः—तत्र ग्रहाणां प्राग्राशितोऽपरराशौ संक्रमणं संक्रान्तिः इति संक्रान्तेः परिभाषा। तत्र यावता कालेन राश्यादौ बिम्बपालीसंयोगस्तावत्यः कालः पुण्यकालः इति स्पष्टमेव। अतस्तत्कालानयनार्थमनुपातः। यदि रवि-गतिकलाभिः (६०) षष्टिघटिकास्तदा रविबिम्बकलाभिः मध्यमाभिः ३२ एभिः

किमिति मध्यमसंक्रान्तिकालो घटयात्मकः $= \frac{६० \times \text{रविक}}{६०} = \frac{६० \times ३२}{६०} = ३२$।

यदा राश्यादौ बिम्बकेन्द्रसंयोगस्तदा संक्रान्तिमध्यकालः। यदा बिम्बपूर्वपालेः प्रवेश-स्तदाऽऽरम्भकालः, यदा च बिम्बपश्चिमपालेः प्रवेशस्तदा संक्रान्त्यन्तकालः। अत एव संक्रान्तिकालादर्थान्मध्यमसंक्रान्तिकालादुभयत्र षोडश षोडश घटिकाः पुण्या मताः इति तु युक्तमुक्तमाचार्येण।

अर्धरात्रि में तथा मकर-कर्क की संक्रान्ति में विशेष—

पूर्णे निशीथे यदि संक्रमः स्याद्दिनद्वयं पुण्यमथोदयास्तात्।
पूर्वं परस्ताद्यदि याम्यसौम्यायने दिने पूर्वपरे तु पुण्ये ॥ ६ ॥

अन्वयः—यदि पूर्णे निशीथे संक्रमः स्यात् (तदा) दिनद्वयं पुण्यं स्यात्। अथ उदयास्तात् पूर्वं परस्तात् यदि याम्यसौम्यायने (तदा) पूर्व-परे दिने पुण्ये स्तः ॥६॥

भा० टी०—यदि ठीक अर्धरात्रि के समय संक्रान्ति लगे तो संक्रान्ति से पहले १ दिन और उसके बाद का १ दिन अर्थात् दो दिन पुण्यकाल होता है। और सूर्योदय के पहले याम्यायन (कर्क) संक्रान्ति हो तो पूर्व का दिन पुण्यकाल होता है और सूर्यास्त के बाद सौम्यायन (मकर) संक्रान्ति लगे तो पर दिन पुण्यकाल होता है ॥ ६ ॥

सन्ध्या-काल का निर्णय और संक्रान्ति में विशेष—

सन्ध्या त्रिनाडीप्रमितार्कबिम्बादर्धोदितास्तादध ऊर्ध्वमत्र।
चेद्याम्यसौम्ये अयने क्रमात्स्तः पुण्यौ तदानीं परपूर्वघस्रौ ॥ ७ ॥

अन्वयः—अर्द्धोदितास्तात् अर्कबिम्बात् अधः ऊर्ध्वं त्रिनाडीप्रमिता सन्ध्या स्यात्, अत्र चेद्याम्यसौम्ये अयने तदानीं परपूर्वघस्रौ पुण्यौ स्तः ॥७॥

भा० टी०—अर्धोदित सूर्य-बिम्ब के पहले ३ घटी प्रातः, संध्या और अर्धास्त सूर्यबिम्ब के बाद ३ घटी सायं सन्ध्या काल होता है। इनमें अर्थात् प्रातः संध्या-समय में याम्य (कर्क) संक्रान्ति हो तो पर दिन और सायं संध्यासमय में सौम्य (मकर) संक्रान्ति हो तो पूर्वदिन ही पुण्यकाल होता है ॥ ७ ॥

संक्रान्ति के पुण्यकाल में विशेष—

याम्यायने विष्णुपदे चाद्या मध्यास्तुलाजयोः ।
षडशीत्यानन सौम्ये परा नाड्योऽतिपुण्यदाः ॥ ८ ॥

अन्वयः—याम्यायने विष्णुपदे च नाड्यः आद्याः, तुलाजयोः मध्यानाड्यः, षडशीत्यानने तथा सौम्ये पराः नाड्यः अतिपुण्यदाः स्युः ॥ ८ ॥

भा० टी०—याम्यायन और विष्णुपद (कर्क-वृष-सिंह-वृश्चिक-कुम्भ) की संक्रान्ति के पहले १६ घटी पुण्यकाल होता है, तुला और मेष की संक्रान्ति के मध्य की १६ घटी अर्थात् संक्रान्ति से पहले आठ घटी और बाद की आठ घटी पुण्यप्रद होती हैं। षडशीतिमुख (धन, मिथुन, कन्या, मीन) तथा सौम्य (मकर) संक्रान्ति की पीछे की अर्थात् संक्रान्ति के बाद की १६ घटी अत्यन्त पुण्यदायक होती हैं ॥ ८ ॥

सायन संक्रान्ति लाने का प्रकार और उसमें विशेष—

तथाऽयनांशाः खरसाहताश्च स्पष्टार्कगत्या विहृता दिनाद्यैः ।
मेषादितः प्राक् चलसंक्रमाः स्युर्दाने जपादौ बहुपुण्यदास्ते ॥ ९ ॥

अन्वयः—अयनांशाः खरसाहताः च (पुनः) स्पष्टार्कगत्या विहृताः (लब्धैः) दिनाद्यैः मेषादितः प्राक् चलसंक्रमाः स्युः, ते दाने जपादौ तथा बहुपुण्यदाः (यथा) राशिसंक्रमाः स्युः ॥ ९ ॥

भा० टी०—अयनांश[1] को ६० से गुणा कर उसमें स्पष्ट सूर्य की गति से भाग दें तो लब्धि दिन, घटी, पल प्राप्त होगा, लब्ध दिनादि तुल्य मेषादि संक्रान्ति के पहले सायन संक्रान्ति होती है। इसमें दानादि करने से अत्यन्त पुण्य होता है ॥९॥

१—अत्रोपपत्तिः—राशिवृत्ते (क्रान्तिवृत्ते) अश्विनीनक्षत्रारम्भप्रदेशो निरयण मेषादिः, नाडीवृत्तक्रान्तिवृत्तसंपातस्तु सायनमेषादिस्तयोरन्तरभागाः एवायनांशा इति । साम्प्रतं धनायनांशकाले निरयणमेषादितः सायनमेषादिः पश्चिमतो गच्छत्यतस्तत्र प्रथममेव चलार्कसंक्रमणं भवेत्, तत्पश्चादयनांशसम्बन्धि-दिनाद्यनन्तरं निरयणसंक्रमणं भवत्यतः, अयनांशसम्बन्धिदिनानयनार्थमनुपातः— यदि स्पष्टार्कगतिकलाभिः एकं दिनं तदायनकलाभिः किमिति—अयनसम्बन्धि-

$$\text{दिनाद्यम्} = \frac{\text{अयनकला} \times १}{\text{स्प र ग क}} = \frac{\text{अयनांश} \times ६०}{\text{स्प र ग क}}$$ उपपन्नं यथोक्तम् ।

उदाहरण—जैसे ६ घटी ७ पल पर वृष की संक्रान्ति हुई। उस दिन अयनांश २१।५०।२४ है और स्पष्ट सूर्य की गति ५८।० है। अयनांश २१।५०।२४ को ६० से गुणा किया तो १३१०।२४ हुए इसमें स्पष्ट रविगति ५८ से भाग दिया तो लब्ध दिनादि २२।३५।३५ हुए, अतः वृष संक्रान्ति के दिन से लब्ध दिनादि तुल्य पहले ही वृष की सायन संक्रान्ति हो गई ॥ ९ ॥

अयनांश लाने का प्रकार—

नक्षत्रों की सम-वृहत् और जघन्य संज्ञा—

समं मृदुक्षिप्रवसुश्रवोऽग्निमघात्रिपूर्वात्रिपभं बृहत्स्यात् ।
ध्रुवद्विदैवादितिभं जघन्यं सार्पाम्बुपार्द्रानिलशाक्रयाम्यम् ॥१०॥

अन्वयः—मृदुक्षिप्रवसुश्रवोऽग्निमघात्रिपूर्वात्रिपभं समं स्यात्। ध्रुवद्विदैवादितिभं वृहत् स्यात्, सार्पाम्बुपार्द्रानिलशाक्रयाम्यं जघन्यं स्यात् ॥१०॥

भा० टी०—मृदु संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, धनिष्ठा, श्रवण, कृत्तिका, मघा, तीनों पूर्वा (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपदा) और मूल इन नक्षत्रों की सम संज्ञा है। ध्रुव संज्ञक, विशाखा और पुनर्वसु की बृहत् संज्ञा है। श्लेषा, शतभिष, आर्द्रा, स्वाती, ज्येष्ठा और भरणी इनकी जघन्य संज्ञा है ॥१०॥

संक्रान्ति में मुहूर्त्त और उसका फल—

जघन्यभे संक्रमणे मुहूर्ताः शरेन्दवो बाणकृता बृहत्सु ।
खरामसंख्याः समभे महर्घ-समर्घ-साम्यं विधुदर्शनेऽपि ॥११॥

अन्वयः—जघन्यभे संक्रमणे शरेन्दवः मुहूर्त्ताः, वृहत्सु बाणकृताः मुहूर्त्ताः, समभे खरामसंख्याः मुहूर्त्ताः स्युः। तत्र (क्रमेण) महर्घ-समर्घ-साम्यं फलं ज्ञेयम्। एवं विधुदर्शनेऽपि फलं ज्ञेयम् ॥११॥

भा० टी०—यदि जघन्य संज्ञक नक्षत्र में संक्रान्ति हो तो १५ मुहूर्त्त होता है, और वृहत् संज्ञक नक्षत्र में ४५ मुहूर्त्त तथा सम संज्ञक नक्षत्र में संक्रान्ति हो तो ३० मुहूर्त्त होता है। जब १५ का मुहूर्त्त होता है तो उस संक्रान्ति में अन्न आदि महँगा रहता है। जब ४५ का मुहूर्त्त होता है तो अन्नादि का भाव सस्ता और ३० का मुहूर्त्त हो तो अन्न आदि का भाव समान ही रहता है। इसी प्रकार शुक्लपक्ष में चन्द्रोदय के दिन भी जिस नक्षत्र में चन्द्रोदय हो वह सम, बृहत् और जघन्य संज्ञक में से जो हो उसके अनुसार मुहूर्त्त का ज्ञान कर फल कहना चाहिये ॥११॥

कर्क की संक्रान्ति से वर्ष का विंशोपक बल—

अर्कादिवारे संक्रान्तौ कर्कस्याऽब्दविंशोपकाः ।
दिशो नखा गजाः सूर्या धृत्योऽष्टादश सायकाः ॥ १२ ॥

अन्वयः—अर्कादिवारे कर्कस्य संक्रान्तौ क्रमात् दिशः, नखाः, गजाः, सूर्याः, धृत्यः, अष्टादशसायकाः, अब्दविंशोपकाः स्युः ॥१२॥

भा० टी०—रविवारादि को कर्क की संक्रान्ति हो तो क्रम से १०,२०,८,१२, १८,१८, ५ वर्ष विंशोपक होता है, अर्थात् रवि को १०, सोमवार को २०, भौम को ८, बुध को १२, गुरु को १८, शुक्र को १८ और शनि को ५ विंशोपक होता है ॥१२॥

करण के अनुसार संक्रान्ति की स्थिति और फल—

स्यात्तैतिले नागचतुष्पदे रविः सुप्तो निविष्टस्तु गरादिपञ्चके।
किंस्तुघ्न ऊर्ध्वः शकुनौ सकौलवे नेष्टः समः श्रेष्ठ इहार्घवर्षणे ॥१३॥

अन्वयः—तैतिले नागचतुष्पदे रविः सुप्तः सन् संक्रमितः स्यात्। गरादि-पञ्चके निविष्टः सन् संक्रमितः स्यात्। किंस्तुघ्ने तथा शकुनौ सकौलवे ऊर्ध्वः संक्रमितः स्यात् इह अर्घ-वर्षणे नेष्टः समः श्रेष्ठः स्यात् ॥१३॥

भा० टी०—यदि संक्रान्ति के दिन तैतिल, नाग, चतुष्पद करण हो तो रवि सोये हुए संक्रान्ति करते हैं। और गर, वणिज, विष्टि, बव, वालव करण हो तो बैठे हुए और किंस्तुघ्न, शकुनी तथा कौलव में से कोई हो तो खड़े होकर संक्रान्ति करते हैं। इसका फल अर्घ (अन्नों के भाव) और वर्षा में क्रम से अनिष्ट, सम और श्रेष्ठ होता है। अर्थात् सोये हुए संक्रान्ति में अन्नों का भाव और वर्षा दोनों नहीं अच्छे होंगे, बैठे हुए संक्रान्ति में दोनों समान और उठे हुए संक्रान्ति में दोनों श्रेष्ठ होते हैं ॥१३॥

करणवश संक्रान्ति के वाहन आदि का विचार—

सिंहव्याघ्रवराहरासभगजा वाहद्विषद्घोटकाः
श्वाऽजो गौश्चरणायुधश्च बवतो वाहा रवेः संक्रमे।
वस्त्रं श्वेतसुपीतहारितकपाण्ड्वारक्तकालासितं
चित्रं कम्बलदिग्धनाभमथ शस्त्रं स्याद्भुशुण्डी गदा ॥१४॥
खड्गो दण्डशरासतोमरमथो कुन्तश्च पाशोऽङ्कुशो-
ऽस्त्रं बाणस्त्वथ भक्ष्यमन्नपरमान्नं भैक्षपक्वान्नकम्।
दुग्धं दध्यपि चित्रितान्नगुडमध्वाज्यं तथा शर्करा-
ऽथो लेपो मृगनाभिकुङ्कुममथो पाटीरमृद्रोचनम् ॥१५॥
यावश्चौतुमदो निशाञ्जनमथो कालागुरुश्चन्द्रको
जातिर्दैवतभूतसर्पविहगाः पश्वेणविप्रास्ततः।
क्षत्त्रावैश्यकशूद्रसङ्करभवाः पुष्पं च पुन्नागकं
जातीबाकुलकेतकानि च तथा बिल्वार्कदूर्वाम्बुजम् ॥१६॥
स्यान्मल्लिका पाटलिका जपा च संक्रान्तिवस्त्राशनवाहनादेः।
नाशश्च तद्वृत्त्युपजीविनां च स्थितोपविष्टस्वपतां च नाशः ॥१७॥

अन्वयः—बवतः आरभ्य सिंहव्याघ्रवराहरासभगजाः वाहद्विषद्घोटकाः श्वाऽजो गौश्चरणायुधश्च रवेः संक्रमे वाहाः ज्ञेयाः। तथा श्वेतसुपीत-हारितकपाण्ड्वारक्त-

कालासितं चित्रं कम्वलदिग्धनाभं वस्त्रं ज्ञेयम् । अथ भुशुण्डी गदा खड्गः दण्ड-शरासतोमरं अथो कुन्तः पाशः अंकुशः अस्त्रं बाणः शस्त्रं स्यात् । अथ अन्न परमान्नं भैक्ष्यपक्वान्नकम् दुग्धं दधि अपि चित्रितान्नगुडमध्वाज्यं तथा शर्करा भक्ष्यं ज्ञेयम् । अथ मृगनाभिकुंकुमं अथो पाटीरमृद्रोचनम् यावः च ओतुमदः निशाञ्जनम् अथ कालागुरुः चन्द्रकः लेपः ज्ञेयम् । तथा दैवतभूतसर्पविहगाः पश्वेणविप्राः ततः क्षत्त्रा-वैश्यकशूद्रसङ्करभवाः जातिः ज्ञेया । च पुन्नागकं जातीवाकुलकेतकानि च बिल्वाक-दूर्वाम्बुजम् मल्लिका पाटलिका जपा च पुष्पं ज्ञेयाः । संक्रान्तिवस्त्राशनवाहनादेः नाशः तद्वृत्त्युपजीविनां च नाशः, स्थितोपविष्टस्वपतां च नाशः स्यात् ॥१४-१७॥

भा० टी०—बव आदि करणों में सूर्य की संक्रान्ति होने से क्रम से सिंह, व्याघ्र, वराह (सूअर), गदहा, हाथी, भैंसा, घोड़ा, कुत्ता, भेंड़ा, वृष और मुर्गा ये वाहन होते हैं। सफेद, पीला, हरा, पाण्डुरंग का, लाल, काला, काजल के रंग का, अनेक रंग का, कम्बल, दिशा का वस्त्र, मेघवर्ण का वस्त्र होता है। भुशुंडी, गदा, तलवार, दण्ड, धनुष, तोमर, भाला, पाश, अंकुश, अस्त्र, वाण ये हथियार होते हैं। अन्न, पूआ आदि, भिक्षान्न, पक्वान्न, दूध, दधि, खिचड़ी, गुड़, मधु, घृत, शक्कर ये भोजन होते हैं। कस्तूरी, कुंकुम, चन्दन, मिट्टी, गोरोचन, महावर, मार्जाररज, हल्दी, काजल, कालागुरु, कपूर, ये लेप होते हैं। देवता, भूत, सर्प, पक्षी, पशु, मृग, बिप्र, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णसंकर ये जातियाँ होती हैं। नागकेसर, जाती, वकुल, केतकी, बेल, मंदार, दूर्वा, कमल, मल्लिका, पाटली, अढ़हुल ये पुष्प होते हैं। संक्रान्ति के जो वस्त्र भोजनादि होते हैं, उनका और उन वस्तुओं से जीविका निर्वाह करनेवालों का नाश होता है। और जिस अवस्था में संक्रान्ति लगती है उस अवस्था में स्थित मनुष्यों का भी नाश करती है; अर्थात् बैठे हुए अवस्था में लगे तो बैठे हुओं का, खड़ी अवस्था में खड़े हुए मनुष्यों का और सोती हुई अवस्था में लगे तो सोये हुए मनुष्यों का नाश करती है ॥१४-१७॥

संक्रान्ति के वाहनादि का चक्र—

करण	स्थिति	वाहन	वस्त्र	आयुध	भक्ष्य	लेप	जाति	पुष्प
बव	उपविष्ट	सिंह	श्वेत	भुशुंडी	अन्न	कस्तू.	दैवत	नागके.
बालव	उपविष्ट	व्याघ्र	पीत	गदा	पायस	कुंकुम	भूत	जाती
कौलव	ऊर्ध्व	वाराह	हरित	खड्ग	भैक्ष	चंदन	सर्प	बकुल
तैतिल	सुप्त	गर्दभ	अरुण	दंड	पक्का.	मृद्	पक्षी	केतक
गर	उपविष्ट	गज	आरक्त	धनुष	दुग्ध	गोरो.	पशु	बिल्व
वणिज	उपविष्ट	महिष	श्याम	तोमर	दधि	यावक	मृग	अर्क.
विष्टि	उपविष्ट	अश्व	कृष्ण	कुन्त	चित्रा	ओतु.	विप्र.	दूर्वा
शकुनि	ऊर्ध्व	श्वा	चित्र	पाश	गुड़	हरिद्रा	क्षत्रिय	कमल
नाग	सुप्त	मेष	कंबल	अंकुश	मधु	अंजन	वैश्य	मल्लि.
चतुष्पद	सुप्त	वृष	दिशा	अस्त्र	आज्य	अगरु	शूद्र	पाठ.
किंस्तुघ्न	ऊर्ध्व	मुर्गा	श्याम	बाण	शर्करा	कर्पूर	सङ्कर	जपा

संक्रान्ति और जन्म-नक्षत्र के अनुसार शुभाशुभ फल—

संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतस्त्रिभे स्वभे निरुक्तं गमनं ततोऽङ्गभे ।
सुखं त्रिभे पीडनमङ्गभेंऽशुकं त्रिभेऽर्थहानी रसभे धनागमः ॥१८॥

अन्वयः—संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यतः त्रिभे स्वभे गमनं निरुक्तम्, ततः अङ्गभे सुखम्, ततः त्रिभे पीडनम्, ततः अङ्गभे अंशुकम्, ततः त्रिभे अर्थहानिः, ततः रसभे धनागमः स्यात् ॥१८॥

भा० टी०—जिस नक्षत्र पर संक्रान्ति लगी हो उससे पूर्व के नक्षत्र से तीन नक्षत्र के अन्दर यदि अपना जन्मनक्षत्र हो तो उस मास में कहीं यात्रा करनी होगी । इसके बाद ६ नक्षत्र के अन्दर अपना जन्म-नक्षत्र हो तो उस मास में सुख होता है। इसके बाद ३ नक्षत्र के अन्दर जन्म-नक्षत्र हो तो उस मास में पीड़ा होती है। इसके बाद ६ नक्षत्र के अन्दर अपना नक्षत्र हो तो उस मास में वस्त्र की प्राप्ति होती है। इसके बाद तीन नक्षत्र के अन्दर अपना नक्षत्र हो तो उस मास में द्रव्य की हानि होती है। इसके बाद ६ नक्षत्र के अन्दर अपना जन्म-नक्षत्र हो तो उस मास में द्रव्य का आगमन होता है ॥१८॥

किस कार्य में किस ग्रह का बल लेना चाहिये—

नृपेक्षणं सर्वकृतिश्च सङ्गरः शास्त्रं विवाहो गम-दीक्षणे रवेः ।
वीर्येऽथ तारावलतो विधुर्विधोर्बलाद्रविस्तद्‌बलतः शुभाः परे ॥१९॥

अन्वयः—रवेः (आरभ्य) वीर्ये क्रमेण नृपेक्षणं, सर्वकृतिः, सङ्गरः, शास्त्रं, विवाहः, गमदीक्षणे (भवतः), तारावलतः विधुः शुभः, विधोः बलात् रविः शुभः, तद्‌बलतः परे (ग्रहाः) शुभाः भवन्ति ॥१९॥

भा० टी०—सूर्य बलवान् हों तो राजदर्शन करना चाहिये अर्थात् राजदर्शन में सूर्य का बल लेना चाहिये, सभी कार्यों में चन्द्रमा का बल, मंगल बली हों तो संग्राम करना चाहिये, बुध बली हों तो शास्त्र पढ़ना चाहिये, गुरु बलवान् हों तो विवाह, शुक्र बलवान् हों तो यात्रा और शनि बलवान् हों तो गुरु से दीक्षा लेनी चाहिये। तारा बलवान् हो तो चन्द्रमा, चन्द्रमा बलवान् हों तो सूर्य, और सूर्य बली हो तो भौमादि ग्रह शुभद होते हैं ॥१९॥

क्षयमास और अधिकमास के लक्षण—

स्पष्टार्कसंक्रान्तिविहीन उक्तो मासोऽधिमासः क्षयमासकस्तु ।
द्विसंक्रमस्तत्र विभागयोस्तस्तिथेर्हि मासौ प्रथमान्त्यसंज्ञौ ॥२०॥

अन्वयः—स्पष्टार्कसंक्रान्तिविहीनः मासः अधिमासः उक्तः, तु (पुनः) द्विसंक्रमः मासः क्षयमासकः स्यात् । तत्र तिथेः विभागयोः प्रथमान्त्यसंज्ञौ मासौ स्तः ॥२०॥

भा० टी०—अमावास्या के अन्त से दूसरी अमावास्या के अन्त तक चान्द्र मास होता है। इसमें यदि स्पष्ट सूर्य की संक्रान्ति न हो तो अधिमास और जिस चान्द्र मास में दो संक्रान्ति हों तो क्षयमास होता है। इस क्षयमास में तिथि के विभाग से प्रथम और अन्तिम मास ग्रहण करना चाहिये। अर्थात् तिथि के पूर्वार्ध में किसी का जन्म या मरण हुआ तो वार्षिक कृत्य के लिये पूर्वमास और तिथि के उत्तरार्ध में जन्म-मरणादि हुआ हो तो अग्रिम मास लेना चाहिये। जैसा कि कहा भी है—

तिथ्यर्धप्रथमे पूर्वोऽपरस्मिन्नपरस्तथा ।
मासाविति बुधैश्चिन्त्यौ क्षयमासस्य मध्यगौ ॥ इति ॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ संक्रान्तिप्रकरणम् ॥ ३ ॥

गोचरप्रकरणम्

तत्र जन्मराशितः प्रोक्तनिषिद्धस्थानस्थितेदानींतनग्रहवशेन शुभाशुभनिरूपणं गोचर इत्युच्यते ।

जन्मराशि से गोचरस्थ ग्रहों के शुभाशुभ फल—

सूर्यो रसान्त्ये खयुगेऽग्निनन्दे शिवाक्षयोर्भौम-शनी तमश्च ।
रसाङ्कयोर्लाभशरे गुणान्त्ये चन्द्रोऽम्बराब्धौ गुणनन्दयोश्च ॥ १ ॥
लाभाष्टमे चाद्यशरे रसान्त्ये नगद्वये ज्ञो द्विशरेऽब्धिरामे ।
रसाङ्कयोर्नागविधौ खनागे लाभव्यये देवगुरुः शराब्धौ ॥ २ ॥
द्व्यन्त्ये नवाशेऽद्रिगुणे शिवाहौ शुक्रः कुनागे द्विनगेऽग्निरूपे ।
वेदाम्बरे पञ्चनिधौ गजेषौ नन्देशयोर्भानुरसे शिवाग्नौ ॥ ३ ॥
क्रमाच्छुभो विद्ध इति ग्रहः स्यात् पितुः सुतस्याऽत्र न वेधमाहुः ।
दुष्टोऽपि खेटो विपरीतवेधाच्छुभो द्विकोणे शुभदः सितेऽब्जः ॥ ४ ॥

अन्वयः—(जन्मराशेः सकाशात्) सूर्यः रसान्त्ये, खयुगे, अग्निनन्दे, शिवाक्षयोः, तथा भौम-शनी-तमश्च रसाङ्कयोः, लाभशरे, गुणान्त्ये, च, चन्द्रः अम्बराब्धौ, गुणनन्दयोः, लाभाष्टमे, आद्यशरे, रसान्त्ये, नगद्वये, (तथा) ज्ञः, द्विशरे, अब्धिरामे, रसाङ्कयोः, नागविधौ, खनागे, लाभव्यये, देवगुरुः, शराब्धौ, द्व्यन्त्ये, नवाशे अद्रिगुणे, शिवाहौ, शुक्रः कुनागे, द्विनगे, अग्निरूपे, वेदाम्बरे, पञ्चनिधौ, गजेषौ, नन्देशयोः, भानुरसे, शिवाग्नौ, इति क्रमात् ग्रहः शुभः, विद्धः स्यात् । अत्र पितुः सुतस्य वेधं न आहुः । तथा दुष्टः अपि खेटः विपरीतवेधात् शुभः स्यात् । तथा सिते अब्जः, द्विकोणे शुभदः स्यात् ॥ १-४ ॥

भा० टी०—अपनी जन्मराशि से छठे स्थान में सूर्य शुभ फल देता है और बारहवें स्थान में स्थित ग्रह से विद्ध होता है । अर्थात् छठे स्थान में शुभ फल देता है, यदि बारहवें कोई ग्रह न हो तो इसी प्रकार दशम में शुभद होता है यदि चौथे कोई न हो; तीसरे शुभद होता है यदि नवम में कोई न हो; एकादश में शुभद होता है यदि पाँचवें कोई न हो । इसी प्रकार मंगल, शनि और राहु ६।११।३ स्थानों में शुभद हैं यदि क्रम से ९।५।१२वें स्थानों में कोई न हो तो । चन्द्रमा १०।३।११।१।६।७ वें स्थान में शुभद होता है यदि क्रम से ४।९।८।५।१२।२ स्थानों में कोई ग्रह न हों । बुध २।४।६।८।१०।११ इन स्थानों में शुभद है यदि ५।३।९।१।८।१२ इन स्थानों में कोई ग्रह न हो तो । बृहस्पति ५।२।९।७।११ इन स्थानों में शुभ है यदि ४।१२।१०।३।८ इन स्थानों में कोई न हो तो । शुक्र १।२।३।४।५।८।९।१२।११ इन स्थानों में शुभ है यदि क्रम से ८।७।१।१०।८।५।११।६।३ इन स्थानों में कोई ग्रह न हो तो ।

यहाँ पिता और पुत्र का वेध नहीं होता है अर्थात् सूर्य और शनि का तथा चन्द्रमा और बुध का। दुष्ट (अशुभ) भी ग्रह विपरीत वेध से शुभ फलदायक होता है, अर्थात् वेधस्थान में ग्रह हो और शुभ स्थान में कोई ग्रह हो तो शुभद होता है। और शुक्लपक्ष में चन्द्रमा २।९।५ वें स्थान में भी शुभ होता है ॥ १-४ ॥

दोनों प्रकार के वेधों में मतान्तर—

स्वजन्मराशेरिह वेधमाहुरन्ये ग्रहाधिष्ठितराशितः सः ।
हिमाद्रिविन्ध्यान्तर एव वेधो न सर्वदेशेष्विति काश्यपोक्तिः ॥५॥

अन्वयः—इह (वेधे) अन्ये (आचार्याः) स्वजन्मराशेः वेधं आहुः। सः वेधः ग्रहाधिष्ठितराशितः एव, तथा हिमाद्रिविंध्यान्तर एव ज्ञेयः, सर्वदेशेषु न, इति कश्यपोक्तिः ॥ ५ ॥

भा० टी०—अन्य (नारद आदि) का मत है कि ये दोनों वेध अपनी जन्मराशि से देखना चाहिये। कश्यप मुनि के मत से यह वेध ग्रह जिस राशि पर है उसी राशि से विचार करना चाहिये और हिमालय तथा विन्ध्य पर्वत के मध्यस्थित देशों में ही इस वेध का दोष होता है, सभी देशों में नहीं होता है ॥ ५ ॥

	सूर्य				चन्द्र						भौम. शनि. राहु. केतु.		
शुभ	६	१०	३	११	१०	३	११	१	६	७	६	११	३
वेध स्थान	१२	४	९	५	४	९	८	५	१२	२	९	५	१२

बुध						गुरु					शुक्र								
२	४	६	८	१०	११	५	२	९	७	११	१	२	३	४	५	८	९	१२	११
५	३	६	१	८	१२	४	१२	१०	३	८	८	७	१	१०	९	५	११	६	३

जन्मनक्षत्र और राशि से ग्रहण का फल—

जन्मर्क्षे निधनं ग्रहे जनिभतो घातः क्षतिः श्रीर्व्यथा
चिन्ता सौख्य-कलत्रदौस्थ्य-मृतयः स्युर्माननाशः सुखम् ।
लाभोपाय इति क्रमात्तदशुभध्वस्त्यै जपः स्वर्णगो-
दानं शान्तिरथो ग्रहं त्वशुभदं नो वीक्ष्यमाहुः परे ॥ ६ ॥

अन्वयः—जन्मर्क्षे (ग्रहणे) सति निधनं (स्यात्), तथा जनिभतः घातः, क्षतिः, श्रीः, व्यथा, चिन्ता, सौख्य-कलत्रदौस्थ्य-मृतयः, माननाशः, सुखं, लाभः, अपायः इति क्रमात् स्युः। तदशुभध्वस्त्यै जपः, स्वर्ण-गो-दानं (विधेयम्) शान्तिः कार्या, अथो परे (आचार्याः) अशुभदं ग्रहं नो वीक्ष्यं इति आहुः ॥ ६ ॥

भा० टी०—यदि जन्म-नक्षत्र पर ही ग्रहण लगे तो मरण होता है। जन्मराशि पर लगे तो घात, जन्मराशि से दूसरी राशि पर लगे तो हानि, तीसरे पर लक्ष्मी-

प्राप्ति, चौथी राशि पर व्यथा, पाँचवीं पर चिंता, छठी राशि पर सुख, सातवीं पर स्त्री को कष्ट, आठवीं पर मरण, नवीं पर मान-नाश, दसवीं पर सुख, ग्यारहवीं पर लाभ और बारहवीं राशि पर लगे तो द्रव्य का नाश यह फल क्रम से होता है। इस ग्रहण के अशुभ फल के नाश के लिये जप, सुवर्ण का दान, गोदान और शान्ति करनी चाहिये। दूसरे आचार्यों का कहना है कि अनिष्ट फल देनेवाले ग्रहण को नहीं देखना चाहिये ॥ ६ ॥

चन्द्रबल का विशेष विचार—

पापान्तः पापयुग्द्यूने पापाच्चन्द्रः शुभोऽप्यसन् ।
शुभांशे वाऽधिमित्रांशे गुरुदृष्टोऽशुभोऽपि सन् ॥ ७ ॥

अन्वयः–(यदा) चन्द्रः पापान्तः पापयुक्, पापात् द्यूने (तदा) शुभोऽपि असत्। शुभांशे, अधिमित्रांशे, गुरुदृष्टः (तदा) अशुभोऽपि सत् स्यात् ॥ ७ ॥

भा० टी०—यदि चन्द्रमा पापग्रहों के मध्य में हो, अथवा पापग्रह से युक्त हो, वा पापग्रह से सातवें स्थान में हो तो शुभद होता हुआ भी अशुभ होता है। और चन्द्रमा शुभ ग्रह के नवांश में हो अथवा अधिमित्र[1] के नवांश में हो और गुरु देखता हो तो अशुभ फलदायक चन्द्रमा शुभद होता है ॥ ७ ॥

चन्द्रबल से मास-फल का विचार—

सिताऽसितादौ सद्दुष्टे चन्द्र पक्षौ शुभावुभौ ।
व्यत्यासे चाशुभौ प्रोक्तौ सङ्कटेऽब्जबलं त्विदम् ॥ ८ ॥

अन्वयः—सितासितादौ सद्दुष्टे चन्द्रे उभौ पक्षौ शुभौ ज्ञेयौ, व्यत्यासे च अशुभौ प्रोक्तौ। इदं अब्जवलं सङ्कटे ग्राह्यम् ॥ ८ ॥

भा० टी०—शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को शुभ और कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को चन्द्रमा अशुभ हो तो दोनों पक्ष शुभद होते हैं। यदि इसके विपरीत (अर्थात् शुक्लपक्षादि में अशुभ और कृष्णपक्षादि में शुभ) हों तो दोनों पक्ष अशुभ होते हैं। यह चन्द्रबल सङ्कट में विचारना चाहिये ॥ ८ ॥

१—ग्रहों की मैत्री तीन प्रकार की होती है। १. नैसर्गिक, २. तात्कालिक, और ३. पंचधा। इसमें नैसर्गिक मैत्री विवाह प्रकरण श्लो० २७।२८ में कही है। तात्कालिक मैत्री–जो ग्रह जिस ग्रह से, २।३।४, १०।११। १२ वें स्थान में होता है वह उस ग्रह का मित्र होता है शेष स्थानों में शत्रु होते हैं।

उक्तं—अन्योन्यस्य धनव्ययाय सहजव्यापारबन्धुस्थितास्तत्काले सुहृदः।

पञ्चधा मैत्री—जो ग्रह जिस ग्रह का नैसर्गिक और तात्कालिक दोनों में मित्र हो वह उस ग्रह का अधिमित्र होता है। नैसर्गिक, सम और तात्कालिक मित्र, मित्र होता है। नैसर्गिक, सम, तात्कालिक शत्रु, शत्रु होता है और नैसर्गिक शत्रु तथा तात्कालिक शत्रु अधिशत्रु होता है।

ग्रहों के अशुभ फल के शान्त्यर्थ नव रत्न धारण—

वज्रं शुक्रेऽब्जे सुमुक्ता प्रवालं भौमेऽगौ गोमेदमार्कौ सुनीलम् ।
केतौ वैदूर्यं गुरौ पुष्पकं ज्ञे पाचिः प्राङ्माणिक्यमर्के तु मध्ये ॥ ९ ॥

अन्वयः—प्राक् (आरभ्य क्रमेण) वज्रं शुक्रे, अब्जे सुमुक्ता, भौमे प्रवालं, अगौ गोमेदं, आर्कौ सुनीलं, केतौ वैदूर्यं, गुरौ पुष्पकं, ज्ञे पाचिः, मुद्रिकायां रत्नानि धार्यानि, मध्ये अर्के माणिक्यं धार्यम् ॥ ९ ॥

भा० टी०—एक चौकोर यं बनाकर उसमें नव कोष्ठ कल्पना करके पूर्व में शुक्र के लिये हीरा, अग्निकोण में चन्द्रमा के लिये मोती, दक्षिण में भौम के लिये मूँगा, नैर्ऋत्यकोण में राहु के लिये गोमेद, पश्चिम में शनिके लिये नीलम, वायव्य-कोण में केतु के लिये वैदूर्य (लहमुनिया), उत्तर में गुरु के लिये पुखराज, ईशान-कोण में बुध के लिये पन्ना और मध्य में सूर्य के लिये मानिक धारण करना चाहिये ॥९॥

यंत्रस्वरूप—

बु.	शुक्र	चं.
वृ.	सू.	मं.
के.	श.	रा.

सूर्यादि ग्रहों के रत्न—

माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि गारुत्मकं पुष्पकवज्रनीलम् ।
गोमेदवैदूर्यकमर्कतः स्यू रत्नान्यथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम् ॥१०॥

अन्वयः—अर्कतः (क्रमेण) माणिक्यमुक्ताफलविद्रुमाणि, गारुत्मकं पुष्पकवज्र-नीलं गोमेदवैदूर्यकम् (धार्यम्) । अथो ज्ञस्य मुदे सुवर्णम् धार्यम् ॥१०॥

भा० टी०—सूर्य की प्रसन्नता के लिये मानिक, चन्द्रमा के लिये मोती, मंगल के लिये मूँगा, बुध के लिये पन्ना, गुरु के लिये पुखराज, शुक्रके लिये हीरा, शनि के लिये नीलम, राहु के लिये गोमेद, केतु के लिये वैदूर्य (लहसुनियाँ) और बुध के प्रसन्नतार्थ सोना धारण करना चाहिये ॥१०॥

साधारण रत्न और तारा जानने का प्रकार—

धार्यं लाजावर्तकं राहु-केत्वो रौप्यं शुक्रेन्द्वोश्च मुक्ता गुरोस्तु ।
लोहं मन्दस्यारभान्वोः प्रवालं तारा जन्मर्क्षात् त्रिरावृत्तितः स्यात् ॥११॥

अन्वयः—राहुकेत्वोः (प्रसन्नतार्थं) लाजावर्तकं धार्यम्, शुक्रेन्द्वोः रौप्यं, गुरोश्च मुक्ता तु (पुनः) मन्दस्य लोहं, आरभान्वोः प्रवालं (धार्यम्) । अथ जन्मर्क्षात त्रिरावृत्तितः तारा स्यात् ॥११॥

भा० टी०—राहु और केतु की प्रसन्नता के लिये लाजावर्त्त (रावटी), शुक्र और चन्द्रमा के लिये चाँदी, गुरु के लिये मोती, शनि के लिये लोहा, और मंगल तथा सूर्य के लिये मूँगा धारण करना चाहिये। जन्मनक्षत्र से ३ आवत्ति तारा की होती हैं। अर्थात् जिस दिन तारा देखना हो उस दिन जो नक्षत्र हो उसको अपने जन्म-नक्षत्र से गिनकर उनमें ९ का भाग देने से जो शेष बचे तत्तुल्य तारा को समझे ॥११॥

उदाहरण—जैसे गयाप्रसाद का जन्म-नक्षत्र श्रवण है, और इन्हें आषाढ़ शुक्र २ बुधवार को पुष्य नक्षत्र में किसी कार्य के लिये तारा का विचार करना है तो श्रवण से पुष्य तक १४ संख्या हुई। इसमें ९ का भाग दिया तो शेष ५वीं तारा प्रत्यरि हुई जो कि अशुभ है ॥११॥

ताराओं के नाम—

जन्माख्य-सम्पद्विपदः क्षेम-प्रत्यरि-साधकाः ।
वध-मैत्राऽतिमैत्राः स्युस्तारा नामसदृक्फलाः ॥ १२ ॥

अन्वयः—जन्माख्य-सम्पद्-विपदः क्षेम-प्रत्यरि-साधकाः वध-मैत्राऽतिमैत्राः (ताराः स्युः) नामसदृक्फलाः स्युः ॥१२॥

भा० टी०—जन्म, सम्पद्, विपद्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मैत्र, अतिमैत्र ये नव तारायें हैं। इनका नाम के समान ही फल होता है ॥१२॥

अशुभ ताराओं के लिये दान—

मृत्यौ स्वर्ण-तिलान् विपद्यपि गुडं शाकं त्रिजन्मस्वथो
दद्यात् प्रत्यरितारकासु लवणं सर्वो विपत्प्रत्यरिः ।
मृत्युश्चादिमपर्यये न शुभदोऽथैषां द्वितीयेंऽशका
नादिप्रान्त्यतृतीयका अथ शुभाः सर्वे तृतीये स्मृताः ॥ १३ ॥

अन्वयः—मृत्यौ स्वर्णतिलान् दद्यात्। विपदि गुडं, त्रिजन्मसु शाकं प्रत्यरितारकासु लवणं दद्यात्। अथ आदिमपर्यये विपत्, प्रत्यरिः मृत्युश्च सर्वः न शुभदः। अथ एषां द्वितीये (पर्यये) आदिप्रान्त्यतृतीयकाः अंशकाः न (शुभदाः) अथ तृतीये सर्वे शुभाः स्मृताः ॥१३॥

भा० टी०—मृत्यु (वध तारा) तारा के दोष-शान्त्यर्थ सोना और तिल दान देना चाहिये। विपत् तारा के लिये गुड़ और तीनों आवृत्ति में जन्म तारा के लिये शाक और प्रत्यरि तारा के लिये लवण (नमक) दान देना चाहिये। और पहिली आवृत्ति में विपत्, प्रत्यरि और मृत्यु तारा शुभद नहीं होती हैं। दूसरी आवृत्ति में विपत् तारा का प्रथम चरण और प्रत्यरि तथा मृत्यु तारा का अन्तिम चरण शुभद नहीं होता है। तथा तीसरी आवृत्ति में सभी शुभद होती हैं ॥१३॥

चन्द्रमा की अवस्था लाने का प्रकार—

षष्टिघ्नं गतभं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतम् ।
शराब्धिहृल्लब्धतोऽर्कशेषेऽवस्थाः क्रियाद्विधोः ॥ १४ ॥

अन्वयः—षष्टिघ्नं गतभं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतं शराब्धिहृल्लब्धतः अर्कशेषे क्रियात् विधोः अवस्थाः स्युः ॥१४॥

भा० टी०—जिस दिन चन्द्रमा की अवस्था का विचार करना हो उस दिन जो नक्षत्र हो उसके पूर्व के नक्षत्र को अश्विनी से गिनकर, गिनी हुई संख्या में उस नक्षत्र की भुक्त घटी को जोड़ दे फिर उसे ४ से गुणा कर ४५ का भाग दे, जो लब्धि हो उसमें १२ का भाग दे। जो शेष बचे वही मेष राशि से क्रम से चन्द्रमा की अवस्था होती है ॥१४॥

उदाहरण—जैसे गत नक्षत्र चित्रा है, अश्विनी से गिनने से १४ संख्या हुई, इसे ६० से गुणा किया तो ८४० हुआ, इसमें स्वाती की भुक्त घटी १५ जोड़ दी तो ८५५ हुआ, फिर इसे ४ से गुणा किया तो ३४२० हुआ, इसमें ४५ का भाग दिया तो लब्ध ७६ प्राप्त हुआ इसमें १२ का भाग दिया तो ४ शेष बचा। मेप राशि से गणना करने से चौथी जया अवस्था हुई ॥१४॥

अत्रोपपत्तिः—अथ एकैकस्मिन् राशौ द्वादश द्वादशावस्थाः, तथा च सामान्यतो नक्षत्रभोगः षष्टिघटिकात्मकः इति गतनक्षत्रसंख्या षष्टि गुणा भुक्तघटी युक्ता इष्टघटयः जाता। तथा च षष्टिघटिकात्मकनक्षत्रभोगानुसारेणैकराशिभोगमानं १३५ घटिकाः भवन्ति। अतोऽनुपातः—यदि राशिभोगघटीभिः १३५ द्वादशावस्था लभ्यन्ते तदेष्टघटीभिः किमिति लब्धमवस्थाः $= \frac{(६० \text{ गन} + \text{भुघ}) \times १२}{१३५}$

$= \frac{(६० \text{ गन} + \text{भुघ}) \times ४}{४५}$ अत्र लब्धश्चेद्द्वादशाधिकस्तदा द्वादशापवर्त्तनेन वर्त्तमानअवस्थाप्रमाणं स्यादित्युपपन्नम् ॥१४॥

बारह अवस्थाओं के नाम—

प्रवास-नाशौ मरणं जयश्च हास्यारतिःक्रीडित-सुप्त-भुक्ताः ।
ज्वराख्य-कम्प-स्थिरता अवस्था मेषात्क्रमान्नामसदृक्फलाः स्युः ॥

अन्वयः—प्रवास-नाशौ, मरणं जयः हास्यारति-क्रीडित-सुप्त-भुक्ताः ज्वराख्य-कम्प-स्थिरताः मेपात् क्रमात् अवस्थाः, नामसदृक्फलाः स्युः ॥१५॥

भा० टी०—प्रवास, नाश, मरण, जय, हास्य, रति, क्रीड़ा, सुप्त, भुक्त, ज्वर, कम्प और स्थिरता ये मेष से क्रम से १२ अवस्थायें हैं, अर्थात् मेष राशिवाले को प्रवासादि, वृष राशिवाले को नाशादि इत्यादि क्रम से सभी राशियों में जानना। इनका फल नाम के सदृश होता है ॥१५॥

ग्रहों की औषधियाँ और दक्षिणा—

लाजा-कुष्ठ-बला-प्रियङ्गु-घनसिद्धार्थैर्निशादारुभिः
पुंखालोध्रयुतैर्जलैर्निगदितं स्नानं ग्रहोत्थाघहृत् ।
धेनुः कम्बुररुणो वृषश्च कनकं पीताम्बरं घोटकः
श्वेतो गौरसिता महासिरज इत्येता रवेर्दक्षिणाः ॥ १६ ॥

अन्वयः—लाजाकुष्ठवलाप्रियंगुघनसिद्धार्थैः निशादारुभिः पुङ्खालोध्रयुतैः जलैः ग्रहोत्थावहृत् स्नानं निगदितम् । धेनुः, कम्बु, अरुणो वृषः, च कनकं, पीताम्बरं, श्वेतः घोटकः, असिता गौः, महासिः, अजः इति रवेः दक्षिणाः ज्ञेयाः ॥१६॥

भा० टी०—लज्जावती, कुट, वरियारा, नागरमोथा, सरसों, हल्दी, देवदारु, सरफोंका, लोध इन औषधियों से युक्त जल से स्नान करने से सूर्यादि ग्रहों के दुष्ट फल शान्त हो जाते हैं; और रवि के लिये गौ, चन्द्र के लिये शंख, भौम के लिये लाल बैल, बुध के लिये सोना, गुरु के लिये पीताम्बर, शुक्र के लिये सफेद घोड़ा, शनि के लिये काली गौ, राहु के लिये तलवार और केतु के लिये बकरा की दक्षिणा देवे ॥१६॥

ग्रहों के राशि-प्रवेश से फ़ल देने का समय

सूर्यारसौम्यास्फुजितोऽक्ष-नाग-सप्ताद्रिघस्त्रान् विधुरग्निनाडीः ।
तमोयमेज्यास्त्रिरसाऽश्विमासान् गन्तव्यराशेः फलदाः पुरस्तात् ॥१७॥

अन्वयः—सूर्यारसौम्यास्फुजितः गन्तव्यराशेः पुरस्तात् क्रमेण, अक्ष-नाग-सप्ताद्रिघस्त्रान् फलदाः स्युः । विधुः अग्निनाडीः, तमोयमेज्याः त्रिरसाश्विमासान् पुरस्तात् फलदाः भवन्ति ॥१७॥

भा० टी०—सूर्य जिस राशि पर जानेवाला है उस राशि सम्बन्धी शुभाशुभ फल ५ दिन पहले ही से देने लगता है, मंगल ८ दिन, बुध ७ दिन और शुक्र ७ दिन, चन्द्रमा ३ घटी, राहु ३ मास, शनि ६ मास और गुरु २ मास पहिले से फल देने लगता है ॥१७॥

दुष्ट योग आदि के दान—

दुष्टे योगे हेमचन्द्रे च शंखं धान्यं तिथ्यर्धे तिथौ तण्डुलांश्च ।
वारे रत्नं भे च गां हेम नाड्यां दद्यात्सिन्धूत्थं च तारासु राजा ॥१८॥

अन्वयः—योगे दुष्टे हेम, च (पुनः) चन्द्रे शङ्खं, तिथ्यर्धे धान्यं, तिथौ तंडुलान्, च (पुनः) वारे रत्नं, भे गां, नाड्यां हेम, तारासु राजा सिन्धूत्थं दद्यात् ॥१८॥

भा० टी०—किसी समय यदि कोई योग खराब हो तो उसके दोष की निवृत्ति के लिये सुवर्ण का दान कर दे, चन्द्रमा खराब हों तो शंख, करण खराब हो तो धान्य, तिथि खराब हो तो चावल, वार खराब हो तो रत्न, नक्षत्र खराव हो तो गौ, नाड़ी (नक्षत्र की) खराव हो तो सोना और तारा अनिष्ट हो तो लवण दान कर देवे ॥१८॥

राशि के अनुसार ग्रहों के फल का समय और
जन्म-नक्षत्र से वार के अनुसार मास-फल—

राश्यादिगौ रवि-कुजौ फलदौ सितेज्यौ
मध्ये सदा शशिसुतश्चरमेऽब्जमन्दौ

अध्वाऽन्न-वह्निभय-सन्मति-वस्त्र-सौख्य-
दुःखानि मासि जनिभे रविवासरादौ ॥ १६ ॥

अन्वयः—राश्यादिगौ रविकुजौ फलदौ, सितेज्यौ मध्ये फलदौ, शशिसुतः सदा फलदः, अब्जमन्दौ चरमे फलदौ। तथा मासि रविवासरादौ जनिभे क्रमेण अध्वान्नवह्निभयसन्मति-वस्त्र-सौख्य-दुःखानि (भवन्ति) ॥१९॥

भा० टी०—सूर्य और मंगल राशि के आदि में ही उस राशि के शुभाशुभ फल को देते हैं। शुक्र और गुरु राशि के मध्य में, बुध सर्वदा, चन्द्रमा और शनि राशि के अन्त में फल देते हैं। और रविवारादि को मास में अपना जन्म-नक्षत्र हो तो क्रम से अर्थात् रविवार को हो तो उस मास में यात्रा करनी होगी, चन्द्रवार को हो तो अन्न-प्राप्ति, मंगलवार को हो तो अग्निभय, बुधवार को हो तो उत्तम बुद्धि होगी, गुरुवार को हो तो वस्त्र-प्राप्ति, शुक्रवार को हो तो सुख और शनिवार को हो तो दुःख होता है ॥१९॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ गोचरप्रकरणम् ॥ ४ ॥

प्रत्येक ग्रह का दान-पदार्थ—मन्त्र और जप-संख्या

सूर्यदानम्	चन्द्रदानम्	भौमदानम्	बुधदानम्	बृहस्पति-दानम्	शुक्रदानम्	शनिदानम्	राहुदानम्	केतुदानम्
माणिक्य	वंशपात्र	मूँगा-पृथ्वी	कांस्यपात्र	पीला धान्य	सफेद चन्दन	नीलम तिल	[illegible]	कम्बलकस्तूरी
गेहूँ, गुड़	चावल	मसूर की दाल	हरा वस्त्र	पीला वस्त्र सोना	सफेद वस्त्र	मापान्न तैल	मापान्न सुवर्ण नाग	मापान्न
सवत्सा गौ	सफेद वस्त्र	गेहूँ	हाथी दाँत, घी	घी,पीला फूल	चावल	काला वस्त्र	नील वस्त्र गोमेद	वैदूर्य
कमलपुष्प	सफेद चन्दन	लाल बैल	मूँगा-पन्ना	पीला फल	सफेद पुष्प	कुलथी-लाक्षा	कृष्ण पुष्प	कृष्ण पुष्प
नूतन गृह	सफेद पुष्प	लालचन्दनगुड़	सोना	पुखराज	चाँदी-हीरा	भैंस	खड्ग-तिल	तिल तैल
लाल चन्दन	चीनी, चाँदी	लाल वस्त्र	सभी फूल रत्न	हल्दी	घी-सुवर्ण	काला पुष्प	तैल-लौह	रत्न-सुवर्ण
लाल वस्त्र	सफेद बैल घी	लाल फूल	कपूर पुस्तक	पुस्तक-मधु,	सफेद घोड़ा, दधि	उपानह	शूर्प, कम्बल	लोहा-बकरा
सोना ताँबा	शङ्ख-दधि	सोना-ताँबा	अनेक फल	लवण-शर्करा	सुगंधि-द्रव्य	कस्तूरी सुवर्ण	सतिल ताम्र-पात्र	शस्त्र
केसर	मोती, कपूर	केसर कस्तूरी	षड्रस भोज्य पदार्थ	भूमि-छत्र	शर्करा, गौ, भूमि	काली गौ	सुवर्ण रत्न	सप्तधान्य
वर्ण-दक्षिणा	वर्ण-दक्षिणा	वर्ण-दक्षिणा	वर्ण-दक्षिणा	वर्ण-दक्षिणा	वर्ण-दक्षिणा	वर्ण-दक्षिणा	वर्ण-दक्षिणा	वर्ण-दक्षिणा
ज. सं. ७०००	ज. सं. ११०००	ज. सं. १००००	ज. सं. ९०००	ज. सं. १९०००	ज. सं. १६०००	ज. सं. २३०००	ज. सं. १८०००	ज. सं. १८०००
ओं घृणिः सूर्याय नमः	ओं सों सोमाय नमः	ओं अं अंगारकायनमः	ओं बुं बुधाय नमः	ओं बृं बृहस्पतयेनमः	ओं शुं शुक्रायनमः	ओं शं शनैश्चरायनम	ओं रां राहवे नमः	ओं कें केतवे नमः

संस्कारप्रकरणम्[1]

प्रथम रजोदर्शन में शुभ समय—

आद्यं रजः शुभं माघ-मार्ग-राधेष-फाल्गुने ।
ज्येष्ठ-श्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा ॥ १ ॥

अन्वयः—माघ-मार्ग-राधेष-फाल्गुने ज्येष्ठ-श्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा आद्यं रजः शुभम् ॥ १ ॥

भा० टी०—यदि प्रथम रजोदर्शन (मासिक धर्म) माघ, मार्गशीर्ष, वैशाख, आश्विन, फाल्गुन, ज्येष्ठ, श्रावण, इन मासों के शुक्लपक्ष में शुभ वार में श्रेष्ठ लग्नों में और दिन में हो तो शुभद होता है ॥ १ ॥

रजोदर्शन में नक्षत्र-फल—

श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे ।
मध्यं च मूलादितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत् ॥ २ ॥

अन्वयः—श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे आद्यं रजः शुभं स्यात् । मूलादितिभे पितृमिश्रे मध्यं स्यात् । परेषु असत् स्यात् ॥ २ ॥

भा० टी०—श्रवण-धनिष्ठा, शतभिषा, मृदु संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में सफेद वस्त्र पहिने हुए प्रथम रजोदर्शन हो तो श्रेष्ठ फल होता है। मूल, पुनर्वसु, मघा और मिश्र संज्ञक नक्षत्र में हो तो मध्यम होता है। इससे भिन्न नक्षत्रों में हो तो अशुभ होता है ॥ २ ॥

रजोदर्शन में निषिद्ध समय—

भद्रा-निद्रा-संक्रमे दर्शरिक्तासन्ध्याषष्ठीद्वादशीवैधृतेषु ।
रोगेऽष्टम्यां चन्द्रसूर्योपरागे पाते चाद्यं नो रजोदर्शनं सत् ॥ ३ ॥

अन्वयः—भद्रा-निद्रा-संक्रमे दर्शरिक्तासन्ध्याषष्ठीद्वादशी-वैधृतेषु, रोगेऽष्टम्यां, चन्द्रसूर्योपरागे, पाते च आद्यं रजोदर्शनं नो सत् ॥ ३ ॥

भा० टी०—भद्रा में, सोई हुई अवस्था में, संक्रान्ति के दिन, अमावास्या, ४।९।१४ तिथि में तथा संध्या समय, षष्ठी और १२ तिथि को, वैधृति योग में, रोग में, ८ तिथि को, चन्द्र-सूर्य के ग्रहण में, व्यतीपात योग में प्रथम रजोदर्शन शुभद नहीं होता है ॥ २ ॥

१—तत्र संस्क्रियतेऽनेन श्रौतेन वा कर्मणा स्मार्तेन वा पुरुष इति संस्कारः स्वीयास्वीयजातौ सामान्यविशेषविहितवैदिककर्मानुष्ठानद्वाराऽदृष्टविशेषाधायक इति यावत्। लक्षणया तदर्थोक्तदिनशुद्ध्यादिकं संस्कारशब्देनोच्यते।

रजस्वला के स्नान का मुहूर्त्त—

हस्ताऽनिलाश्विमृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैः
शाक्रान्वितैः शुभतिथौ शुभवासरे च ।
स्नायादथार्तववती मृगपौष्णवायु-
हस्ताश्विधातृभिररं लभते च गर्भम् ॥ ४ ॥

अन्वयः—हस्तानिलाश्विमृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैः शाक्रान्वितैः शुभतिथौ शुभवासरे च आर्तववती स्नायात् । तथा मृगपौष्णवायुहस्ताश्विधातृभिः अरं (शीघ्रं) गर्भं लभते ॥ ४ ॥

भा० टी०—हस्त, स्वाती, अश्विनी, मृगशिरा, अनुराधा, धनिष्ठा, ध्रुव संज्ञक और ज्येष्ठा नक्षत्रों में, शुभ तिथि और शुभ वार में ऋतुमती स्नान करे। तथा मृगशिरा, रेवती, स्वाती, हस्त, अश्विनी और रोहिणी नक्षत्रों में स्नान करे तो शीघ्र गर्भ धारण करती है ॥ ४ ॥

गर्भाधान में त्याज्य पदार्थ—

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं
दास्रं पौष्णमघोपरागदिवसान् पातं तथा वैधृतिम् ।
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवा च परिघाद्यर्धं स्वपत्नीगमे
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥ ५ ॥

अन्वयः—त्रिविधं गण्डान्तं त्यजेत्, निधनजन्मर्क्षे च मूलान्तकं दास्रं, पौष्णमघोपरागदिवसान्, पातं तथा वैधृतिं, पित्रोः श्राद्धदिनं, दिवा च (पुनः) परिघाद्यर्धं, उत्पातहतानि भानि, जन्मर्क्षतः मृत्युभवनम् तथा पापभं, स्वपत्नीगमे त्यजेत् ॥ ५ ॥

भा० टी०—अपनी स्त्री के समागम (गर्भाधान) में तीनों गण्डान्त (तिथि-लग्न-नक्षत्र गण्डान्त विवाहप्रकरणोक्त ४३ श्लो०), वध तारा, जन्म-नक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, मघा, ग्रहण का दिन, व्यतीपात और वैधृति योग, माता-पिता का श्राद्धदिन, दिन में, परिघ योग का पूर्वार्ध, उत्पात से हत नक्षत्र, जन्म-राशि से अष्टम लग्न तथा पापग्रह से युक्त लग्न और नक्षत्र इन सभी को त्याग देना चाहिये ॥ ५ ॥

गर्भाधान का मुहूर्त्त—

भद्राषष्ठीपर्वरिक्ताश्च सन्ध्याभौमार्कार्कीनाद्यरात्रीश्चतस्रः ।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्रह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे सत् ॥ ६ ॥

अन्वयः—भद्राषष्ठीपर्वरिक्ताः च (तथा) सन्ध्याभौमार्कार्कीन्, आद्यरात्रीः चतस्रः (स्वपत्नीगमे) त्यजेत् । त्र्युत्तरेन्द्वर्कमैत्रब्रह्मस्वातीविष्णुवस्वम्बुपे गर्भाधानं सत् स्यात् ॥ ६ ॥

भा० टी०—भद्रा, षष्ठी, पर्व[1] के दिन (८।१४।३०।१५ और रवि संक्रान्ति का दिन), रिक्ता तिथि तथा सन्ध्याकाल, भौम, रवि, शनि, इन वारों को, तथा ऋतुकाल से चार रात्रि पर्यन्त इन सभी पदार्थों को गर्भाधान में त्याग देना चाहिये। तीनों उत्तरा, मृगशिरा, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्र में गर्भाधान करना शुभद होता है॥ ६ ॥

गर्भाधान में लग्नशुद्धि—

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभैश्च पापैस्त्र्यायारिगैः पुंग्रहदृष्टलग्ने ।
ओजांशगेऽब्जेऽपि च युग्मरात्रौ चित्रादितीज्याश्विषु मध्यमं स्यात् ॥७॥

अन्वयः—केन्द्रत्रिकोणेषु शुभैः पापैः त्र्यायारिगैः पुंग्रहदृष्टलग्ने, अब्जेऽपि ओजांशगे च (तथा) युग्मरात्रौ गर्भाधानं शुभम्। चित्रादितीज्याश्विषु मध्यमं स्यात् ॥ ७ ॥

भा० टी०—शुभ ग्रह लग्न से केन्द्र (१।४।७।१०) त्रिकोण (५।९)स्थान में हों और पापग्रह ३।११।६ स्थान में हों, पुरुष ग्रह[2] लग्न को देखता हो, चन्द्रमा विषम राशि के नवमांश में हो तथा रजोदर्शन से सम (६।८।१०।१२ आदि)रात्रि हो तो ऐसे लग्न में गर्भाधान श्रेष्ठ होता है। चित्रा-पुनर्वसु-पुष्य-अश्विनी इन नक्षत्रों में गर्भाधान करना मध्यम होता है ॥ ७ ॥

सीमन्त संस्कार का मुहूर्त्त—

जीवार्कारदिने मृगेज्यनिर्ऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभैः
रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिर्मासाधिपे पीवरे ।
सीमन्तोऽष्टमषष्ठमासि शुभदैः केन्द्रत्रिकोणे खलै-
र्लाभारित्रिषु वा ध्रुवान्त्यसदहे लग्ने च पुंभांशके ॥ ८ ॥

अन्वयः—जीवार्कारदिने, मृगेज्यनिर्ऋतिश्रोत्रादितिब्रध्नभैः, रिक्तामार्करसाष्टवर्ज्यतिथिभिः, मासाधिपे पीवरे, अष्टमषष्ठमासि, शुभदैः केन्द्रत्रिकोणे, खलैः लाभारित्रिषु वा ध्रुवान्त्यसदहे, पुंभांशके लग्ने सीमन्तः शुभः स्यात् ॥ ८ ॥

भा० टी०—गुरुवार, रविवार, भौमवार, इन वारों में तथा मृगशिरा, पुष्य, मूल, श्रवण, पुनर्वसु, हस्त नक्षत्रों में, रिक्ता, अमावास्या, द्वादशी, षष्ठी, अष्टमी इनसे भिन्न तिथियों में, मास के स्वामी बलवान् हों, गर्भाधान से आठवें या छठे मास में, शुभग्रह केन्द्र, त्रिकोण में और पापग्रह ३।६।११ स्थान में हों ऐसे पुरुष

१—चतुर्दश्यष्टमी चैव, अमावास्या च पूर्णिमा।
पर्वाण्येतानि राजेन्द्र, रविसंक्रान्तिरेव च ॥

२—बुधसूर्यसुतौ नपुंसकाख्यौ शशिशुक्रौ युवती नराश्च शेषाः ॥इति ॥
बुध, शनि ये नपुंसक, चन्द्रमा-शुक्र स्त्री और शेष पुरुष ग्रह हैं।

ग्रह के लग्न और नवमांश में सीमन्त-संस्कार करना चाहिये। अथवा ध्रुव संज्ञक, रेवती नक्षत्र और शुभ ग्रह के वार में भी शुभद होता है ॥ ८ ॥

गर्भ के मासों के स्वामी और चन्द्रबल का विचार—

मासेश्वराः सित-कुजेज्य-रवीन्दु-सौरि-
चन्द्रात्मजास्तनुप-चन्द्र-दिवाकराः स्युः ।
स्त्रीणां विधोर्बलमुशन्ति विवाह-गर्भ-
संस्कारयोरितरकर्मसु भर्तुरेव ॥ ९ ॥

अन्वयः—सित-कुजेज्य-रवीन्दु-सौरि-चन्द्रात्मजाः, तनुपचन्द्र-दिवाकराः मासेश्वराः स्युः । विवाह-गर्भसंस्कारयोः स्त्रीणां विधोः बलं उशन्ति। इतरकर्मसु भर्तुः एव विधोः बलम् उशन्ति ॥ ९ ॥

भा० टी०—गर्भ के पहिले मास का स्वामी शुक्र, दूसरे का भौम, तीसरे का गुरु, चौथे का रवि, पाँचवें का चन्द्रमा, छठे का शनि, सातवें का बुध, आठवें का गर्भाधान-काल के लग्न का स्वामी, नवें मास का चन्द्रमा और दशम मास का सूर्य ये मासेश होते हैं। तथा विवाह और गर्भ संस्कार में स्त्री का चन्द्रबल और अन्य कार्यों में पुरुष का चन्द्रबल देखना चाहिये ॥ ९ ॥

पुंसवन संस्कार और गर्भरक्षार्थ विष्णुपूजन का मुहूर्त—

पूर्वोदितैः पुंसवनं विधेयं मासे तृतीये त्वथ विष्णुपूजा ।
मासेऽष्टमे विष्णुविधातृजीवैर्लग्ने शुभे मृत्युगृहे च शुद्धे ॥१०॥

अन्वयः—पूर्वोदितैः (सीमन्तोक्तैः नक्षत्रादिभिः) तृतीये मासे पुंसवनं विधेयम्। अथ अष्टमे मासे विष्णविधातृजीवैः शुभे लग्ने मृत्युगृहे शुद्धे विष्णुपूजा विधेया ॥१०॥

भा० टी०—पूर्वोक्त, सीमन्त संस्कार में कहे हुए तिथि वार नक्षत्र लग्नादि में गर्भाधान से तीसरे मास में पुंसवन संस्कार करना चाहिये। इसके बाद आठवें मास में श्रवण, रोहिणी, पुष्य नक्षत्र में शुभ लग्न में लग्न से अष्टम स्थान शुद्ध हो ऐसे लग्न में विष्णु की पूजा गर्भरक्षार्थ करनी चाहिये ॥१०॥

जातकर्म और नामकरण संस्कार का मुहूर्त—

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि ।
एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु स्यात् ॥११॥

अन्वयः—पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि एकादशे अपि (वा) द्वादशके घस्रे, मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषु शिशोः तत् (जन्मसमयातिक्रान्तं) जातकर्मादि विधेयम् ॥११॥

भा० टी०—पर्वदिन और रिक्ता से भिन्न तिथियों में शुभ दिन में जन्म से ग्यारहवें अथवा बारहवें दिन में मृदु संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, चर संज्ञक नक्षत्रों में बालक का जातकर्म और नामकरण संस्कार करना चाहिये ॥११॥

सूतिका के स्नान का मुहूर्त—

पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु सूती-
स्नानं समित्रभरवीज्यकुजेषु शस्तम् ।
नार्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूल-
त्वाष्ट्रे ज्ञसौरिवसुषड्विरिक्ततिथ्याम् ॥१२॥

अन्वयः—पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु समित्रभरवीज्यकुजेषु सूतीस्नानं शस्तं स्यात् । आर्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूलत्वाष्ट्रे-ज्ञसौरिवसुषड्विरिक्ततिथ्यां न शस्तम् ॥१२॥

भा० टी०—रेवती, ध्रुव संज्ञक, मृगशिरा, हस्त, स्वाती, अश्विनी, अनुराधा इन नक्षत्रों में रवि, गुरु, भौम वार को सूतिका का स्नान कराना श्रेष्ठ होता है। तथा आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, मिश्र संज्ञक, मूल, चित्रा इन नक्षत्रों में बुध, शनिवार को तथा ८।६।१२।४।९।१४ इन तिथियों में सूतिका का स्नान कराना शुभद नहीं होता है तथा इससे भिन्न तिथि वार नक्षत्रों में मध्यम होता है॥१२

बालक के दाँत निकलने का फल—

मासे चेत्प्रथमे भवेत् सदशनो बालो विनश्येत् स्वयं
हन्यात् स क्रमतोऽनुजात-भगिनीमात्रग्रजान् द्व्यादिके ।
षष्ठादौ लभते हि भोगमतुलं तातात् सुखं पुष्टतां
लक्ष्मीं सौख्यमथो जनौ सदशनो वोर्ध्वं स्वपित्रादिहा ॥१३॥

अन्वयः—चेत् प्रथमे मासे बालः सदशनः भवेत् (तदा) सः स्वयं विनश्येत् । द्व्यादिके मासे क्रमतः अनुजातभगिनीमात्रग्रजान् हन्यात् । षष्ठादौ (मासे क्रमेण) अतुलं भोगं, तातात्सुखं, पुष्टतां, लक्ष्मीं, सौख्यं लभते । अथो जनौ चेत् सदशनः तदा बालः स्वपित्रादिहा भवति ॥१३॥

भा० टी०—यदि पहले मास में बालक को दाँत निकल आवे तो वह बालक स्वयं नष्ट हो जाता है। दूसरे मास में छोटे भाई का, तीसरे मास में बहिन का, चौथे मास में माता का और पाँचवें मास में बड़े भाई का नाश करता है। छठे मास में अत्यंत सुख, सातवें मास में पिता से सुख, आठवें मास में पुष्ट होता है। नवें मास में लक्ष्मी की प्राप्ति, दशम मास में सुख और आगे के मासों में सुखी होता है। तथा दाँत निकले ही हुए जन्म हो अथवा जन्म के बाद ऊपर की पंक्ति में दाँत निकले तो पिता आदि का नाश करता है ॥१३॥

पालना झुलाने का मुहूर्त—

दोलारोहेऽर्कभात् पञ्च-शर-पञ्चेषु-सप्तभैः ।
नैरुज्यं मरणं कार्श्यं व्याधिः सौख्यं क्रमाच्छिशोः ॥१४॥

अन्वयः—दोलारोहे अर्कभात् पञ्च-शर-पञ्चेषु-सप्तभैः क्रमात् शिशोः नैरुज्यं, मरणं, कार्श्यं, व्याधिः, सौख्यं स्यात् ॥१४॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से पाँच नक्षत्र में यदि पहली वार बालक को झूला झुलावे तो आरोग्य रहता है। इसके बाद के पाँच नक्षत्रों में मृत्यु, इसके आगे के पाँच नक्षत्रों में दुर्बलता, इसके आगे के पाँच नक्षत्रों में व्याधि, इसके आगे के सात नक्षत्रों में सुख होता है ॥१४॥

दोला (पालना) झुलाने और बाहर लाने का मुहूर्त—

दन्तार्कभूपधृतिदिङ्मितवासरे स्याद्
वारे शुभे मृदु-लघु-ध्रुवभैः शिशूनाम् ।
दोलाधिरूढिरथ निष्क्रमणं चतुर्थ-
मासे गमोक्तसमयेऽर्कमितेऽह्नि वा स्यात् ॥१५॥

अन्वयः—दन्तार्कभूपधृतिदिङ्मितवासरे, शुभे वारे मृदु-लघु-ध्रुवभैः शिशूनां दोलाविरूढिः स्यात्। अथ चतुर्थमासे गमोक्तसमये वा अर्कमिते अह्नि शिशोः निष्क्रमणं स्यात् ॥१५॥

भा० टी०—जन्म से ३२, १२,१६, १८,१० वें दिन, शुभ ग्रह के वार में, मृदु संज्ञक,लघु संज्ञक और ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में बालक को पालना पर झुलाना चाहिये। और चौथे मास में यात्रोक्त तिथि वार नक्षत्रों में अथवा १२ वें दिन बालक को घर से बाहर लाना शुभद होता है ॥१५॥

सूतिका के जलपूजन का मुहूर्त—

कवीज्यास्तचैत्राधिमासे न पौषे जलं पूजयेत् सूतिका मासपूर्तौ ।
बुधेन्द्वीज्यवारे विरिक्ते तिथौ हि श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैर्ऋत्यमैत्रैः ॥१६॥

अन्वयः—कवीज्यास्तचैत्राधिमासे पौषे मासपूर्तौ (अपि) सूतिका जलं न पूजयेत्। बुधेन्द्वीज्यवारे विरिक्ते तिथौ श्रुतीज्यादितीन्द्वर्कनैर्ऋत्यमैत्रैः जलं पूजयेत् ॥ १६ ॥

भा० टी०—शुक्र, गुरु के अस्त समय में, चैत्र मास तथा अधिकमास और पौष मास में मास पूरा होने पर भी सूतिका जल का पूजन न करे। और बुध, चन्द्र, गुरु इन वारों में तथा श्रवण, पुष्य, पुनर्वसु, मृगशिरा, हस्त, मूल और अनुराधा नक्षत्रों में जल का पूजन करे ॥१६॥

अन्नप्राशन का मुहूर्त—

रिक्तानन्दाष्टदर्शं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारान्
लग्नं जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं मीनमेषालिकं च ।
हित्वा षष्ठात् समे मास्यथ हि मृगदृशां पञ्चमादोजमासे
नक्षत्रैः स्यात् स्थिराख्यैः समृदु-लघु-चरैर्बालकाऽन्नाशनं सत् ॥१७॥

अन्वयः—अथ रिक्तानन्दाष्टदर्शं, हरिदिवसं, सौरिभौमार्कवारान्, जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं, मीनमेषालिकं च हित्वा, षष्ठात समे मासि, मृगदृशां पञ्चमात् ओजमासे समृदु-लघु-चरैः स्थिराख्यैः नक्षत्रैः बालकाऽन्नाशनं सत् स्यात् ॥१७॥

भा० टी०—रिक्ता, नन्दा, अष्टमी, अमावास्या, द्वादशी इन तिथियों को, शनि, भौम, रवि इन वारों को, जन्मराशि और जन्मलग्न से अष्टम लग्न अथवा उसका नवमांश, मीन, मेष, वृश्चिक लग्नों को छोड़कर शेष तिथि, वार और लग्नों में छठे मास से सम मासों में बालकों का और पाँचवें से विषम मासों में कन्याओं का मृदु, लघु, चर और स्थिर संज्ञक नक्षत्रों में अन्नप्राशन करना शुभद होता है ॥१७॥

अन्नप्राशन की लग्नशुद्धि—

केन्द्रत्रिकोणसहजेषु शुभैः खशुद्धे लग्ने त्रिलाभरिपुगैश्च वदन्ति पापैः ।
लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं प्रशस्तं मैत्राम्बुपानिलजनुर्भमसच्च केचित् ।१८।

अन्वयः—केन्द्रत्रिकोणसहजेषु शुभैः, खशुद्धे त्रिलाभरिपुगैः पापैः (एवम्भूते लग्ने) अन्नाशनं सत् स्यात् । लग्नाष्टषष्ठरहितं शशिनं प्रशस्तं प्रवदन्ति । केचित् (आचार्याः) मैत्राम्बुपानिलजनुर्भं असत् वदन्ति ॥१८॥

भा० टी०—केन्द्र और त्रिकोण स्थान में शुभ ग्रह हों, लग्न से दशम स्थान शुद्ध हो तथा ३।११।६ स्थानों में पापग्रह हों ऐसे लग्न में अन्नप्राशन करना चाहिये । और चन्द्रमा लग्न, छठे और आठवें स्थान को छोड़कर शेष स्थानों में हो । कोई-कोई आचार्य अनुराधा, शतभिषा, स्वाती और जन्म-नक्षत्र में अन्नप्राशन अशुभ कहते हैं ॥१८॥

अन्नप्राशन में ग्रहस्थितिवश फल—

क्षीणेन्दु-पूर्णचन्द्रेज्य-ज्ञ-भौमाऽर्का-ऽऽर्कि-भार्गवैः ।
त्रिकोणव्ययकेन्द्राष्टस्थितैरुक्तं फलं ग्रहैः ॥ १९ ॥
भिक्षाशी यज्ञकृद्दीर्घजीवी ज्ञानी च पित्तरुक् ।
कुष्ठी चान्न-क्लेश-वातव्याधिमान् भोगभागिति ॥ २० ॥

अन्वयः—क्षीणेन्दु-पूर्णचन्द्रेज्य-ज्ञ-भौमाऽर्काऽऽर्किभार्गवैः त्रिकोणव्ययकेन्द्राष्टस्थितैः ग्रहैः (क्रमेणः) भिक्षाशी, यज्ञकृत्, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पित्तरुक्, कुष्ठी च अन्नक्लेश-वातव्याधिमान्, भोगभाग्, इति उक्तं फलं भवति ॥१९-२०॥

भा० टी०—क्षीण चन्द्रमा, पूर्णचन्द्रमा, गुरु, बुध, भौम, सूर्य, शनि, शुक्र ये यदि अन्नप्राशनकालिक लग्न से ९।५।१२।१।४।७।८ स्थानों में से किसी स्थान में हों तो क्रम से भिक्षा का अन्न खानेवाला, यज्ञ करनेवाला, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पित्तरोगी, कुष्ठी (कुष्ठ रोग से युक्त), अन्न के क्लेश से युक्त, वातरोगी, भोग को भोगनेवाला होता है। अर्थात् उक्त स्थानों में से किसी स्थान में

क्षीण चन्द्रमा हो तो भिक्षा माँगकर खानेवाला, पूर्णचन्द्र हो तो यज्ञ करनेवाला होता है। इसी प्रकार और ग्रहों का भी जानना ॥१९-२०॥

बालक को भूमिपर बैठाने का मुहूर्त—

पृथ्वीं वराहमभिपूज्य कुजे विशुद्धे-
ऽरिक्ते तिथौ व्रजति पञ्चममासि बालम् ।
बद्ध्वा शुभेऽह्नि कटिसूत्रमथ ध्रुवेन्द्र-
ज्येष्ठर्क्ष-मैत्र-लघुभैरुपवेशयेत् कौ ॥ २१ ॥

अन्वयः—पृथ्वीं, वराहं अभिपूज्य कुजे विशुद्धे अरिक्ते तिथौ पञ्चममासि व्रजति 'सति' शुभेऽह्नि ध्रुवेन्दु-ज्येष्ठर्क्ष-मैत्र-लघुभैः कटिसूत्रं वद्ध्वा बालं कौ उपवेशयेत् ॥२१॥

भा० टी०—पाँचवें मास में पृथ्वी और वराह का पूजन करके मंगल बलवान् हों, रिक्ता को छोड़कर अन्य तिथियों में, शुभ दिन में, ध्रुव संज्ञक,मृगशिरा, ज्येष्ठा, अनुराधा और लघु संज्ञक नक्षत्रों में कटिसूत्र (करधन) को पहिनाकर बालक को भूमि पर बैठावे ॥२१॥

जीविका की परीक्षा—

तस्मिन् काले स्थापयेत्तत्पुरस्ताद्वस्त्रं शस्त्रं पुस्तकं लेखनीं च ।
स्वर्णं रौप्यं यच्च गृह्णाति बालस्तैराजीवैस्तस्य वृत्तिः प्रदिष्टा ॥२२॥

अन्वयः—तस्मिन् काले तत्पुरस्तात् वस्त्रं, शस्त्रं, पुस्तकं, लेखनीं, स्वर्णं, रौप्यं व स्थापयेत्। बालः यत् गृह्णाति तैः आजीवैः तस्य वृत्तिः प्रदिष्टा ॥२२॥

भा० टी०—बालक को भूमि पर बैठाने के समय उसके आगे कपड़ा, हथियार, पुस्तक, कलम, सोना, चाँदी को रख देवे। इनमें से जिस पदार्थ को बालक उठा ले उसी से उसकी आजीविका कहनी चाहिये ॥२२॥

ताम्बूल खाने का मुहूर्त—

वारे भौमार्किहीने ध्रुव-मृदु-लघुभैर्विष्णुमूलादितीन्द्र-
स्वातीवस्वभ्युपेतैर्मिथुनमृगसुताकुम्भगोमीनलग्ने ।
सौम्यैः केन्द्रत्रिकोणैरशुभगगनगैः शत्रुलाभत्रिसंस्थै-
स्ताम्बूलं सार्धमासद्वयमितसमये प्रोक्तमन्नाशने वा ॥२३॥

अन्वयः—भौमार्किहीने वारे, ध्रुवमृदुलघुभैः विष्णुमूलादितीन्द्र-स्वातीवस्वभ्युपेतैः मिथुनमृगसुताकुम्भगोमीनलग्ने, सौम्यैः केन्द्रत्रिकोणैः अशुभगगनगैः शत्रुलाभत्रिसंस्थैः सार्धमासद्वयमितसमये वा अन्नाशने ताम्बूलं प्रोक्तम् ॥२३॥

भा० टी०—भौम और शनि को छोड़कर शेष वारों में, ध्रुव संज्ञक, मृदु संज्ञक, लघु संज्ञक, श्रवण, मूल, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, स्वाती,धनिष्ठा इन नक्षत्रों में मिथुन, मकर, कुम्भ, मीन लग्नों में शुभ ग्रह केन्द्र त्रिकोण में हों और पापग्रह छठे, ग्यारहवें और

तीसरे हों तथा अढ़ाई मास बीतने पर बालक को ताम्बूल खिलावे अथवा अन्नप्राशन के दिन ही खिला देवे ॥२३॥

कर्णवेध का मुहूर्त—

हित्वैतांश्चैत्रपौषावमहरिशयनं जन्ममासं च रिक्तां
युग्माब्दं जन्मतारामृतु-मुनि-वसुभिः सम्मिते मास्यथो वा ।
जन्माहात्सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे-
ऽथोजाब्दे विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः ॥२४॥

अन्वयः—चैत्रपौषावमहरिशयनं, जन्ममासं, रिक्तां च युग्माब्दं, जन्मतारां एतान् हित्वा, ऋतुमुनिवसुभिः सम्मिते मासि अथो वा जन्माहात् सूर्यभूपैः परिमित-दिवसे, ज्ञेज्यशुकेन्दुवारे अथ ओजाब्दे, विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः ॥२४॥

भा० टी०—चैत्र और पौष मास, तिथिक्षय, हरिशयन (आषाढ़ शुक्ल ११ से कार्त्तिक शुक्ल ११ तक), जन्ममास, रिक्ता तिथि, सम वर्ष, जन्म की तारा, इनको छोड़कर छठे, सातवें या आठवें मास में अथवा जन्मदिन से १२वें या १६वें दिन, बुध, गुरु, शुक्र और चन्द्र वारों में, अथवा विषम वर्ष में श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृदु संज्ञक, लघु संज्ञक नक्षत्रों में कर्णवेध (कान छेदना) शुभद होता है ॥२४॥

कर्णवेध में लग्नशुद्धि—

संशुद्धे मृतिभवने त्रिकोणकेन्द्रत्र्यायस्थैः शुभखचरैः कवीज्यलग्ने ।
पापाख्यैररिसहजायगेहसंस्थैर्लग्नस्थे त्रिदशगुरौ शुभावहः स्यात् ॥२५॥

अन्वयः—मृतिभवने संशुद्धे, शुभखचरैः त्रिकोणकेन्द्रत्र्यायस्थैः कवीज्यलग्ने, पापाख्यैः अरिसहजायगेहसंस्थैः, लग्नस्थे त्रिदशगुरौ (कर्णवेधः) शुभावहः स्यात्॥२५॥

भा० टी०—अष्टम स्थान शुद्ध हो (अर्थात् कर्णवेधकालिक लग्न से अष्टम स्थान में कोई ग्रह न हो), शुभ ग्रह केन्द्र त्रिकोण में हों, शुक्र और गुरु लग्न में हों और पापग्रह ६।३।११वें स्थान में हों ऐसे लग्न में कर्णवेध कराना चाहिये ॥२५॥

शुभ कर्मों के निषिद्ध समय—

गीर्वाणाऽम्बुप्रतिष्ठा-परिणय-दहनाधान-चौलोपवीत-
क्षोणीपालाभिषेको दवसितविशनं नैव याम्यायने स्यात् ।
नो वा बाल्यास्तवार्धे सुरगुरु-सितयोर्नैव केतूदये स्यात्
पक्षं वाऽर्धं च केचिज्जहति तमपरे यावदीक्षां तदुग्रे ॥२६॥

अन्वयः—याम्यायने गीर्वाणाम्बुप्रतिष्ठा-परिणय-दहनाधान-चौलोपवीत-क्षोणीपालाभिषेकः दवसितविशनं नैव शुभदं स्यात् । वा सुरगुरुसितयोः बाल्यास्त-वार्धे अपि नैव शुभदं, केतूदये नैव शुभदम् । तं केचित् पक्षं वा अर्धं जहति, अपरे तदुग्रे ईक्षां यावत् जहति ॥२६॥

भा० टी०—देवता और जलाशय की प्रतिष्ठा, विवाह, अग्निहोत्र, मुंडन, यज्ञोपवीत-राज्याभिषेक, गृहप्रवेश ये कार्य याम्यायन (दक्षिणायन) में नहीं करने चाहिये। तथा गुरु और शुक्र के बाल्य, अस्त, वृद्ध समय में तथा केतु तारा के उदय-समय में भी नहीं करना चाहिये। किसी आचार्य के मत से केतु का उदय एक पक्ष अथवा आधा पक्ष तक अशुभ होता है और किसी-किसी के मत से जब तक केतु दिखाई देता हो तब तक शुभ क्रिया नहीं करनी चाहिये ॥२६॥

गुरु-शुक्र के बाल और वृद्ध का समय—

पुरः पश्चाद्भृगोर्बाल्यं त्रिदशाहं च वार्धकम् ।
पक्षं पञ्चदिनं ते द्वे गुरोः पक्षमुदाहृते ॥ २७ ॥

अन्वयः—भृगोः पुरः पश्चात् (क्रमेण) त्रिदशाहं बाल्यं च (पुनः) पक्षं, पञ्च-दिनं वार्धकं प्रोक्तम्। गुरोः ते द्वे (बाल्यवार्धके) पक्षं उदाहृते ॥२७॥

भा० टी०—शुक्र पूर्व में उदय होने के बाद तीन दिन और पश्चिम में उदय होने के बाद दस दिन तक बाल रहते हैं, तथा पूर्व में अस्त होने के पहले १५ दिन और पश्चिम में अस्त होने के पाँच दिन पहले वृद्ध होते हैं। और गुरु का यह दोनों बालत्व और वृद्धत्व पन्द्रह-पन्द्रह दिन का होता है ॥२७॥

बाल्य-वृद्ध में मतान्तर—

ते दशाहं द्वयोः प्रोक्ते कैश्चित्सप्तदिनं परैः ।
त्र्यहं त्वात्ययिकेऽप्यन्यैरर्धाहं च त्र्यहं विधोः ॥ २८ ॥

अन्वयः—कैश्चित् द्वयोः (गुरु-शुक्रयोः) ते (बाल्य-वार्धके) दशाहं प्रोक्ते। परैः सप्तदिनं प्रोक्तम्। अन्यैः आत्ययिके त्र्यहं प्रोक्तम्। विधोश्च अर्धाहं त्र्यहं प्रोक्तम् ॥२८॥

भा० टी०—कोई-कोई आचार्य दोनों का अर्थात् गुरु, शुक्र का बाल्य और वृद्धत्व दस-दस दिन का कहते हैं। अन्य आचार्य दोनों को सात-सात दिन का कहते हैं। अन्य आचार्य का कहना है कि अत्यंत आवश्यक कार्य होने से तीन दिन बाल्य और तीन दिन वृद्धत्व होता है (यही अधिक माना जाता है)। और चन्द्रमा का आधा दिन बाल्य और तीन दिन तक वृद्धत्व रहता है ॥२८॥

चौल (मुंडन) का मुहूर्त—

चूडा वर्षात्तृतीयात् प्रभवति विषमेऽष्टार्करिक्ताद्यषष्ठी-
पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम् ।
वारे लग्नांशयोश्चास्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते
शाक्रोपेतैर्विमैत्रैर्मृदु-चर-लघुभैराय-षट्त्रिस्थपापैः ॥ २९ ॥

अन्वयः—तृतीयात् वर्षात् विषमे वर्षे अष्टार्करिक्ताद्यषष्ठीपर्वोनाहे, विचैत्रोद-

गयनसमये, ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानां वारे, लग्नांशयोश्च, अस्वभनिधनतनौ, नैधने शुद्धि-युक्ते, शाक्रोपेतैः विमैत्रैः मृदुचरलघुभैः आयषट्त्रिस्थपापैः चूडा शुभा प्रभवति ॥२९॥

भा० टी०—गर्भाधान से या जन्म से तीसरे वर्ष से विषम वर्ष में, ८।१२।४।९।१४।१।६ तिथियों को तथा पर्वदिन को छोड़कर शेष तिथियों में, चैत्र मास को छोड़कर अन्य उत्तरायण के मासों में, बुध, चन्द्र, शुक्र और गुरु इन वारों में, लग्न और नवमांश में, अपनी जन्मराशि से वा लग्न से अष्टम लग्न को छोड़कर शेष लग्नों में, आठवाँ स्थान शुद्ध हो ऐसे लग्न में, ज्येष्ठा से युक्त अनुराधा को छोड़कर मृदु संज्ञक, चर संज्ञक, लघु संज्ञक नक्षत्रों में लग्न से ११।६।३ स्थानों में पापग्रह हों तो मुंडन कराना शुभद होता है ॥२९॥

चौलकालिक लग्न से ग्रहों का फल—

क्षीणचन्द्र-कुज-सौरि-भास्करैर्मृत्यु-शस्त्रमृति-पङ्गुता-ज्वराः ।
स्युः क्रमेण बुध-जीव-भार्गवैः केन्द्रगैश्च शुभमिष्टतारया ॥ ३० ॥

अन्वयः—क्षीणचन्द्र-कुज-सौरि-भास्करैः केन्द्रगैः क्रमेण मृत्युशस्त्रमृतिपङ्गुता-ज्वराः स्युः। तथा बुध-जीव-भार्गवैः केन्द्रगैः इष्टतारया च शुभं भवति ॥३०॥

भा० टी०—लग्न से केन्द्र में क्षीण चन्द्र (कृष्णपक्ष की पंचमी से शुक्लपक्ष की पंचमी तक क्षीण चन्द्रमा होता है) हो तो मृत्यु, मंगल हो तो शस्त्र से चोट लगे, शनि हो तो पंगु हो, सूर्य हो तो ज्वर होता है। यदि बुध, गुरु और शुक्र हों तो शुभद होता है, तथा तारा शुभद हो तो भी शुभ होता है ॥३०॥

माता के गर्भवती होने से मुंडन में विचार—

पञ्चमासाधिके मातुर्गर्भे चौलं शिशोर्न सत् ।
पञ्चवर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥ ३१ ॥

अन्वयः—पञ्चमासाधिके मातुः गर्भे सति शिशोः चौलं न सत्। तथा पञ्च-वर्षाधिकस्य शिशोः मातरि गर्भिण्यां अपि चौलं इष्टं स्यात् ॥३१॥

भा० टी०—यदि बालक की माता को पाँच मास से अधिक का गर्भ हो तो बालक का मुंडन शुभ नहीं होता है। यदि बालक पाँच वर्ष से अधिक का हो तो माता के गर्भिणी होने पर भी मुंडन कर देना चाहिये ॥३१॥

मुंडन में तारा का परिहार—

तारादौष्टयेऽब्जे त्रिकोणोच्चगे वा क्षौरं सत्स्यात् सौम्यमित्रस्ववर्गे।
सौम्ये भेऽब्जे शोभने दुष्टतारा शस्ता ज्ञेया क्षौरयात्रादिकृत्ये ॥३२॥

अन्वयः—तारादौष्टये अब्जे त्रिकोणोच्चगे वा सौम्यमित्रस्ववर्गे सति क्षौरं सत् स्यात्। शोभने अब्जे सौम्ये भे सति क्षौरयात्रादिकृत्ये दुष्टतारा शस्ता ज्ञेया ॥३२॥

भा० टी०—क्षौर (मुंडन) में तारा अशुभ होने पर यदि चन्द्रमा अपने मूल त्रिकोण में वा उच्च में हो अथवा शुभ ग्रह या अपने मित्र के षड्वर्ग में हो तो मुण्डन शुभ होता है। यदि चन्द्रमा शुभ हो और शुभ ग्रह की राशि का हो तो अशुभ तारा भी क्षौर. यात्रा आदि कार्यों में शुभ होती है ॥३२॥

चौलादि में निषिद्ध समय—

ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोश्चौलादि नाऽऽचरेत् ।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेऽपि नेष्यते ॥ ३३ ॥

अन्वयः—ऋतुमत्याः सूतिकायाः सूनोः चौलादि न आचरेत्। ज्येष्ठापत्यस्य ज्येष्ठे चौलादिकं न आचरेत्, कैश्चित् मार्गेऽपि न इष्यते ॥३३॥

भा० टी०—रजस्वला स्त्री और सूतिका स्त्री के पुत्र का मुंडन-उपनयन न करे और ज्येष्ठ लड़के का ज्येष्ठ मास में नहीं करना चाहिये। कोई-कोई आचार्य मार्गशीर्ष मास में जेठे लड़के का मुंडन आदि करने का निषेध करते हैं ॥३३॥

साधारण क्षौर का मुहूर्त—

दन्तक्षौरनखक्रियाऽत्र विहिता चौलोदिते वारभे
पातंग्याररवीन् विहाय नवमं घस्रं च सन्ध्यां तथा ।
रिक्तां पर्वनिशां निरासनरणग्रामप्रयाणोद्यत-
स्नाताभ्यक्तकृताशनैर्न हि पुनः कार्या हितप्रेप्सुभिः ॥ ३४ ॥

अन्वयः—पातंग्याररवीन् विहाय च (पुनः) नवमं घस्रं, सन्ध्यां, रिक्तां, पर्वनिशां विहाय चौलोदिते वारभे अत्र दन्तक्षौरनखक्रिया विहिता। तथा निरासनरण-ग्रामप्रयाणोद्यतस्नाताभ्यक्तकृताशनैः हितप्रेप्सुभिः न हि कार्या ॥३४॥

भा० टी०—शनि, भौम, रवि इन वारों को और जिस दिन क्षौर बनवाये हों उस दिन से नवाँ दिन, सन्ध्या समय, रिक्ता तिथि इन सबको त्यागकर मुंडन में कहे हुए नक्षत्रादिकों में दाँत की क्रिया, क्षौर और नखक्रिया करना शुभद होता है। और बिना आसन के, रण तथा ग्राम में जाने के दिन, स्नान करने के बाद, शरीर में उबटन लगा लेने के बाद और भोजन कर लेने के बाद अपना कल्याण चाहनेवाले क्षौर न करावें ॥३४॥

क्षौर में विशेष समय—

ऋतु-पाणिपीड-मृति-बन्धमोक्षणे क्षुरकर्म च द्विजनृपाज्ञयाऽऽचरेत् ।
शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरमाचरेन्न खलु गर्भिणीपतिः ॥३५॥

अन्वयः—ऋतु-पाणिपीड-मृति-बन्धमोक्षणे, द्विजनृपाज्ञया क्षुरकर्म आचरेत्। तथा शववाहतीर्थगमसिन्धुमज्जनक्षुरकर्म च गर्भिणीपतिः न आचरेत् ॥३५॥

भा० टी०—यज्ञ में, विवाह में, मृतक कर्म में, कारागार से छूटने पर, ब्राह्मण और राजा की आज्ञा से क्षौरकर्म निन्दित वार आदि में भी करा लेना शुभद होता है।

और जिसकी स्त्री गर्भिणी हो वह मुर्दा न ढोवे, तीर्थयात्रा न करे, समुद्र में स्नान न करे और क्षौरकर्म न करावे ॥३५॥

श्मश्रुकर्म (दाढ़ी बनाने) का मुहूर्त—

नृपाणां हितं क्षौरभे श्मश्रुकर्म दिने पञ्चमे पञ्चमेऽस्योदये वा ।
षडग्निस्त्रिमैत्रोऽष्टकः पञ्चपित्र्योऽब्दतोऽध्यर्यमा क्षौरकृन्मृत्युमेति ॥३६॥

अन्वयः—क्षौरभे तथा पञ्चमे पञ्चमे दिने वा अस्य (क्षौरभस्य) उदये नृपाणां श्मश्रुकर्म हितं भवति । तथा षडग्निः, त्रिमैत्रः, अष्टकः, पञ्चपित्र्यः, अब्ध्यर्यमा क्षौरकृत् अब्दतः मृत्युं एति ॥३६॥

भा० टी०—क्षौर के नक्षत्रों में, पाँचवें पांचवें दिन, अथवा क्षौर के नक्षत्रों के उदय (मुहूर्त) में श्मश्रुकर्म (दाढ़ी बनवाना) कराना शुभ होता है। ६ बार कृत्तिका में, ३ बार अनुराधा में, ८ बार रोहिणी में, पाँच बार मघा में, ४ बार उत्तरा फाल्गुनी में क्षौर कराने से एक वर्ष के अन्दर मृत्यु हो जाती है ॥३६॥

अक्षरारम्भ का मुहूर्त—

गणेश-विष्णु-वाग्रमाः प्रपूज्य पञ्चमाब्दके
तिथौ शिवार्कदिग्द्विषट्शरत्रिके रवावुदक् ।
लघुश्रवोऽनिलान्त्य-भादितीशतक्षमित्रभे
चरोनसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रहः सतां दिने ॥ ३७ ॥

अन्वयः—पञ्चमाब्दके, शिवार्कदिग्द्विषट्शरत्रिके तिथौ, रवौ उदक् लघुश्रवोऽनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे, चरोनसत्तनौ, सतां दिने गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य शिशोः लिपिग्रहः शुभः स्यात् ॥३७॥

भा० टी०—जन्म से पाँचवें वर्ष में ११।१२।१०।२।६।५।३ इन तिथियों में, सूर्य उत्तरायण हों, लघु संज्ञक, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रों में, चर लग्न को छोड़कर शेष शुभ लग्नों में, शुभ ग्रह के दिन में गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी का बालक से पूजन कराकर अक्षरारम्भ कराना चाहिये।

विद्यारम्भ का मुहूर्त—

मृगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये
गुरुद्वयेऽर्कजीववित्सितेऽह्नि षट्शरत्रिके ।
शिवार्कदिग्द्विके तिथौ ध्रुवान्त्यमित्रभे परैः
शुभैरधीतिरुत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगैः स्मृता ॥३८॥

अन्वयः—मृगात् करात् श्रुतेः त्रये, अश्विमूलपूर्विकात्रये ; गुरुद्वये, अर्कजीववित्सिते अह्नि, षट्शरत्रिके, शिवार्कदिग्द्विके तिथौ शुभैः त्रिकोणकेन्द्रगैः अधीतिः उत्तमा स्मृता, परैः ध्रुवान्त्यमित्रभे उत्तमा स्मृता ॥३८॥

भा० टी०—मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य, श्लेषा, इन नक्षत्रों में, रवि, गुरु, बुध, शुक्र इन वारों में, ३।५।३।११।२।१०।२ इन तिथियों में, शुभ ग्रह त्रिकोण (५।९), केन्द्र (१।४।७।१०) स्थानों में हों तो विद्यारम्भ करना शुभद होता है। अन्य आचार्यों के मत से ध्रुव संज्ञक, रेवती और अनुराधा नक्षत्रों में भी शुभद होता है ॥ ३८ ॥

यज्ञोपवीत का समय—

विप्राणां व्रतबन्धनं निगदितं गर्भाज्जनेर्वाऽष्टमे
वर्षे वाऽप्यथ पञ्चमे क्षितिभुजां षष्ठे तथैकादशे।
वैश्यानां पुनरष्टमेऽप्यथ पुनः स्याद्द्वादशे वत्सरे
कालेऽथ द्विगुणे गते निगदितं गौणं तदाहुर्बुधाः ॥३९॥

अन्वयः—गर्भात् वा जनेः अष्टमे अपि वा पञ्चमे वर्षे विप्राणां, अथ षष्ठे तथा एकादशे वर्षे क्षितिभुजां, पुनः अष्टमे वा द्वादशे वत्सरे वैश्यानां व्रतबन्धनं निगदितम्। अथ निगदिते काले द्विगुणे गते तत् गौणं बुधाः आहुः ॥३९॥

भा० टी०—गर्भ से अथवा जन्म से आठवें या पाँचवें वर्ष में ब्राह्मण को और छठे या ग्यारहवें वर्ष में क्षत्रियों को, आठवें या बारहवें वर्ष में वैश्यों को यज्ञोपवीत करने को कहा है। और उपनयन का जो समय कहा है उससे दूने समय को पंडितों ने गौण कहा है ॥ ३९ ॥

उपनयन का मुहूर्त—

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वारौद्रेऽर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत्।
द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्णे ४०

अन्वयः—क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वारौद्रे, अर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने, द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ व्रतं सत् स्यात्। च (पुनः) कृष्णादिमत्रिलवके अपि सत् स्यात्, अपराह्णे न सत् स्यात् ॥४०॥

भा० टी०—क्षिप्र संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, श्लेषा, चर संज्ञक, मूल, मृदु संज्ञक, तीनों पूर्वा, आर्द्रा इन नक्षत्रों में, रवि, बुध, गुरु, शुक्र और सोम इन वारों में, २।३।५।११।१२।१० इन तिथियों में व्रतबन्ध शुभद होता है। और कृष्णपक्ष में पञ्चमी तक यज्ञोपवीत करना शुभ है। तथा अपराह्ण में उपनयन करना निषिद्ध है ॥४०॥

यज्ञोपवीत में निषेध—

कवीज्य-चन्द्र-लग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः।
व्ययेऽब्ज-भार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः ॥४१॥

अन्वयः—कवीज्यचन्द्रलग्नपाः रिपौ, मृतौ, व्रते अधमाः। तथा अब्जभार्गवौ व्यये, खलाः तनौ, मृतौ-सुते अधमाः ॥४१॥

भा० टी०—उपनयन में शुक्र, गुरु, चन्द्रमा और व्रतबन्धकालिक लग्न के स्वामी यदि लग्न से छठे या आठवें स्थान में हों तो वह लग्न अशुभ होती है। तथा चन्द्रमा, शुक्र बारहवें हों, पापग्रह लग्न में या आठवें अथवा पाँचवें हों तो भी अधम होता है ॥४१॥

व्रतबन्ध में लग्नशुद्धि का विचार

व्रतबन्धेऽष्टषड्रिष्फवर्जिताः शोभनाः शुभाः।
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ॥४२॥

अन्वयः—शुभाः अष्टषड्रिष्फवर्जिताः, खलाः त्रिषडाये, पूर्णः विधुः गोकर्कस्थः तनौ शोभनाः भवन्ति ॥४२॥

भा० टी०—व्रतबन्धकालिक लग्न से शुभ ग्रह आठवें, छठे, बारहवें स्थान को छोड़कर अन्य स्थानों में हों, पापग्रह तीसरे, छठे और ग्यारहवें भाव में हों तथा पूर्ण चन्द्रमा वृष और कर्क राशि का व्रतबन्धकालिक लग्न में हो तो शुभद होता है ॥४२॥

विप्र आदि वर्णो के तथा वेदों के स्वामी—

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ
राजन्यानामोषधीशो विशां च।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिः स्या-
च्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः ॥४३॥

अन्वयः—भार्गवेज्यौ विप्राधीशौ, कुजार्कौ राजन्यानां, ओषधीशो विशां, ज्ञः शूद्राणां, शनिः अन्त्यजानां अधीशः स्यात्। जीव-शुक्रारसौम्याः शाखेशाः स्युः ॥४३॥

भा० टी०—शुक्र, गुरु ब्राह्मणों के, भौम, सूर्य क्षत्रियों के, चन्द्रमा वैश्यों के, बुध शूद्रों के, शनि अन्त्यजों के स्वामी हैं। वेद के क्रम से अर्थात् ऋग्वेद के स्वामी गुरु, यजुर्वेद के शुक्र, सामवेद के मंगल और अथर्ववेद के बुध स्वामी हैं ॥४३॥

वर्णेश और वेदेश का प्रयोजन—

शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं
शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत्।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजिते च नीचे
स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितो व्रतेन ॥४४॥

अन्वयः—शाखेशवारतनुवीर्यं अतीव शस्तं स्यात्। शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं सत् स्यात्। जीवे भृगौ च रिपुगृहे, विजिते, नीचे व्रतेन वेदशास्त्रविधिना रहितः स्यात् ॥४४॥

भा० टी०—अपने वेद के स्वामी के वार, लग्न तथा गोचरोक्त बल से बलवान् हों तो व्रतबन्ध उत्तम होता है। और शाखेश, सूर्य, चन्द्र, गुरु ये बलवान् हों तो उपनयन उत्तम होता है। गुरु शुक्र शत्रु गृह में हों, युद्ध में विजित हों, अपनी नीचराशि में हों तो ऐसे समय में जिसका उपनयन होता है वह वेदशास्त्र के विधि से रहित होता है ॥४४॥

उपनयन में जन्ममासादि का अपवाद—

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिको व्रती।
आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनामनादिमे ॥४५॥

अन्वयः—विप्राणां आद्यगर्भे अपि, क्षत्रादीनां अनादिमे गर्भे जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते सति व्रती विद्याधिकः स्यात् ॥४५॥

भा० टी०—ब्राह्मण के प्रथम गर्भ के बालक का भी यज्ञोपवीत यदि उसके जन्म-नक्षत्र, जन्ममास, जन्मलग्न आदि में हो तो वह अधिक विद्वान् होता है। और क्षत्रिय तथा वैश्य के दूसरे गर्भ के बालक का यज्ञोपवीत यदि उसके जन्म-नक्षत्रादि में हो तो उसमें विद्याधिक्य होता है ॥४५॥

गुरु की शुद्धि

वटुकन्याजन्मराशेस्त्रिकोणायद्विसप्तगः ।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयाऽन्यत्र निन्दितः ॥४६॥

अन्वयः—वटुकन्या जन्मराशेः त्रिकोणायद्विसप्तगः गुरुः श्रेष्ठः स्यात्। खषट्त्र्याद्ये पूजया शुभदः अन्यत्र निन्दितः स्यात् ॥४६॥

भा० टी०—बालक और कन्या की जन्मराशि से ९।५।११।२।७ वें स्थान में गुरु हों तो श्रेष्ठ होते हैं। १०।६।३।१ इन स्थानों में हों तो पूजन करने से शुभ होते हैं। इन दोनों कहे हुए स्थानों से अतिरिक्त स्थानों में हों तो निन्दित होते हैं ॥४६॥

गुरु का परिहार—

स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः ।
रिष्फाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसन् ॥४७॥

अन्वयः—स्वोच्चे, स्वभे, स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे[1] (चेत्) गुरुः रिष्फाष्टतुर्यगोऽपि इष्टः स्यात्। तथा नीचारिस्थः शुभोऽपि असत् स्यात् ॥४७॥

भा० टी०—यदि गुरु अपनी उच्च राशि में, अपनी राशि में, अपने मित्र की राशि में, अपने नवमांश में अथवा वर्गोत्तम नवमांश में हो तो १२।८।४ इन

१—वर्गोत्तम नवमांश—जो राशि लग्न हो उसी का नवांश लग्न में हो तो उसे वर्गोत्तम नवमांश कहते हैं। उक्तं च—वर्गोत्तमाश्चरगृहादिषु पूर्वमध्यपर्यन्तगाः शुभफला नवभाग संज्ञाः ॥

स्थानों में होते हुए भी शुभद होता है। और अपनी नीच राशि और शत्रु की राशि में हो तो शुभद होता हुआ भी अशुभ होता है ॥४७॥

व्रतबन्ध में निन्दित समय—

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके।
प्राक् सन्ध्यागर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहे ॥४८॥

अन्वयः—कृष्णे प्रदोषे, अनध्याये, शनौ, निशि, अपराह्णके, प्राक् सन्ध्यागर्जिते तथा गलग्रहे व्रतबन्धः नेष्टः स्यात् ॥४८॥

भा० टी०—कृष्णपक्ष में, प्रदोष तिथि को, अनध्याय तिथि (५४ श्लोकोक्त) में, शनिवार को, रात्रि में, अपराह्ण समय में, व्रतबन्ध के दिन प्रातः तथा सन्ध्या में बादल गरजे तो उस दिन और गलग्रह[1] में व्रतबन्ध करना अशुभ होता है ॥४८॥

व्रतबन्ध लग्न में सूर्यादि के नवमांश का फल—

क्रूरो जडो भवेत् पापः पटुः षट्कर्मकृद्वटुः।
यज्ञार्थभाक् तथा मूर्खो रव्याद्यंशे तनौ क्रमात् ॥४९॥

अन्वयः—रव्याद्यंशे तनौ बटुः क्रमात् क्रूरः, जडः, पापः, पटुः, षट्कर्मकृत्, यज्ञार्थभाक् तथा मूर्खो भवेत् ॥४९॥

भा० टी०—व्रतबंध लग्न में यदि सूर्य का नवमांश हो तो बटु (बालक) क्रूर कर्म करनेवाला, चन्द्रमा का हो तो मूर्ख, मंगल का हो तो पापात्मा, बुध का हो तो चतुर, गुरु का हो तो षट्[2] कर्म को करनेवाला, शुक्र का हो तो यज्ञ करनेवाला और धनी तथा शनि का हो तो मूर्ख होता है ॥४९॥

चन्द्रमा के नवमांश का फल और परिहार—

विद्यानिरतः शुभराशिलवे पापांशगते हि दरिद्रतरः।
चन्द्रे स्वलवे बहुदुःखयुतः कर्णादितिभे धनवान् स्वलवे ॥५०॥

अन्वयः—शुभराशिलवे चन्द्रे विद्यानिरतः स्यात्। पापांशगते दरिद्रतरः स्यात्; स्वलवे बहुदुःखयुतः स्यात्। परन्तु कर्णादितिभे स्वलवे चन्द्रे धनवान् भवति ॥५०॥

भा० टी०—व्रतबन्ध समय में यदि चन्द्रमा शुभ ग्रह की राशि और नवमांश में हो तो बालक विद्याप्रेमी होता है। पापग्रह के राशि अंश में हो तो महान् दरिद्र

१—त्रयोदश्यादि चत्वारि सप्तम्यादि दिनत्रयम्।
चतुर्थी चैकतः प्रोक्ता अष्टावेते गलग्रहाः ॥
१३।१४।१५।१।७।८।९।४ ये तिथियाँ गलग्रह की हैं।

२—यजनं याजनं चैव तथा दान-प्रतिग्रहौ।
अध्यापनं चाध्ययनं षट्कर्मा धर्मभाग्द्विजः ॥

होता है। अपने ही नवमांश में हो तो अनेक दुःख भोगनेवाला होता है। किन्तु यदि श्रवण या पुनर्वसु नक्षत्र का चन्द्रमा अपने नवमांश में हो तो धनी होता है ॥५०॥

व्रतवन्ध लग्न से केन्द्र में बैठे हुए ग्रहों का फल—

राजसेवी वैश्यवृत्तिः शस्त्रवृत्तिश्च पाठकः।
प्राज्ञोऽर्थवान् म्लेच्छसेवी केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः ॥५१॥

अन्वयः—केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः (बटुः) क्रमेण, राजसेवी, वैश्यवृत्तिः, शस्त्रवृत्तिः, पाठकः, प्राज्ञः, अर्थवान् तथा म्लेच्छसेवी भवति ॥५१॥

भा० टी०—व्रतबन्धकालिक लग्न में यदि सूर्य केन्द्र में हो तो बालक राजा की सेवा करनेवाला, चन्द्रमा हो तो बनिया का पेशा करनेवाला, मंगल हो तो शस्त्र का व्यापार करनेवाला, बुध हो तो पढ़ानेवाला, गुरु हो तो बुद्धिमान्, शुक्र हो तो धनी और शनि हो तो म्लेच्छ की सेवा करनेवाला होता है ॥५१॥

ग्रहों से युक्त गुरु, शुक्र और चन्द्र का फल—

शुक्रे जीवे तथा चन्द्रे सूर्य-भौमार्किसंयुते।
निर्गुणः क्रूरचेष्टः स्यान्निर्घृणः सद्युते पटुः ॥५२॥

अन्वयः—शुक्रे जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमार्किसंयुते निर्गुणः क्रूरचेष्टः तथा निर्घृणः स्यात्। सद्युते पटुः स्यात् ॥५२॥

भा० टी०—शुक्र, गुरु और चन्द्रमा इनमें से कोई भी व्रतबंध के समय सूर्य के साथ हो तो बालक गुणहीन, भौम के साथ हो तो क्रूर चेष्टावाला, शनि के साथ हो तो निर्लज्ज होता है। और शुभ ग्रह से युक्त हो तो विद्वान् होता है ॥५२॥

चन्द्रमा के नवमांश का फल—

विधौ सितांशगे सिते त्रिकोणगे तनौ गुरौ।
समस्तवेदविद् व्रती यमांशगेऽतिनिर्घृणः ॥५३॥

अन्वयः—विधौ सितांशगे, सिते त्रिकोणगे, गुरौ तनौ व्रती समस्तवेदविद् भवति। यमांशगे अतिनिर्घृणः स्यात् ॥५३॥

भा० टी०—चन्द्रमा शुक्र के अंश में हो और शुक्र त्रिकोण में हो तथा गुरु लग्न में हो तो व्रती समस्त वेद को जाननेवाला होता है। शनि के नवमांश में हो तो अत्यंत निर्लज्ज होता है ॥५३॥

व्रतबन्ध में अनध्याय—

शुचिशुक्रपौषतपसां दिगशिवरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः।
भूतादित्रितयाष्टमि संक्रमणं च व्रतेष्वनध्यायाः ॥५४॥

अन्वयः—शुचि-शुक्र-पौष-तपसां मासानां (क्रमेण) दिगशिव-रुद्रार्कसंख्य-सिततिथयः, तथा भूतादित्रितयाष्टमि संक्रमणं च व्रतेषु अनध्यायाः भवन्ति ॥५४॥

भा० टी०—आषाढ़ शुक्ल दशमी, ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया, पौष शुक्ल एकादशी, माघ शुक्ल द्वादशी और सभी मासों की १४।१५।२०।१।८ तिथियाँ और सूर्य की संक्रान्ति का दिन, ये सब व्रतबन्ध में अनध्याय-तिथियाँ हैं ॥५४॥

प्रदोष का लक्षण—

अर्क-तर्क-त्रि-तिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः ।
रात्र्यर्ध-सार्ध-प्रहर-याममध्य-स्थितैः क्रमात् ॥५५॥

अन्वयः—अर्क-तर्क-त्रि-तिथिषु (क्रमेण) रात्र्यर्ध-सार्धप्रहर-याममध्य-स्थितैः तदग्रिमैः (तिथिभिः) प्रदोषः स्यात् ॥५५॥

भा० टी०—द्वादशी को आधीरात के पहले त्रयोदशी हो, षष्ठी को डेढ़ प्रहर के पहले सप्तमी हो और तृतीया को एक प्रहर के पहले चतुर्थी हो तो उक्त दिन प्रदोष होता है ॥५५॥

ब्रह्मौदन पाक के पहले उत्पातादि में शान्ति—

प्राग्ब्रह्मौदनपाकाद् व्रतबन्धानन्तरं यदि चेत् ।
उत्पातानध्ययनोत्पत्तावपि शान्तिपूर्वकं तत् स्यात् ॥५६॥

अन्वयः—व्रतबन्धानन्तरं ब्रह्मौदनपाकात् प्राक् यदि चेत् उत्पातानध्ययनोत्पत्तौ अपि शान्तिपूर्वकं तत् स्यात् ॥५६॥

भा० टी०—व्रतबन्ध के अनन्तर और सायंकालीन ब्रह्मौदन पाक से पूर्व यदि उत्पात और अकस्मात् अनध्याय हो तो शान्तिपूर्वक (शान्ति करके) ब्रह्मौदन पाक करना चाहिये ॥५६॥

वेद के क्रम से व्रतबन्ध के नक्षत्र—

वेदक्रमाच्छशिशिवाहिकरत्रिमूलपूर्वासु पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये ।
ध्रौवेषु चाश्विवसुपुष्यकरोत्तरेशकर्णे मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ सत् ॥

अन्वयः—वेदक्रमात् शशिशिवाहिकरत्रिमूलपूर्वासु, पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये ध्रौवेषु च, अश्विवसुपुष्यकरोत्तरेशकर्णे, मृगान्त्यलघुमैत्रधनादितौ व्रतं सत् स्यात् ॥५७॥

भा० टी०—वेद के क्रम से अर्थात् ऋग्वेदी को मृगशिरा, आर्द्रा, श्लेषा, हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, तीनों पूर्वा में, यजुर्वेदियों को रेवती, हस्त, अनुराधा, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, ध्रुव संज्ञक में, सामवेदियों को अश्विनी, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, आर्द्रा और श्रवण में तथा अथर्ववेदियों को मृगशिरा, रेवती, लघु संज्ञक, अनुराधा, धनिष्ठा और पुनर्वसु में व्रतबन्ध करना शुभद होता है ॥५७॥

माता के ऋतुमती होने में परिहार—

नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे न हि ।
शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्योऽन्यथा न सत् ॥५८॥

अन्वयः—नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे सति लग्नान्तरे न हि शान्त्या चौलं व्रतं पाणिग्रहः कार्यः । अन्यथा न सत् ॥५९॥

भा० टी०—नान्दीश्राद्ध के बाद बालक की माता ऋतुमती (रजस्वला) हो जाय तो दूसरे लग्न के न होने से मण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह ये सभी काय शान्ति करके करना चाहिये, अन्यथा शुभद नहीं होता है ॥५८॥

क्षत्रियों के लिये छुरिका-बन्धन का मुहूर्त—

विचैत्रव्रतमासादौ विभौमास्ते विभूमिजे ।
छुरिकाबन्धनं शस्तं नृपाणां प्राग्विवाहतः ॥५९॥

अन्वयः—विचैत्रव्रतमासादौ, विभौमास्ते, विभूमिजे नृपाणां विवाहतः प्राक् छुरिकाबन्धनं शस्तं भवति ॥५९॥

भा० टी०—चैत्र को छोड़कर शेष व्रतबन्ध के मासादि में, मंगल अस्त न हो ऐसे समय में, मंगलवार को छोड़कर शेष वारों में विवाह से पहले छुरिका-बन्धन शुभद होता है ॥५९॥

केशान्त (गोदान) संस्कार का मुहूर्त—

केशान्तं षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभम् ।
व्रतोक्तदिवसादौ हि समावर्तनमिष्यते ॥६०॥

अन्वयः—षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे केशान्तं शुभं स्यात् । तथा व्रतोक्त-दिवसादौ हि समावर्तनं इष्यते ॥६०॥

भा० टी०—सोलहवें वर्ष में (जन्म से), मुंडन के नक्षत्रादि में केशान्त (जटा आदि का कटाना) संस्कार करना शुभद होता है । तथा व्रतबन्ध के नक्षत्रादि में समावर्तन संस्कार (मूंजीमेखला का त्याग करना) शुभद होता है ॥६०॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ संस्कारप्रकरणम् ॥ ५ ॥

विवाहप्रकरणम्

[1]विवाह समय के विचार में हेतु

**भार्या त्रिवर्गकरणं शुभशीलयुक्ता शीलं शुभं भवति लग्नवशेन तस्याः।
तस्माद्विवाहसमयः परिचिन्त्यते हि तन्निघ्नतामुपगताः सुतशीलधर्माः ॥**

अन्वयः—शुभशीलयुक्ता भार्या त्रिवर्गकरणं भवति। तस्याः शीलं शुभं लग्नवशेन भवति। तस्मात् विवाहसमयः परिचिन्त्यते, हि (यस्मात्) सुतशील-धर्माः तन्निघ्नतां उपगताः ॥ १ ॥

भा० टी०—सुन्दर शील-स्वभाव से युक्त स्त्री त्रिवर्ग (धर्म-अर्थ-काम) को देनेवाली होती है। उसका सुन्दर शील विवाह-लग्न के वश से होता है। इस कारण विवाह के समय का विचार करते हैं; क्योंकि पुत्र-शील-धर्म विवाहकालिक लग्न के ही अधीन है ॥ १ ॥

प्रश्न-लग्न से विवाह-योग—

**आदौ सम्पूज्य रत्नादिभिरथ गणकं वेदयेत् स्वस्थचित्तं
कन्योद्वाहं दिगीशानलहयविशिखे प्रश्नलग्नाद्यदीन्दुः।
दृष्टो जीवेन सद्यः परिणयनकरो गोतुलाकर्कटाख्यं
वा स्यात् प्रश्नस्य लग्नं शुभखचरयुतालोकितं तद्विदध्यात् ॥२॥**

अन्वयः—आदौ रत्नादिभिः गणकं सम्पूज्य, अथ स्वस्थचित्तं (गणकं) कन्योद्वाहं वेदयेत्। यदि इन्दुः प्रश्नलग्नात् दिगीशानलहयविशिखे जीवेन दृष्टः, तदा सद्यः परिणयनकरः स्यात्, वा गोतुलाकर्कटाख्यं प्रश्नस्य लग्नं शुभखचरयुतालोकितं स्यात्तदा तत् विदध्यात् ॥ २ ॥

भा० टी०—पहले रत्नवस्त्रादि से दैवज्ञ का पूजन करके, स्वस्थचित्त ज्यौतिषी को देखकर कन्या के विवाह के निमित्त प्रश्न करे। यदि प्रश्नलग्न से १०।११।३।७।५ स्थानों में चन्द्रमा हो और गुरु से देखा जाता हो तो शीघ्र ही विवाह होता है।

१—तत्र विवाहशब्देन पाणिग्रहणाख्यः संस्कारविशेष उच्यते। ते च विवाहा अष्टौ—

ब्राह्मो दैवस्तथा चार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः।
गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः ॥

स च विवाहः स्त्रीपुरुषद्वयायत्तः। तत्रापि बहुधा पुरुषायत्तः। इतराश्रयोपजी-व्यतया प्राधान्याच्चेति समावर्तनानंतरं पुरुषेणावश्यं विवाहे यतितव्यम्। किंच अग्निहोत्रादीनां नित्यानां कर्मणां करणे पत्नीं विना नाधिकार इति स्मृतौ उक्त-त्वात्। "नापुत्रस्य लोकोऽस्ति" इति श्रुत्वा पुत्राभावे परलोके दुर्गतिबोधनाच्च। तत्र पुत्राद्युत्पत्तिस्तु दंपत्योरानुकूल्यं विना न स्यादिति।

अथवा वृष, तुला, कर्क लग्न में से किसी लग्न में प्रश्न हो और वह शुभ ग्रह से युत अथवा देखी जाती हो तो भी विवाह शीघ्र होता है ॥ २ ॥

प्रश्नलग्न से कन्या को वर का और वर को कन्या के लाभ का विचार

विषमभांशगतौ शशि-भार्गवौ तनुगृहं बलिनौ यदि पश्यतः।
रचयतो वरलाभमिमौ यदा युगलभांशगतौ युवतिप्रदौ ॥३॥

अन्वयः—यदि (प्रश्नसमये) बलिनौ शशिभार्गवौ विषमभांशगतौ तनुगृहं पश्यतः (तदा) वरलाभं रचयतः। यदा इमौ (शशि-भार्गवौ) युगलभांशगतौ तनुगृहं पश्यतः तदा युवतिप्रदौ भवतः ॥ ३ ॥

भा० टी०—प्रश्नसमय यदि बलवान् चन्द्रमा और शुक्र विषमराशि के नवमांश में होकर प्रश्न लग्न को देखते हों तो कन्या को वर का लाभ होता है। यदि ये दोनों चन्द्र और शुक्र सम राशि के नवमांश में होकर लग्न को देखते हों तो वर को कन्या का लाभ होता है ॥ ३ ॥

प्रश्नलग्न से वैधव्य योग—

षष्ठाष्टस्थः प्रश्नलग्नाद्यदीन्दुर्लग्ने क्रूरः सप्तमे वा कुजः स्यात्।
मूर्ताविन्दुः सप्तमे तस्य भौमो रण्डा सा स्यादष्टसंवत्सरेण ॥४॥

अन्वयः—यदि प्रश्नलग्नात् इन्दुः षस्ठाष्टष्थः, वा लग्ने क्रूरः तस्य सप्तमे कुजः, वा मूर्तौ इन्दुः तस्य सप्तमे भौमः तदा सा कन्या अष्टसंवत्सरेण रण्डा स्यात् ॥४॥

भा० टी०—यदि प्रश्नलग्न से चन्द्रमा छठे या आठवें स्थान में हो, अथवा लग्न में क्रूर ग्रह हों और सातवें भाव में मंगल हों अथवा लग्न में चन्द्रमा हो और सातवें भाव में भौम हों तो जिस कन्या के विवाह के लिये प्रश्न किया है वह कन्या आठ वर्ष के अन्दर विधवा हो जायगी ॥४॥

कुलटा और मृतवत्सा योग—

प्रश्नतनोर्यदि पापनभोगः पञ्चमगो रिपुदृष्टशरीरः।
नीचगतश्च तदा खलु कन्या सा कुलटा त्वथवा मृतवत्सा ॥५॥

अन्वयः—यदि पापनभोगः प्रश्नतनोः पञ्चमगः रिपुदृष्टशरीरः, नीचगतः च तदा खलु (निश्चयेन) सा कन्या कुलटा अथवा मृतवत्सा भवेत् ॥५॥

भा० टी०—यदि प्रश्नलग्न से पाँचवें स्थान में पापग्रह हों और शत्रु से देखे जाते हुए अपनी नीचराशि में हों तो वह कन्या कुलटा (व्यभिचारिणी) अथवा मृतवत्सा होती है ॥५॥

विवाहभङ्ग योग—

यदि भवति सितातिरिक्तपक्षे तनुगृहतः समराशिगः शशाङ्कः।
अशुभखचरवीक्षितोऽरिरन्ध्रे भवति विवाहविनाशकारकोऽयम् ॥६॥

अन्वयः—यदि सितातिरिक्तपक्षे समराशिगः शशाङ्कः तनुगृहनः अशुभखचरवीक्षितः अरिरन्ध्रे भवति तदा अयं विवाहविनाशकारको भवति ॥६॥

भा० टी०—यदि कृष्णपक्ष में समराशि में बैठा हुआ चन्द्रमा प्रश्नलग्न से पापग्रह से देखा जाता हुआ छठे या आठवें स्थान में हो तो यह योग विवाह का नाशकारक होता है ॥६॥

वैधव्य योग का परिहार—

जन्मोत्थं च विलोक्य बालविधवायोगं विधाय व्रतं
सावित्र्या उत पैप्पलं हि सुतया दद्यादिमां वा रहः।
सल्लग्नेऽच्युतमूर्तिपिप्पलघटैः कृत्वा विवाहं स्फुटं
दद्यात्तां चिरजीविनेऽत्र न भवेद्दोषः पुनर्भूभवः॥७॥

अन्वयः—जन्मोत्थं च (वा प्रश्नोत्थं) बालविधवायोगं विलोक्य हि निश्चयेन सुतया सावित्र्या व्रतं, उत (वा) पैप्पलं व्रतं विधाय इमां (कन्यां) चिरजीविने दद्यात्। वा रहः सल्लग्ने अच्युतमूर्त्ति पिप्पलघटैः स्फुटं विवाहं कृत्वा तां चिरजीविने दद्यात्। अत्र पुनर्भूभवः दोषः न भवत् ॥७॥

भा० टी०—जन्मलग्न से अथवा प्रश्नलग्न से वैधव्ययोग को देखकर कन्या से सावित्री या पिप्पल व्रत को करा के, अथवा एकान्त में अच्छे लग्न में विष्णु की मूर्त्ति या पीपल वृक्ष अथवा घट के साथ विवाह कराके इसके बाद उस कन्या को किसी दीर्घायुष्यवाले वर को देना चाहिए। अर्थात् उसके साथ विवाह कर देना चाहिये। इसमें पुनर्विवाह का दोष नहीं होता है ॥७॥

कन्या की सन्तति का विचार—

प्रश्नलग्नक्षणे यादृशापत्ययुक् स्वेच्छया कामिनी तत्र चेदाव्रजेत्।
कन्यका वा सुतो वा तदा पण्डितैस्तादृशापत्यमस्या विनिर्दिश्यते ॥८॥

अन्वयः—तत्र प्रश्नलग्नक्षणे यादृशापत्ययुक् कन्यका वा सुतः चेत् स्वेच्छया कामिनी आव्रजेत्। तादृशापत्यं अस्याः पण्डितैः विनिर्दिश्यते ॥८॥

भा० टी०—प्रश्न के समय जैसी सन्तति के साथ, कन्या वा पुत्र लिये हुए, कोई स्त्री यदि स्वेच्छा से वहाँ आ जाय तो वैसी ही सन्तति उस कन्या को होगी (जिसके विवाह के लिये प्रश्न किया है) यह कहे ॥८॥

शकुन से शुभाशुभ फल—

शङ्ख-भेरी-विपञ्चीरवैर्मङ्गलं जायते वैपरीत्यं तदा लक्षयेत्।
वायसो वा खरः श्वाशृगालोऽपि वा प्रश्नलग्नक्षणे रौति नादं यदि ॥९॥

अन्वयः—प्रश्नलग्नक्षणे शङ्खभेरीविपञ्चीरवैः मङ्गलं जायते। वायसः वा खरः, श्वा, शृगालः अपि यदि रौति वा नादं करोति तदा वैपरीत्यं लक्षयेत ॥९॥

भा० टी०—प्रश्नलग्न के समय शङ्ख, भेरी, वीणा इनमें किसी का शब्द हो तो विवाह में मङ्गल होता है। और यदि उस समय कौआ, गदहा, कुत्ता अथवा सियार इनमें से कोई रोवे या शब्द करे तो विपरीत यानी अशुभ कहना चाहिये ॥९॥

कन्या-वरण (कन्या के छेंकने का मुहूर्त)—

विश्वस्वातीवैष्णवपूर्वात्रयमैत्रैर्वस्वाग्नेयैर्वा करपीडोचितऋक्षैः।
वस्त्रालङ्कारादिसमेतैः फलपुष्पैः सन्तोष्यादौ स्यादनु कन्यावरणं हि ॥

अन्वयः—विश्वस्वातीवैष्णवपूर्वात्रयमैत्रैः वस्वाग्नेयैः वा करपीडोचितऋक्षैः हि वस्त्रालङ्कारादिसमेतैः फलपुष्पैः आदौ सन्तोष्य अनु कन्यावरणम् ॥१०॥

भा० टी०—उत्तराषाढ़, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा, कृत्तिका अथवा विवाह के नक्षत्रों में, वस्त्र, आभूषण फल, पुष्प आदि से कन्या को सन्तुष्ट करके पीछे कन्या वरण करे ॥१०॥

वरवृत्ति (तिलक) का मुहूर्त—

धरणिदेवोऽथवा कन्यकासोदरः शुभदिने गीतवाद्यादिभिः संयुतः।
वरवृत्तिं वस्त्रयज्ञोपवीतादिना ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयैराचरेत् ॥११॥

अन्वयः—शुभदिने, ध्रुवयुतैः वह्निपूर्वात्रयैः धरणिदेवः अथवा कन्यकासोदरः गीतवाद्यादिभिः संयुतः वस्त्रयज्ञोपवीतादिना वरवृत्तिं आचरेत् ॥११॥

भा० टी०—शुभ ग्रह के दिन, ध्रुव संज्ञक, कृत्तिका, तीनों पूर्वा इन नक्षत्रों में ब्राह्मण अथवा कन्या का सगा भाई गीत और बाजा के साथ वस्त्र, यज्ञोपवीत द्रव्यादि के साथ वर-वरण (तिलक) को करे ॥११॥

विवाह में ग्रह-शुद्धि और समय—

गुरुशुद्धिवशेन कन्यकानां समवर्षेषु षडब्दकोपरिष्टात्।
रविशुद्धिवशाच्छुभो वराणामुभयोश्चन्द्रविशुद्धितो विवाहः ॥१२॥

अन्वयः—कन्यकानां षडब्दकोपरिष्टात् समवर्षेषु गुरुशुद्धिवशेन, तथा वराणां रविशुद्धिवशात्, तथा उभयोः चन्द्रविशुद्धितो विवाहः शुभः स्यात् ॥१२॥

भा० टी०—जन्म से छठे वर्ष के बाद सम वर्षों में गुरु के शुद्ध रहते हुए (संस्कार प्र० ४६ श्लो० के अनुसार) तथा रवि[1] की शुद्धि के वश वर का, और विवाह के दिन दोनों के चन्द्र शुद्ध होने से विवाह शुद्ध होता है ॥१२॥

१—रविशुद्धिः—तृतीयैकादशे षष्ठे दशमे च दिवाकरे।
वरस्य शुभदो नित्यं विवाहे दिननायकः ॥
जन्मन्यथ द्वितीये वा पंचमे सप्तमेऽपि वा।
नवमे च दिवानाथे पूजया पाणिपीडनम् ॥

विवाह में ग्राह्य मास—

मिथुन-कुम्भ-मृगाऽलि-वृषा-ऽजगे मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुचेः।
अलिमृगाजगते करपीडनं भवति कार्तिक-पौष-मधुष्वपि ॥१३॥

अन्वयः—मिथुनकुम्भमृगालिवृषाजगे रवौ तथा मिथुनगेऽपि रवौ शुचेः त्रिलवे तथा अलिमृगाजगते रवौ कार्त्तिकपौषमधुषु अपि करपीडनं भवति ॥१३॥

भा० टी०—मिथुन, कुम्भ, मकर, वृश्चिक, बृष, मेष इन राशियों के सूर्य में विवाह करना शुभद होता है। और मिथुन के सूर्य में आषाढ़ के शुक्लपक्ष की दशमी तक ही विवाह शुभद होता है। तथा वृश्चिक, मकर और मेष के सूर्य में क्रम से कार्त्तिक, पौष और चैत्र में भी विवाह शुभद होता है अर्थात् वृश्चिक के सूर्य में कार्त्तिक मास में, मकर के सूर्य में पौष मास में, मेष के सूर्य में चैत्र मास में भी विवाह होता है ॥१३॥

विवाह में जन्ममासादि का विचार—

आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयोर्जन्ममासभतिथौ करग्रहः।
नोचितोऽथ विबुधैः प्रशस्यते चेद्द्वितीयजनुषोः सुतप्रदः ॥१४॥

अन्वयः—आद्यगर्भसुतकन्ययोः द्वयोः जन्ममासभतिथौ करग्रहः न उचितः। चेत् द्वितीयजनुषोः सुतप्रदः तथा विबुधैः प्रशस्यते ॥१४॥

भा० टी०—प्रथम गर्भ से उत्पन्न पुत्र और कन्या का विवाह उनके जन्ममास, जन्म-नक्षत्र और जन्म-तिथि में शुभद नहीं होता है। यदि द्वितीय गर्भ के दोनों हों तो उनके जन्म-मासादि में विवाह होने से सन्ततिदायक होता है, और पण्डितों ने इसकी प्रशंसा की है ॥१४॥

ज्येष्ठ मास का विचार—

ज्येष्ठद्वन्द्वं मध्यमं सम्प्रदिष्टं त्रिज्येष्ठं चेन्नैव युक्तं कदाऽपि।
केचित्सूर्यं वह्निगं प्रोज्झ्य चाऽऽहुर्नैवाऽन्योन्यं ज्येष्ठयोः स्याद्विवाहः॥१५॥

अन्वयः—ज्येष्ठद्वन्द्वं मध्यमं संप्रदिष्टम्, चेत् त्रिज्येष्ठं तदा कदापि नैव कुर्यात्। केचित् वह्निगं सूर्यं प्रोज्झ्य विवाहं आहुः। अन्योन्यं ज्येष्ठयोः विवाहः नैव शुभः स्यात् ॥१५॥

भा० टी०—दो ज्येष्ठ (अर्थात् वर-कन्या में कोई ज्येष्ठ हो और ज्येष्ठ मास हो) मध्यम होता है। और तीन ज्येष्ठ (वर-कन्या और ज्येष्ठ मास) हों तो कभी भी विवाह न करे। कोई-कोई आचार्य कहते हैं कि ज्येष्ठ मास में जब तक कृत्तिका नक्षत्र पर सूर्य रहें तब तक दोनों ज्येष्ठों का ज्येष्ठ मास में विवाह नहीं करना चाहिए। और दोनों ज्येष्ठों का विवाह शुभद नहीं होता है ॥१५॥

सहोदर पुत्र कन्यादि के विवहादि में नियम—

सुतपरिणयात् षण्मासान्तः सुताकरपीडनं
न च निजकुले तद्वद्वा मण्डनादपि मुण्डनम् ।
न च सहजयोर्देये भ्रात्रोः सहोदरकन्यके
न सहजसुतोद्वाहोऽब्दार्धे शुभे न पितृक्रिया ॥१६॥

अन्वयः—सुतपरिणयात् षण्मासान्तः सुताकरपीडनं न स्यात् । च (पुनः) तद्वत् निजकुले मण्डनात् मुण्डनम् अपि न स्यात् । च (पुनः) सहजयोः भ्रात्रोः सहोदरकन्यके न देये । अब्दार्धे च सहज-सुतोद्वाहः न कार्यः । तथा शुभे पितृक्रिया न कार्या ॥१६॥

भा० टी०—पुत्र का विवाह करने के बाद छः मास के अन्दर कन्या का विवाह अपने कुल में अर्थात् तीन पुश्त के भीतर नहीं करना चाहिये। उसी प्रकार अपने कुल में विवाह के बाद ६ मास तक मुंडन न करे। तथा दोनों सहोदर (सगे) भाइयों से सहोदर (सगी) कन्याओं (बहिनों) का विवाह नहीं करना चाहिये तथा ६ मास के अन्दर दो सहोदर (सगे) पुत्रों वा कन्याओं का विवाह नहीं करना चाहिये। तथा शुभ क्रिया में पितृ-कार्य (पिण्डयुक्त श्राद्ध) न करे ॥१६॥

कन्या या वर का कुल में किसी का मरण हो जाने से विवाह-समय का निर्णय—

वध्वा वरस्याऽपि कुले त्रिपूरुषे नाशं व्रजेत् कश्चन निश्चयोत्तरम् ।
मासोत्तरं तत्र विवाह इष्यते शान्त्याऽथवा सूतकनिर्गमे परैः ॥१७॥

अन्वयः—वध्वा अपि वा वरस्य त्रिपूरुषे कुले निश्चयोत्तरं कश्चन नाशं व्रजेत् (तदा) तत्र मासोत्तरं विवाहः इष्यते। अथवा परैः सूतकनिर्गमे शान्त्या विवाह इष्यते ॥१७॥

भा० टी०—वधू (कन्या) या वर की तीन पुश्त के अन्दर विवाह निश्चय हो जाने के बाद कोई मर जाय तो एक मास के बाद विवाह करना चाहिये। अन्य आचार्यों का कहना है कि सूतक बीत जाने के बाद शान्ति (विनायकशान्त्यादि) करके विवाह करना चाहिये ॥१७॥

विवाह के बाद तीन पुश्त के अन्दर मुंडनादि में विचार—

चूडाव्रतं चाऽपि विवाहतो व्रताच्चूडा च नेष्टा पुरुषत्रयान्तरे ।
वधूप्रवेशाच्च सुताविनिर्गमः षण्मासतो वाऽब्दविभेदतः शुभः ॥१८॥

अन्वयः—पुरुषत्रयान्तरे विवाहः चूडाव्रतं च अपि नेष्टम्। च (पुनः) व्रतात् चूडा अपि नेष्टा। च (पुनः) वधूप्रवेशात् सुताविनिर्गमः नेष्टः। षण्मासतः वा अब्दविभेदतः शुभः स्यात् ॥१८॥

भा० टी०—तीन पुरुष (तीन पुश्त) के अन्दर विवाह के बाद मुंडन और यज्ञो-

पवीत नहीं करना चाहिये। और व्रतवन्ध करके मुंडन नहीं करना चाहिये। वधू-प्रवेश (गवना लाकर) कन्या की बिदाई नहीं करनी चाहिये। ६ मास के बाद अथवा वर्ष के भेद से करना चाहिये ॥१८॥

आश्लेषा आदि नक्षत्रों में उत्पन्न वर-कन्याओं का फल—

श्वश्रूविनाशमहिजौ सुतरां विधत्तः
कन्या-सुतौ निर्ऋतिजौ श्वशुरं हतश्च।
ज्येष्ठाभजाततनया स्वधवाग्रजं च
शक्राग्निजा भवति देवरनाशकर्त्री ॥१९॥

अन्वयः—अहिजौ कन्यासुतौ सुतरां श्वश्रूविनाशं विधत्तः। च (पुनः) निर्ऋतिजौ श्वशुरं हतः। ज्येष्ठाभजाततनया स्वधवाग्रजं हन्ति। शक्राग्निजा देवरनाश-कर्त्री भवति ॥१९॥

भा० टी०—श्लेषा में उत्पन्न कन्या और पुत्र श्वश्रू (सास) का नाश करते ह, मूल में उत्पन्न कन्या और वर श्वशुर का नाश करते हैं, ज्येष्ठा में उत्पन्न कन्या अपने पति के अग्रज (जेठे भाई) का नाश करती है और विशाखा में उत्पन्न कन्या अपने देवर (पति के छोटे भाई) का नाश करती है ॥१९॥

मूलादि में उत्पन्न का परिहार—

द्वीशाद्यपादत्रयजा कन्या देवरसौख्यदा।
मूलान्त्यपादसार्पाद्यपादजाते तयोः शुभे ॥२०॥

अन्वयः—द्वीशाद्यपादत्रयजा कन्या देवरसौख्यदा, मूलान्त्यपादसार्पाद्यपाद-जाते तयोः शुभे भवतः ॥२०॥

भा० टी०—विशाखा के प्रथम तीन चरणों में उत्पन्न कन्या देवर को सुख-दायक होती है। मूल के अन्त्य चरण में और श्लेषा के आदिचरण में उत्पन्न दोनों को शुभकर होती हैं। अर्थात् मूल के अन्तिम चरण में उत्पन्न सास को और श्लेषा के आदिचरण में उत्पन्न श्वशुर को शुभकर होती है ॥२०॥

नक्षत्र-मेलापक में विचारणीय विषय—

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम्।
गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥२१॥

अन्वयः—वर्णः, वश्यः, तथा तारा, योनिः च (पुनः) ग्रहमैत्रकं, गणमैत्रं, भकूटं च एते गुणाधिकाः भवन्ति ॥२१॥

भा० टी०—वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रहमैत्री, गणमैत्री, भकूट और नाड़ी ये आठ प्रकार के कूट एक से दूसरे एकाधिक गुणवाले हैं। अर्थात् वर्ण का १, वश्य का २ इत्यादि ॥२१॥

वर्ण का विचार—

द्विजा झषाऽलिकर्कटास्ततो नृपा विशोऽङ्घ्रिजाः।
वरस्य वर्णतोऽधिका वधूर्न शस्यते बुधैः॥२२॥

अन्वयः—झषालिकर्कटाः द्विजाः, ततः नृपाः, ततः विशः, ततः अंघ्रिजाः। वरस्य वर्णतः अधिकाः वधूः बुधैः न शस्यते ॥२२॥

भा० टी०—मीन, वृश्चिक, कर्क ये राशियाँ ब्राह्मण वर्ण हैं। इसके बाद एक-एक राशि अर्थात् मेष, धन, सिंह राशियाँ क्षत्रिय वर्ण हैं। इसके बाद एक-एक राशि अर्थात् वृष, मकर, कन्या राशियाँ वैश्य वर्ण हैं। इसके बाद की एक-एक राशि मिथुन,कुम्भ और तुला राशियाँ शूद्र वर्ण हैं। वर के वर्ण से वधू का वर्ण उत्तम न हो ऐसा पंडित लोग कहते हैं ॥२२॥

वर्णज्ञान का चक्र—

वर्णाः	राशयः
विप्र	कर्क-वृश्चिक-मीन
क्षत्रिय	मेष-सिंह-धन
वैश्य	वृष-कन्या-मकर
शूद्र	मिथुन तुला-कुम्भ

[1]वर्ण-गुण जानने का चक्र—

		वर-वर्ण			
		ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
कन्या	ब्राह्मण	१	०	०	०
का	क्षत्रिय	१	१	०	०
वर्ण	वैश्य	१	१	१	०
	शूद्र	१	१	१	१

वश्यकूट का विचार—

हित्वा मृगेन्द्रं नर-राशिवश्याः सर्वे तथैषां जलजास्तु भक्ष्याः।
सर्वेऽपि सिंहस्य वशे विनाऽलिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत्॥२३॥

अन्वयः—मृगेन्द्रं हित्वा सर्वे (राशयः) नर-राशिवश्याः, तथा एषां (नर-राशीनां) जलजाः भक्ष्याः, तथा अलिं विना सर्वे सिंहस्य वशे ज्ञेयाः। अतः अन्यत् नराणां व्यवहारतः ज्ञेयम् ॥२३॥

भा० टी०—सिंह राशि को छोड़कर सभी राशियाँ नरराशि (द्विपद) के वश में होती हैं। और नरराशि का जलचर-राशि भक्ष्य होती है। तथा वृश्चिक राशि को छोड़कर सभी राशियाँ सिंह राशि के वश में होती हैं। शेष मनुष्यों के व्यवहार से जानना ॥२३॥

१—विशेष—भूवर्णैक्यवरोत्तमे—

वर-कन्या दोनों एक ही वर्ण हों अथवा वर का वर्ण कन्या के वर्ण से उत्तम हो तो १ गुण मिलता है अन्यथा शून्य गुण मिलता है।

[1]वश्यकूट-गुण-बोधकचक्र—

वर

		द्विपद	चतुष्पद	जलचर	कीट
कन्या	द्विपद	२	।।	।।	१
	चतुष्पद	।।	२	२	२
	जलचर	।।	२	२	२
	कीट	१	२	२	२

[2]ताराकूट-विचार

कन्यर्क्षाद्वरभं यावत् कन्याभं वरभादपि।
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभमसत्स्मृतम् ।।२४।।

अन्वयः—कन्यर्क्षाद् वरभं यावद् गणयेत्। वरभाद् कन्याभं यावत् गणयेत् नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभं असत् स्मृतम् ।।२४।।

भा० टी०—कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक गिने। इसी प्रकार वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक गिने। दोनों जगह जो संख्या हो उसमें नौ का भाग दे, यदि शेष ३।५।७ बचे तो अशुभ तारा समझनी चाहिये। अर्थात् कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक गिनकर ९ का भाग देने से शेष कन्या की तारा और वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक गिनकर ९ का भाग देने से वर की तारा होती है ।।२४।।

१—विशेष—वश्यकूट में गुण लाने का नियम—

सख्यं वैरं च भक्ष्यं च संख्यामाहुस्त्रिधा पुनः।
वैरभक्ष्ये गुणाभावो द्वयोः सख्ये गुणद्वयम् ।।
वश्यवैरे गुणस्त्वेको वश्यभक्ष्ये गुणार्धकः।

वश्यावश्यत्व—मेषस्य वश्यो सिंहालिः, कर्कि वश्यो वृषस्य तु।
यमस्य कन्या वश्यं स्यात्कर्किणश्चापवृश्चिकौ ।।
तुला सिंहस्य वश्यं स्यात्पाथोनेयस्य मत्स्यभौ।
मृगकन्ये तु जूकस्य कर्किस्याद्वृश्चिकस्य तु ।।
मीनौ चापस्य वश्यं स्यात्कियकुम्भौ मृगस्य तु।
मेषः कुंभस्य वश्यं स्यान्मकरो मीनवश्यवत् ।।

२—विशेष—तारागुण के जानने का नियम—

अथ सद्भयोरग्नयः मिश्रे तच्छकलम्।

दोनों की तारायें शुभद हों तो ३ गुण, यदि एक की अच्छी और दूसरे की अशुभ तारा हो तो उसका आधा यानी १।। गुण मिलता है।

तारागुण जानने का चक्र—

वर

कन्या

तारा	१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
२	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
३	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
४	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
५	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
६	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
७	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
८	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
९	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३

योनिकूट का विचार—

अश्विन्यम्बुपयोर्हयो निगदितः स्वात्यर्कयोः कासरः
सिंहो वस्वजपाद्भयोः समुदितो याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः ।
मेषो देवपुरोहितानलभयोः कर्णाम्बुनोर्वानरः
स्याद्वैश्वाभिजितोस्तथैव नकुलश्चन्द्राब्जयोन्योरहिः ॥२५॥
ज्येष्ठामैत्रभयोः कुरङ्ग उदितो मूलार्द्रयोः श्वा तथा
मार्जारोऽदितिसार्पयोरथ मघायोन्योस्तथैवोन्दुरुः ।
व्याघ्रो द्वीशभचित्रयोरपि च गौरर्यम्णबुध्न्यर्क्षयो-
र्योनिः पादगयोः परस्परमहावैरं भयोन्योस्त्यजेत् ॥२६॥

अन्वयः—अश्विन्यम्बुपयोः (योनिः) हयः निगदितः। स्वात्यर्कयोः कासरः, वस्वजपाद्भयोः सिंहः समुदितः। याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः, देवपुरोहितानलभयोः मेषः, कर्णाम्बुनोः वानरः स्यात्। तथैव वैश्वाभिजितोः नकुलः, चन्द्राऽब्जयोन्योः अहिः,ज्येष्ठामैत्रभयोः कुरङ्गः उदितः, तथा मूलार्द्रयोः श्वा, अदितिसार्पयोः मार्जारः, अथ तथैव मघायोन्योः उन्दुरुः, द्वीशभचित्रयोः व्याघ्रः, अपि च अर्यम्णबुध्न्यर्क्षयोः गौः (कथिता)। पादगयोः भयोन्योः परस्परं महावैरं त्यजेत् ॥२५-२६॥

भा० टी०—अश्विनी-शतभिषा की अश्व योनि, स्वाती-हस्त की भैंसा, धनिष्ठा-पूर्वाभाद्रपद की सिंह, भरणी-रेवती की हाथी, पुष्य-कृत्तिका की मेष, श्रवण-पूर्वाषाढ़ की वानर, उत्तराषाढ़-अभिजित् की नकुल, मृगशिरा-रोहिणी की सर्प, ज्येष्ठा-अनुराधा की हरिण, मूल-आर्द्रा की कुत्ता, पुनर्वसु-श्लेषा की बिलार, मघा-पूर्वाफाल्गुनी की मूषक, विशाखा-चित्रा की व्याघ्र, उत्तराफाल्गुनी-उत्तरा-

भाद्रपद की गौ योनि होती है। श्लोक के एक चरण में दो योनियां कही हैं; उनमें परस्पर महावैर होता है। इसे त्याग देना चाहिये; जैसे अश्व और भैंसा ॥२५-२६॥

[1]योनि-गुण-बोधक चक्र—

वर

कन्या	अ.	ग.	मे.	स.	श्वा	मा.	मू.	गौ	म.	व्या	ह.	वा.	न.	सिं
अश्व	४	२	२	३	२	२	२	१	०	१	३	३	२	१
गज	२	४	३	३	२	२	२	२	३	१	२	३	२	०
मेष	२	३	४	२	१	२	१	३	३	१	२	०	३	१
सर्प	२	३	२	४	२	१	१	१	१	२	२	२	०	२
श्वान	२	२	१	२	४	२	१	२	२	१	०	२	१	१
मार्जार	२	२	२	२	२	४	०	२	२	१	३	३	२	२
मूषक	२	२	१	१	१	०	४	२	२	२	२	२	२	१
गौ	१	२	३	२	२	२	२	४	३	०	३	२	२	१
महिष	०	३	३	२	२	२	२	३	४	१	२	२	२	३
व्याघ्र	१	२	१	१	१	१	२	०	१	४	१	१	२	२
हरिण	३	२	२	२	२	३	२	३	२	१	४	३	२	०
वानर	३	३	०	२	२	३	२	२	२	१	२	४	३	२
नकुल	२	३	३	०	०	२	१	२	२	२	२	३	४	२
सिंह	१	०	१	२	२	१	१	१	३	२	२	२	२	४

ग्रहमैत्री कूट—

मित्राणि द्युमणेः कुजेज्यशशिनः शुक्रार्कजौ वैरिणौ
सौम्यश्चास्य समो विधोर्बुधरवी मित्रे न चास्य द्विषत्।
शेषाश्चास्य समाः कुजस्य सुहृदश्चन्द्रेज्यसूर्या बुधः
शत्रुः शुक्र-शनी समौ च शशभृत्सूनोः सिताहस्करौ ॥२७॥
मित्रे चाऽस्य रिपुः शशी गुरु-शनि-क्ष्माजाः समा गोष्पते-
र्मित्राण्यर्क-कुजेन्दवो बुध-सितौ शत्रू समः सूर्यजः।

१—योनि-गुण-बोध के लिये नियम—

अथातिसुहृदोर्वेदास्त्रयो मित्रयोरेकः स्याद्विपतोः स्वभावगुणयोर्द्वौ खं महावैरिणोः ॥

दोनों की एक ही योनि हों तो ४ गुण, दोनों परस्पर मित्र हों तो तीन गुण, परस्पर शत्रु हों तो १ गुण, स्वाभाविक गुण होने से २ गुण, परस्पर महावैर हों तो शून्य गुण मिलता है।

मित्रे सौम्य-शनी कवेः शशि-रवी शत्रू कुजेज्यौ समौ ।
मित्रे शुक्रबुधौ शनेः शशि-रवि-क्ष्माजा द्विषोऽन्यः समः ॥२८॥

अन्वयः—द्युमणेः कुजेज्यशशिनः मित्राणि, शुक्रार्कजौ वैरिणौ, अस्य सौम्यः समः। विधोः बुध-रवी मित्रे, अस्य द्विपत् न, शेषाः अस्य समाः। कुजस्य चन्द्रेज्य-सूर्याः सुहृदः, बुधः शत्रुः, शुक्रशनी समौ। च (पुनः) शशभृत्सूनोः सितार्हस्करौ मित्रे, च (पुनः) अस्य शशी रिपुः, गुरुशनिक्ष्माजाः समाः। गीष्पतेः अर्ककुजेन्दवो मित्राणि, बुधसितौ शत्रू, सूर्यजः समः। कवेः सौम्य-शनी मित्रे, शशि-रवी शत्रू, कुजेज्यौ समौ। शनेः शुक्रबुधौ मित्रे, शशिरविक्ष्माजा द्विपः, अन्यः समः ज्ञेयः ॥२७-२८॥

भा० टी०—सूर्य के मंगल, गुरु, चन्द्रमा ये मित्र हैं; शुक्र, शनि शत्रु और बुध सम हैं। चन्द्रमा के बुध-सूर्य मित्र हैं, इनके शत्रु कोई नहीं है, शेप ग्रह सम हैं। मंगल के चन्द्रमा, गुरु, सूर्य मित्र हैं, बुध शत्रु हैं और शुक्र, शनि सम हैं। बुध के शुक्र-सूर्य मित्र, चन्द्रमा शत्रु और गुरु,शनि, मंगल सम हैं। बृहस्पति के सूर्य, मंगल, चन्द्रमा मित्र, बुध, शुक्र शत्रु और शनि सम हैं। शुक्र के बुध शनि मित्र, चन्द्रमा-सूर्य शत्रु और मंगल-गुरु सम हैं। शनि के शुक्र-बुध मित्र, चन्द्रमा, रवि, मंगल शत्रु और शेप ग्रह सम हैं ॥२७-२८॥

ग्रहमैत्री-गुण-बोधक चक्र[1]—

वर

कन्या	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
सू.	५	५	५	३	५	०	०
चं.	५	५	४	१	४	॥	॥
मं.	५	४	५	॥	५	३	॥
बु.	३	१	॥	५	॥	५	४
बृ.	५	४	५	॥	५	॥	३
शु.	५	॥	३	५	॥	५	५
श.	०	॥	॥	४	३	५	५

१—विशेप—ग्रहमैत्री के गुण का विचार—

एकेशोभयमित्रयोः शरमितारर्द्ध समारातिके ।
चत्वारः सममित्रके रिपुहिते भूमिद्युदासेत्रयः ॥

दोनों (वर-कन्याओं) की राशि के स्वामी एक ही ग्रह हो अथवा दोनों के राशीश परस्पर मित्र हों तो ५ गुण, एक दूसरे का सम और दूसरा पहले का शत्रु हो तो एक का आधा गुण, परस्पर सम मित्र हों तो ४ गुण, मित्र शत्रु हों तो एक गुण और दोनों सम हों तो ३ गुण मिलता है।

गणकूट—

रक्षो-नराऽमरगणाः क्रमतो मघाहिवस्विन्द्रमूलवरुणाऽनलतक्षराधाः।
पूर्वोत्तरात्रयविधातृयमेशभानि मैत्रादितीन्दुहरिपौष्णमरुल्लघूनि॥२९॥

अन्वयः—मघाहिवस्विन्द्रमूलवरुणानलतक्षराधाः, पूर्वोत्तरात्रयविधातृयमेश-भानि, मैत्रादितीन्दुहरिपौष्णमरुल्लघूनि, क्रमतः रक्षोनरामरगणाः स्युः ॥२९॥

भा० टी०—मघा, श्लेषा, धनिष्टा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, कृत्तिका, चित्रा, विशाखा इन नक्षत्रों में जिनका जन्म होता है उनका राक्षस गण होता है। तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी, आर्द्रा इन नक्षत्रों में जिनका जन्म होता है उनका मनुष्य गण होता है। अनुराधा, पुनर्वसु, मृगशिरा, श्रवण, रेवती, स्वाती, लघु संज्ञक नक्षत्रों में जिनका जन्म हो उनका देव गण होता है॥२९॥

गणकूट का विचार—

निजनिजगणमध्ये प्रीतिरत्युत्तमा स्या-
दमर-मनुजयोः सा मध्यमा सम्प्रदिष्टा।
असुर-मनुजयोश्चेन्मृत्युरेव प्रदिष्टो
दनुजविबुधयोः स्याद्वैरमेकान्ततोऽत्र॥३०॥

अन्वयः—निजनिजगणमध्ये अत्युत्तमा प्रीतिः स्यात्। अमरमनुजयोः सा मध्यमा सम्प्रदिष्टा। असुर-मनुजयोः चेत् तदा मृत्युः एव प्रदिष्टः। दनुजविबुधयोः एकान्ततः वैरं स्यात्॥३०॥

भा० टी०—अपने-अपने गण में अर्थात् दोनों वर-कन्या एक ही गण के हों तो अत्यन्त उत्तम प्रीति होती है। देवता और मनुष्य गण में मध्यम प्रीति होती है। राक्षस और मनुष्य गण हों तो एक की मृत्यु होती है। यदि देवता और राक्षस गण हों तो निरन्तर वैर ही रहता है॥३०॥

गण-गुण-ज्ञान[१] के लिये चक्र—

वर

कन्या		देवता	मनुष्य	राक्षस
	देवता	६	६	१
	मनुष्य	५	६	०
	राक्षस	१	०	६

१—विशेष—गण-गुण-बोध के लिये नियम—

ना देवो मनुजा वधूरिह रसास्तद्वैपरीत्ये शराः।
षट् साम्येऽस्नय पुरुषः सुर वधूरत्रैककोऽन्यत्र खम्।

वर देवगण और कन्या मनुष्य गण हो तो ६ गुण, इसके विपरीत हो तो ५ गुण, दोनों एक ही गण के हों तो ६ गुण, पुरुष राक्षस गण और वधू देवगण हो तो एक गुण, इससे भिन्न हों तो शून्य गुण मिलता है।

भकूट का विचार—

मृत्युः षडष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे।
द्विर्द्वादशे निर्धनत्वं द्वयोरन्यत्र सौख्यकृत् ॥३१॥

अन्वयः—षडष्टके मृत्युः ज्ञेयः। नवात्मजे अपत्यहानिः स्यात्। द्विर्द्वादशे द्वयोः निर्धनत्वं (ज्ञेयम्)। अन्यत्र सौख्यकृत् स्यात् ॥३१॥

भा० टी०—यदि दोनों वर-कन्या की जन्मराशि आपस में छठी आठवीं हो तो मृत्यु होती है, नवीं पाँचवीं हो तो सन्तान की हानि और दूसरी बारहवीं हो तो निर्धनता होती है, और इससे भिन्न हो तो शुभ होता है।

[1]भकूट-गुण-बोधक चक्र—

वर

कन्या

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
मेष	७	०	७	७	०	०	७	०	७	७	७	०
वृष	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७
मिथुन	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
कर्क	०	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०
सिंह	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०
कन्या	०	०	७	७	०	७	०	७	७	७	०	०
तुला	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०
वृश्चि.	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०
धन	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७
मकर	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७
कुंभ	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०
मीन	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७

१—विशेष—भकूट के गुण विचार करने के नियम—

दुष्कूटे यदि योनिमैत्रमबलादूरं तदांभोधयः
नो चेत्खं त्वनयोर्यदैकमिह भूर्भाङ्घ्र्यैक्यके खं गुणाः।
सत्कूटे वरदूरता भरियुता षड्भिन्नराश्यैकभे
पंचान्यत्र सुकूटकेऽथ गिरयः।

दुष्ट भकूट (२।१२।६।८।५।९) में योनि-मैत्री होती है और अबला दूर हो तो भकूट का ४ गुण मिलता है। यदि ऐसा न हो तो शून्य गुण, इनमें से एक भी हो तो एक गुण, एक ही नक्षत्र और एक ही चरण दोनों का हो तो शून्य गुण, अच्छे भकूट में नृदूर और योनि-वैर होता हो तो ६ गुण, एक नक्षत्र और राशि भिन्न हो तो ५ गुण, इससे अन्यत्र सत्कूट में ७ गुण मिलते हैं।

दुष्ट भकूट का परिहार—

प्रोक्ते दुष्टभकूटके परिणयस्त्वेकाधिपत्ये शुभो-
ऽथो राशीश्वरसौहृदेऽपि गदितो नाड्यृक्षशुद्धिर्यदि।
अन्यर्क्षेऽशपयोर्बलित्वसखिते नाड्यृक्षशुद्धौ तथा
ताराशुद्धिवशेन राशिवशताभावे निरुक्तो बुधैः ॥३२॥

अन्वयः—प्रोक्ते दुष्टभकूटके एकाधिपत्ये परिणयः शुभः स्यात्। अथो राशीश्वरसौहृदेऽपि यदि नाड्यृक्षशुद्धिः तदा (दुष्टभकूटके परिणयः शुभः) गदितः। अन्यर्क्षे अंशपयोः वलित्वसखिते नाड्यृक्षशुद्धौ, तथा ताराशुद्धिवशेन राशिवशताभावेऽपि बुधैः (परिणयः शुभः) निरुक्तः ॥३२॥

भा० टी०—कहे हुए दुष्टकूट (षडाष्टक, नवात्मज, द्विर्द्वादश) में यदि दोनों वर-कन्याओं की राशि के स्वामी एक ही ग्रह हो तो दुष्ट भकूट शुभ होता है अर्थात् विवाह हो सकता है। अथवा दोनों की राशियों के स्वामी से मित्रता हो और दोनों की नाड़ी एक न हो तो भी दुष्ट भकूट का दोष नहीं होता है। दोनों वर-कन्याओं की राशि के नवांश के अधिपति बलवान् और दोनों परस्पर मित्र हों तो राशि-स्वामियों में शत्रुता होते हुए भी नाड़ी भिन्न हो और तारा शुद्ध हो तो राशि के वश्यावश्य के अभाव में अर्थात् वर के वश में कन्या की राशि न हो तो भी विवाह शुभप्रद होता है ॥३२॥

गणकूट-भकूट और ग्रहकूट का परिहार—

मैत्र्यां राशिस्वामिनोरंशनाथद्वन्द्वस्याऽपि स्याद्गणानां न दोषः।
खेटारित्वं नाशयेत् सद्भकूटं खेटप्रीतिश्चाऽपि दुष्टं भकूटम् ॥३३॥

अन्वयः—राशिस्वामिनोः मैत्र्यां (सत्यां) अपि वा अंशनाथद्वन्द्वस्य मैत्र्यां (सत्यां) गणानां न दोषः स्यात्। सद्भकूटं खेटारित्वं नाशयेत्। तथा खेट-प्रीतिः अपि दुष्टं भकूटं नाशयेत् ॥३३॥

भा० टी०—दोनों (वर-कन्याओं) की राशि के स्वामियों और नवमांश के स्वामियों (अर्थात् जन्म-राशि में जो नवांश हो उसके स्वामियों) की मैत्री हो तो गण का दोष नहीं होता है। शुभ भकूट राशि-स्वामियों की शत्रुता का नाश करता है और ग्रहमैत्री दुष्ट भकूट के फल का नाश करती है ॥३३॥

नाड़ी का विचार—

ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्रभं चैकनाडी
पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या।
वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगमथो पौष्णभं चापरा स्याद्
दम्पत्योरेकनाड्यां परिणयनमसन्मध्यनाड्यां हि मृत्युः ॥३४॥

अन्वयः—ज्येष्ठारौद्रार्यमाम्भः पतिभयुगयुगं दास्रभं च एकनाडी, पुष्येन्दुत्वाष्ट्रमित्रान्तकवसुजलभं योनिबुध्न्ये च मध्या, अथो वाय्वग्निव्यालविश्वोडुयुगयुगं पौष्णभं च अपरा (नाडी, स्यात्)। दम्पत्योः एकनाड्यां परिणयनं असत् स्यात्। हि (निश्चयेन) मध्यनाड्यां मृत्युः स्यात् ॥३४॥

भा० टी०—ज्येष्ठा, मूल, आर्द्रा, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, शतभिष, पूर्वाभाद्रपद, अश्विनी इतने नक्षत्रों की आदि नाड़ी है। पुष्य, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढ़, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद इतने नक्षत्रों की मध्यनाड़ी है। स्वाती, विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, श्लेषा, मघा, उत्तराषाढ़, श्रवण इतने नक्षत्रों की अन्त्य नाड़ी है। दोनों वर-कन्याओं के जन्म-नक्षत्र यदि एक ही नाड़ी के हों अर्थात् दोनों की एक नाड़ी हो तो विवाह अशुभ होता है। यदि मध्य नाड़ी में दोनों के नक्षत्र हों तो मृत्यु होती है ॥३४॥

नाडी-गुण-विचार—

वर

कन्या	आदि	मध्य	अन्त्य
आदि	०	८	८
मध्य	८	०	८
अन्त्य	८	८	०
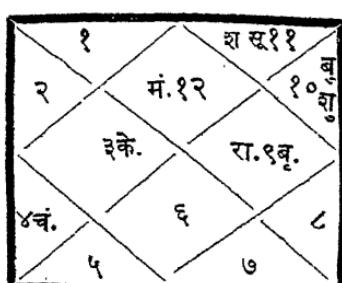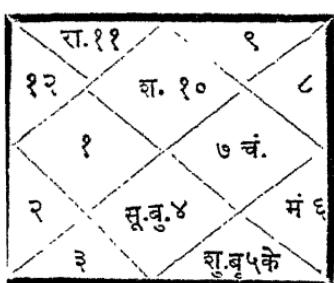
मेलापक देखने का उदाहरण—

वर

विशाखाभे १ चरणे जन्म

कन्या

पुष्यभे ४ चरणे जन्म

नक्षत्र मेलापक का विचार—वर तुला राशि शूद्र वर्ण का है और कन्या कर्क राशि विप्र वर्ण की; कन्या का वर्ण उत्तम होने से वर्ण में शून्य ० गुण मिला। **वश्यावश्य** में, वर द्विपद राशि और कन्या जलचर राशि, अतः वश्य भक्ष्य होने से ॥ गुण मिला। **तारा का विचार**—वर के नक्षत्र से २री शुभ तारा और कन्या के

नक्षत्र से ९वीं शुभ तारा अतः दोनों की शुभ तारा होने से तारा का ३ गुण मिला। **योनिकूट का विचार**—वर की व्याघ्र योनि और कन्या की मेष योनि है, अतः दोनों के उदासीन होने से ३ गुण योनि का मिला। **ग्रहमैत्री का विचार**—वर की राशि के स्वामी शुक्र और कन्या की राशि के स्वामी चन्द्रमा दोनों के परस्पर सम शत्रु होने से ग्रहमैत्री में ।। गुण मिला। **गणकूट का विचार**—वर का राक्षस गण और कन्या का देव गण है, अतः निरन्तर वैर होने के कारण गण में शून्य गुण मिला। **भकूट का विचार**—दोनों वर-कन्या की राशि परस्पर दशम और चतुर्थ होने के कारण भकूट में ७ गुण मिला। **नाड़ी का विचार**—दोनों की नाड़ी भिन्न होने से नाड़ी का ८ गुण मिला। इस प्रकार सभी गुणों का योग २२ हुआ। यह १८ से अधिक है अतः गणना ठीक है।

कितने गुणों तक विवाह करना चाहिये—गुणैः षोडशभिर्निन्द्यं मध्यमा विंशति स्मृता। श्रेष्ठं त्रिंशद्गुणं यावत्परतस्तूत्तमोत्तमम् ।।

सभी कूटों के ३६ गुण होते हैं, इनमें १६ तक गुण बनें तो विवाह निन्दित है, २० तक मध्यम है, इसके बाद जितने ही अधिक गुण बनें उतना ही उत्तम है। किन्तु १८ से न्यून गुण में विवाह नहीं करना चाहिए।

मंगल का विचार—लग्ने व्यये च पाताले यामित्रे चाष्टमे कुजे। कन्या भर्त्तुः विनाशाय भर्त्तुः कन्या विनाशदा ।। शनि भौमोऽथवा कश्चित्पापो वा तादृशो भवेत्। तेष्वेव भवनेष्वेव भौमदोषविनाशकृत् ।।

यदि जन्म-लग्न से १।४।७।८।१२ इन स्थानों में मङ्गल हो तो लग्न से मंगला तथा चन्द्रमा से उक्त स्थानों में मंगल हो तो चन्द्रमंगला या मंगली कुंडली कही जाती है। इसी नियम से दोनों वर कन्याओं के जन्माङ्गों में देखना चाहिये। केवल मंगल को ही न देखे अपितु उक्त स्थानों में कोई भी पापग्रह हो तो वह भौम के ही समान फलदाता होता है। यदि वर-कन्या के जन्माङ्गों में से एक ही के जन्माङ्ग में उक्त स्थानों में से किसी स्थान में भौम हो, दूसरे के जन्माङ्ग में शनि अथवा अन्य कोई पापग्रह हो तो भौम दोष का नाश कर देता है।

उक्त नियम के अनुसार वर के जन्माङ्ग में लग्न से उक्त स्थानों में शनि, सूर्य, केतु और चन्द्र से शनि और मङ्गल इस प्रकार ५ ग्रह भौम दोष करनेवाले हैं। और कन्या के जन्माङ्ग में लग्न से भौम, केतु, सूर्य, शनि और चन्द्र से सूर्य, शनि, केतु इस प्रकार ७ ग्रह हैं।

यहाँ यद्यपि कन्या के ग्रह वर के ग्रह से अधिक हैं तथापि वर के जन्माङ्ग में अन्य अनिष्ट ग्रहों के होने के कारण और कन्या का सौभाग्य सुन्दर होने के कारण दोनों का विवाह-सम्बन्ध मंगलदायक है।

इस तरह जब दोनों के ग्रह समान हों तो विवाह शुभप्रद होता है।

नक्षत्रों के पूर्व, मध्य और परभाग से मेलन का विचार—

पौष्णेशशाक्राद्रससूर्यनन्दाः पूर्वार्ध-मध्याऽपरभागयुग्मम् ।
भर्ता प्रियः प्राग्युजिभे स्त्रियाः स्यान्मध्ये द्वयोः प्रेम परे प्रिया स्त्री ॥३५॥

अन्वयः—पौष्णेश-शाक्राद् रससूर्यनन्दाः पूर्वार्धमध्यापरभागयुग्मम्, प्राग्युजिभे (द्वयोर्भे सति) स्त्रियाः भर्ता प्रियः, मध्ये द्वयोः प्रेम, परे भर्तुः स्त्री प्रिया भवति ॥३५॥

भा० टी०—रेवती से ६ नक्षत्रों (रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा) की पूर्व भाग, आर्द्रा से १२ नक्षत्रों (आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा) की मध्य भाग और ज्येष्ठा से ९ नक्षत्रों (ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिष, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद) की पर भाग संज्ञा है। यदि पूर्वभाग में दोनों के नक्षत्र हों तो स्त्री को पति प्रिय होगा, मध्य भाग में दोनों के नक्षत्र हों तो दोनों में प्रीति रहेगी, और पर भाग में दोनों के नक्षत्र हों तो पुरुष को स्त्री प्रिय होगी ॥३५॥

वर्ग कूट का विचार—

अकचटतपयशवर्गाः खगेशमार्जारसिंहशुनाम् ।
सर्पाऽऽखुमृगावीनां निजपञ्चमवैरिणामष्टौ ॥३६॥

अन्वयः—अ-क-च-ट-त-प-य-श अष्टौ वर्गाः निजपञ्चमवैरिणां खगेशमार्जारसिंह-शुनां सर्पाखुमृगावीनां (क्रमात्) स्युः ॥३६॥

भा० टी०—अ वर्ग के गरुड़, कवर्ग के बिलार, चवर्ग के सिंह, टवर्ग के श्वान, तवर्ग के सर्प, पवर्ग के मूषक, यवर्ग के मृग और शवर्ग के भेड़ा स्वामी हैं। इनमें अपने वर्ग से पाँचवाँ वर्ग शत्रु का है। जैसे अवर्ग का तवर्ग।

एक राशि और नक्षत्र में विशेष—

राश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्यान्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव ।
नाडीदोषो नो गणानां च दोषो नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात् ॥३७॥

अन्वयः—द्वयोः (वरकन्ययोः) राश्यैक्ये चेत् भिन्नं ऋक्षं, तथा नक्षत्रैक्ये यदि राशियुग्मं तदा नाडीदोषो न, गणानां च दोषः नो भवेत्। तथा नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात् ॥३७॥

भा० टी०—दोनों वर-कन्या की एक राशि हो किन्तु नक्षत्र भिन्न हो, अथवा एक नक्षत्र हो किन्तु राशि दो हो तो नाड़ी और गण का दोष नहीं होता है। यदि दोनों का एक ही नक्षत्र हो किन्तु चरण भिन्न-भिन्न हों तो भी विवाह शुभद होता है ॥३७॥

राशियों के स्वामी और नवमांश—

कुजशुक्रसौम्यशशिसूर्यचन्द्रजाः कविभौमजीवशनिसौरयो गुरुः।
इह राशिपाः क्रियमृगास्यतौलिकेन्दुभतो नवांशविधिरुच्यते बुधैः ॥३८॥

अन्वयः—इह कुजशुक्रसौम्यशशिसूर्यचन्द्रजाः कविभौमजीवशनिसौरयो गुरुः राशिपाः स्युः। क्रियमृगास्यतौलिकेन्दुभतः नवांशविधिः बुधैः उच्यते ॥३८॥

भा० टी०—मेषादि राशियों के क्रम से—भौम, शुक्र, बुध, चन्द्र, सूर्य, बुध, शुक्र, भौम, गुरु, शनि, शनि, गुरु (अर्थात् मेष के मंगल, वृष के शुक्र, मिथुन के बुध, कर्क के चन्द्रमा, सिंह के सूर्य, कन्या के बुध, तुला के शुक्र, वृश्चिक के भौम, धन के गुरु, मकर के शनि, कुम्भ के शनि, मीन के गुरु) स्वामी होते हैं। मेषादि राशियों में क्रम से मेष, मकर, तुला और कर्क से नवमांश आरम्भ होता है ॥३८॥

विशेष—प्रत्येक राशि ३० अंश की होती है। उसका नवाँ भाग ३ अंश २० कला एक नवमांश का मान होता है। इस प्रकार एक राशि में नव नवमांश होते हैं; जैसे मेष राशि में ३ अंश २० कला तक मेष का नवमांश, इसके बाद ६ अंश ४० कला तक वृष का नवमांश। इसके बाद १० अंश तक मिथुन का नवांश, इसके बाद १३ अंश २० कला तक कर्क का, इसके बाद १६ अंश ४० कला तक सिंह का, इसके बाद २० अंश तक कन्या का, इसके बाद २३ अंश २० कला तक तुला का, इसके बाद २६ अंश ४० कला तक वृश्चिक का, इसके बाद ३० अंश तक धन का नवांश रहेगा। इसी प्रकार सभी राशियों में समझना चाहिये।

नवमांश का चक्र—

मं.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	मं.	बृ.	श.	श.	गु.	राशीश
मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.।क.
मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	बु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	३।२०
वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	६।४०
मि.	मी.	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क.	१०।०
क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	१३।२०
सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सि.	वृ.	कुं.	वृ.	१६।४०
क.	मि	मी.	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	२०।०
तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	२३।२०
वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	वृ.	सिं.	वृ.	कुं.	२६।४०
ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क.	मि.	मी.	३०।०

होरा का विचार—

समगृहमध्ये शशिरविहोरा। विषमभमध्ये रविशशिनोः सा ॥३९॥

अन्वयः—समगृहमध्ये शशिरविहोरा तथा विषमभमध्ये सा (होरा) रविशशिनोः क्रमेण भवति ।।३९।।

भा० टी०—एक राशि में दो होरा होती हैं, यदि सम राशि लग्न हो तो पहले १५ अंश तक चन्द्रमा की इसके बाद ३० अंश तक रवि की होरा होती है और विषम राशि में पहले १५ अंश तक रवि की इसके बाद ३० अंश तक चन्द्रमा की होरा होती है ।।३९।।

त्रिंशांश और द्रेष्काण का विचार—

शुक्र-ज्ञ-जीव-शनि-भूतनयस्य बाण-
शैलाष्टपञ्चविशिखाः समराशिमध्ये ।
त्रिंशांशका विषमभे विपरीतमस्माद्
द्रेष्काणकाः प्रथमपञ्चनवाधिपानाम् ।।४०।।

अन्वयः—समराशिमध्ये बाणशैलाष्टपंचविशिखाः (भागाः) क्रमेण शुक्रज्ञजीवशनिभूतनयस्य त्रिंशांशका भवति। विषमभे अस्मात् विपरीतं, (अर्थात् विशिखपंचाष्टशैलवाणाः क्रमेण भूतनयशनिजीवबुधशुक्राणां त्रिंशांशकाः)। प्रथमपञ्चनवधियानाम् द्रेष्काणकाः स्युः ।।४०।।

भा० टी०—यदि सम राशि लग्न हो तो पहले ५ अंश तक शुक्र का, इसके बाद ७ अंश तक बुध का, फिर ८ अंश तक गुरु का, फिर ५ अंश तक शनि, इसके बाद ५ अंश तक भौम का त्रिंशांशक होता है। यदि विषम राशि लग्न हो तो इनका उलटा अर्थात् पहले ५ अंश तक भौम का, इसके बाद ५ अंश तक शनि का, फिर ८ अंश तक गुरु का, फिर ७ अंश तक बुध का, इसके बाद ५ अंश तक शुक्र का त्रिंशांशक होता है। एक राशि में १० अंश के, ३ द्रेष्काण होते हैं। पहला द्रेष्काण १० अंश तक उसी राशि का, दूसरा २० अंश तक उस राशि से पाँचवीं राशि का और तीसरा ३० अंश तक उस राशि से नवीं राशि के अधिपति का होता है ।।४०।।

त्रिंशांशकचक्रम्—

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	रा.
५ मं.	५ शु.	५ मं.	५ शु.	५ मं.	५ शु.	५ मं.	५ शु.	५ मं.	५ शु.	५ मं.	५ शु.	अं. स्वा.
५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	भ. स्वा.
८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	८ बृ.	अं. स्वा.
७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	७ बु.	५ श.	अं. स्वा.
५ शु.	५ मं.	५ शु.	५ मं.	५ शु.	५ म.	५ शु.	५ म.	५ शु.	५ म.	५ शु.	५ म.	अं. स्वा.

द्वादशांश और षड्वर्ग का विचार—

स्याद् द्वादशांश इह राशित एव गेहं
होराऽथ दृक्कनवमांशकसूर्यभागाः ।
त्रिंशांशकश्च षडिमे कथितास्तु वर्गाः
सौम्यैः शुभं भवति चाऽशुभमेव पापैः ॥४१॥

अन्वयः—इह राशितः एव द्वादशांशः स्यात् । अथ गेहं, होरा, दृक्कनवमांशक-सूर्यभागाः त्रिंशांशकश्च इमे षड्वर्गाः कथिताः । तत्र सौम्यैः शुभं भवति, पापैः च अशुभं भवति ॥४१॥

भा० टी०—एक राशि में २ अंश ३० कला के १२ द्वादशांश होते हैं, जो कि उसी राशि से ही क्रम से होते है, अर्थात् पहला द्वादशांश उसी राशि का, दूसरा उससे दूसरी राशि का, तीसरा उससे तीसरी राशि का इत्यादि । गृह, होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश और त्रिंशांशक यही षड्वर्ग कहे जाते हैं । इसमें शुभ ग्रह का षड्वर्ग अधिक हो तो वह लग्न शुभ फलदायक और पापग्रह का षड्वर्ग अधिक होने से अशुभ लग्न होती है ॥४१॥

उदाहरण—जैसे लग्न ५।११।१५।२० है तो राशीश बुध हुआ । सम राशि होने से पहली होरा १५ अंश तक चन्द्रमा की हुई । १० अंश से अधिक होने से दूसरा द्रेष्काण शनि का हुआ, कन्यामें चौथा नवमांश भौम का हुआ, पाँचवाँ द्वादशांश शनि का हुआ, और बुध का त्रिंशांशक हुआ । अतः—

गृह—बुध
होरा—चन्द्रमा
द्रेष्काण—शनि
नवमांश—भौम
द्वादशांश—शनि
त्रिंशांशक—बुध

} शुभ पाप दोनों का समान वर्ग होने से लग्न सम है ।

नक्षत्र वश स्वामी आदि के लिये विशेष विचार—

सेव्याधमर्णयुवतीनगरादिभं चेत्
पूर्वं हि भृत्यधनिभर्तृपुरादिसद्भात् ।
सेवाविनाश-धननाशन-भर्तृनाश-
ग्रामादिसौख्यहृदिदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥४२॥

अन्वयः—भृत्यधनिभर्तृपुरादिसद्भात् पूर्वं चेत् सेव्याधमर्णनगरादिभं स्यात् तदा सेवाविनाश-धननाशन-भर्तृनाश-ग्रामादिसौख्यहृत् इदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥४२॥

भा० टी०—यदि नौकर के जन्म-नक्षत्र से पहले स्वामी का नक्षत्र हो तो सेवा का विनाश, ऋण देनेवाले के नक्षत्र से पहले ऋण लेनेवाले का नक्षत्र हो तो

धन का नाश, पति के नक्षत्र से पहले स्त्री का नक्षत्र अर्थात् स्त्री के नक्षत्र से दूसरा पति का नक्षत्र हो (इसी को नृदूर दोष कहते हैं) तो पति का नाश और ग्राम के नक्षत्र से पूर्व यदि ग्राम में वास करनेवाले का हो तो ग्राम के सुख का नाश होता है ॥४२॥

नक्षत्र-लग्न और तिथि-गण्डान्त——

ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिकायुग्मं च मूलाश्विनी-
पित्र्यादौ घटिकाद्वयं निगदितं तद्भस्य गण्डान्तकम् ।
कर्काल्यण्डजभान्ततोऽर्धघटिका सिंहाश्वमेषादिगा
पूर्णान्ते घटिकात्मकं त्वशुभदं नन्दातिथेश्चादिमम् ॥४३॥

अन्वयः——ज्येष्ठापौष्णभसार्पभान्त्यघटिकायुग्मं, च (पुनः) मूलाश्विनी-पित्र्यादौ घटिकाद्वयं तद्भस्य गण्डान्तकं निगदितम् । कर्काल्यण्डजभान्ततः अर्ध-घटिका, सिंहाश्वमेषादिगा (अर्धघटिका) तथा पूर्णान्ते घटिकात्मकं च नन्दातिथेः आदिमं घटिकात्मकं गण्डान्तकं तु अशुभदं निगदितम् ॥४३॥

भा० टी०——ज्येष्ठा, रेवती, श्लेषा इन नक्षत्रों के अन्त की २ घटी, मूल, अश्विनी, मघा इन नक्षत्रों के आदि की २ घटी नक्षत्र गण्डान्त होता है। कर्क, वृश्चिक, मीन इन राशियों के अन्त की आधी घटी और सिंह, धन, मेष के आदि की आधी घटी लग्न गण्डान्त होता है। पूर्णा तिथि के अन्त में १ घटी और नन्दा तिथि के आदि में १ घटी तिथि गण्डान्त होता है। ये तीनों गण्डान्त अशुभ होते हैं ॥४३॥

कर्त्तरी योग का फल——

लग्नात् पापावृज्वनृजू व्ययार्थस्थौ यदा तदा ।
कर्तरी नाम सा ज्ञेया मृत्युदारिद्र्यशोकदा ॥४४॥

अन्वयः——यदा लग्नात् पापौ ऋज्वनृजू व्ययार्थस्थौ स्यातां तदा कर्त्तरी नाम (योगः) ज्ञेया। सा मृत्यु-दारिद्र्य-शोकदा भवति ॥४४॥

भा० टी०——जब लग्न से (विवाह लग्न से) बारहवें और दूसरे मार्गी और वक्री पापग्रह हों तो कर्त्तरी योग होता है (अर्थात् १२वें मार्गी पापग्रह और २रे वक्री पापग्रह हों) ऐसे योग में मृत्यु, दारिद्र्य और शोक होता है ॥४४॥

सग्रह दोष——

चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते दारिद्र्यं मरणं शुभम् ।
सौख्यं सापत्न्यवैराग्ये पापद्वययुते मृतिः ॥४५॥

अन्वयः——चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते सति क्रमेण दारिद्र्यं, मरणं, शुभं, सौख्यं, सापत्न्यवैराग्ये (भवति) पापद्वययुते चन्द्रे मृतिः स्यात् ॥४५॥

भा० टी०——विवाह-समय में चन्द्रमा सूर्यादि ग्रहों से युत हो तो क्रम से अर्थात् सूर्य से युत हो तो दरिद्रता, भौम से युत हो तो मरण, बुध से युत हो तो शुभ, गुरु

से युत हो तो सुख, शुक्र से युत हो तो सापत्न्य (सवत), शनि से युत हो तो वैराग्य होता है। यदि चन्द्रमा दो पापग्रहों से युत हो तो मृत्यु होती है ।।४५।।

अष्टम लग्न का दोष और परिहार—

जन्मलग्नभयोर्मृत्युराशौ नेष्टः करग्रहः।
एकाधिपत्ये राशीशमैत्रे वा नैव दोषकृत् ।।४६।।

अन्वयः—जन्मलग्नभयोः मृत्युराशौ करग्रहः नेष्टः स्यात्। एकाधिपत्ये वा राशीशे मैत्रे नैव दोषकृत् स्यात् ।।४६।।

भा० टी०—जन्मलग्न और जन्मराशि से अष्टम राशिलग्न में विवाह शुभद नहीं होता है। यदि जन्मलग्न या जन्मराशि और अष्टम लग्न इनका स्वामी एक ही ग्रह हो, अथवा दोनों के स्वामियों की मित्रता हो तो अष्टम लग्न का दोष नहीं होता है ।।४६।।

अष्टम लग्न का परिहार—

मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियोऽष्टमं लग्नं यदा नाऽष्टमगेहदोषकृत्।
अन्योन्यमित्रत्ववशेन सा वधूर्भवेत्सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी ।।४७।।

अन्वयः—मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियः यदा अष्टमं लग्नं भवेत् तदा अष्टमगेह-दोषकृत् न स्यात्। अन्योन्यमित्रत्ववशेन सा वधूः सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी भवेत्।

भा० टी०—यदि जन्मलग्न या जन्म-राशि से आठवीं लग्न मीन, वृष, कर्क, वृश्चिक, मकर और कन्या हो तो अष्टम लग्न का दोष नहीं होता है; क्योंकि राशि-स्वामियों की आपस में मित्रता होने के कारण स्त्री पुत्र, आयुष्य और गृह के सुख को भोगनेवाली होती है ।।४७।।

लग्न में अष्टम लग्न और नवांश का विचार—

मृतिभवनांशो यदि च विलग्ने तदधिपतिर्वा न शुभकरः स्यात्।
व्ययभवनं वा भवति तदंशस्तदधिपतिर्वा कलहकरः स्यात् ।।४८।।

अन्वयः—मृतिभवनांशः वा तदधिपतिः यदि विलग्ने भवेत् तदा शुभकरः न स्यात्। यदि व्ययभवनं वा तदंशः वा तदधिपतिः यदि विलग्ने भवति तदा कलहकरः स्यात् ।।४८।।

भा० टी०—यदि अष्टम भाव का नवांश अथवा अष्टमेश विवाहकालिक लग्न में हो तो शुभकर नहीं होता है। यदि जन्मराशि से १२वीं राशि अथवा उसका नवमांश या उसका अधिपति लग्न में हो तो विवाह में कलहकारक होता है ।।४८।।

नक्षत्रों की विषघटी—

खरामतो ३० ऽन्त्यादितिवह्निपित्र्यभे
खवेदतः ४० के रदत ३२ श्च सार्पभे।

खबाणतो ५० ऽश्वे धृतितो १८ ऽर्यमम्बुपे
कृते २० भगत्वाष्ट्रभविश्वजीवभे ॥४९॥
मनो १४ द्विदैवानिलसौम्यशाक्रभे
कुपक्षतः २१ शैवकरेऽष्टि १६ तोऽजभे।
युगाश्वितो २४ बुध्न्यभतोययाम्यभे
खचन्द्रतो १० मित्रभवासवश्रुतौ ॥५०॥
मूलेऽङ्गबाणा ५६ द्विषनाडिकाः कृता
वर्ज्याः शुभेऽथो विषनाडिकाध्रुवाः।
निघ्ना भभोगेन खतर्क ६० भाजिताः
स्फुटा भवेयुर्विषनाडिकास्तथा ॥५१॥

अन्वयः—अन्त्यादितिवह्निपित्र्यभे खरामतः, के खवेदतः, सार्पभे रदतः, अश्वे खबाणतः, अर्यमाम्बुपे धृतितः, भगत्वाष्ट्रभविश्वजीवभे कृतेः, द्विदैवानिल-सौम्यशाक्रभे मनोः, शैवकरे कुपक्षतः, अजभे अष्टितः, बुध्न्यभतोययाम्यभे युगाश्वितः, मित्रभवासवश्रुतौ खचन्द्रतः, मूले अङ्गबाणात् कृताः (घट्यः) विषनाडिकाः शुभे वर्ज्याः। अथो विषनाडिकाध्रुवाः भभोगेन निघ्नाः खतर्क-भाजिताः तदा स्फुटा भवेयुः ॥४९-५१॥

भा० टी०—रेवती, पुनर्वसु, कृत्तिका, मघा इनके ३० घटी के बाद ४ घटी, रोहिणी के ४० घटी के बाद, श्लेषा के ३२ घटी के बाद, अश्विनी के ५० घटी के बाद, उत्तराफाल्गुनी, शतभिष के १८ घटी के बाद, पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा, उत्तरा-षाढ़, पुष्य के २० घटी के बाद, विशाखा, स्वाती, मृगशिरा, ज्येष्ठा के १४ घटी के बाद, आर्द्रा, हस्त के २१ घटी के बाद, पूर्वभाद्रपद के १६ घटी के बाद, उत्तरा भाद्रपद, पूर्वाषाढ़, भरणी के २४ घटी के बाद, अनुराधा, धनिष्ठा, श्रवण के १० घटी के बाद, मूल के ५६ घटी के बाद, चार ४ घटी मध्यम मान से विषघटी होती है, यह शुभकार्य में त्याज्य है। तथा नक्षत्रों के ध्रुवों को भभोग से गुणा कर उसमें ६०का भाग दे तो स्पष्ट ध्रुवा होता है,इसके बाद ४ घटी विषघटी होती है॥४९-५१॥

दिन के मुहूर्त—

गिरिशभुजगमित्राः पित्र्यवस्वम्बुविश्वे-
ऽभिजिदथ च विधातापीन्द्र इन्द्रानलौ च।
निर्ऋतिरुदकनाथोऽप्यर्यमाथो भगः स्युः
क्रमश इह मुहूर्ता वासरे बाणचन्द्राः ॥५२॥

अन्वयः—गिरिश-भुजग-मित्राः, पित्र्य-वस्वम्बु-विश्वे, अभिजित्, अथ च विधाता, अपि च इन्द्रः, इन्द्रानलौ, निर्ऋतिः, उदकनाथः, अपि, अर्यमा, अथो भगः इमे बाणचन्द्राः मुहूर्ताः क्रमशः वासरे स्युः ॥५२॥

भा० टी०—गिरिश, भुजग, सूर्य, पितृ, वसु, जल, विश्वेदेव, अभिजित्, विधाता, इन्द्र, इन्द्राग्नि, निर्ऋति, वरुण, अर्यमा, भग ये दिन में क्रम से १५ मुहूर्त्तों के स्वामी हैं। अर्थात् दिनमान का १५वाँ भाग एक मुहूर्त्त का मान होता है। यहाँ मुहूर्त्तेश से उनका नक्षत्र समझना चाहिये ॥५२॥

रात्रि के मुहूर्त्त—

शिवोऽजपादादष्टौ स्युर्भेशा अदितिजीवकौ।
विष्ण्वर्कत्वाष्ट्रमरुतो मुहूर्ता निशि कीर्त्तिताः ॥५३॥

अन्वयः—शिवः, अजपादात् अष्टौ भेशाः, अदिति-जीवकौ, विष्ण्वर्कत्वाष्ट्र-मरुतः, एते निशि मुहूर्त्ताः कीर्त्तिताः ॥५३॥

भा० टी०—शिव, अजपाद से आठ नक्षत्रेश (अहिर्बुध्न्य, पूषा, अश्विनी-कुमार, यम, अग्नि, ब्रह्मा, चन्द्रमा) अदिति, गुरु, विष्णु, सूर्य, त्वाष्ट्र, मरुत्, ये १५ नक्षत्रेश रात्रि के १५ मुहूर्त्तों के स्वामी हैं ॥५३॥

वारों में त्याज्य मुहूर्त्त—

रवावर्यमा ब्रह्मरक्षश्च सोमे कुजे वह्निपित्र्ये बुधे चाऽभिजित् स्यात्।
गुरौ तोयरक्षो भृगौ ब्रह्मपित्र्ये शनावीशसार्पौ मुहूर्ता निषिद्धाः ॥५४॥

अन्वयः—रवौ अर्यमा, सोमे ब्रह्मरक्षः, कुजे वह्निपित्र्ये, बुधे अभिजित्, गुरौ तोयरक्षः, भृगौ ब्रह्मपित्र्ये, शनौ ईशसार्पौ इमे मुहूर्त्ताः निषिद्धाः ज्ञेयाः ॥५४॥

भा० टी०—रविवार को अर्यमा, सोमवार को ब्रह्म और रक्ष, बुधवार को अभिजित्, गुरुवार को तोय-रक्ष, शुक्रवार को ब्रह्म-पित्र्य और शनिवार को ईश-सार्प, मुहूर्त्त त्याज्य हैं ॥५४॥

विवाह में ग्राह्य नक्षत्र और अभिजित् मुहूर्त्त—

निर्वेधैः शशिकरमूलमैत्रपित्र्य-
ब्राह्मान्त्योत्तरपवनैः शुभो विवाहः।
रिक्तामारहिततिथौ शुभेऽह्नि वैश्व-
प्रान्त्यांघ्रिः श्रुतितिथिभागतोऽभिजित् स्यात् ॥५५॥

अन्वयः—निर्वेधैः शशिकरमूलमैत्रपित्र्यब्राह्मान्त्योत्तरपवनैः रिक्तामारहित-तिथौ, शुभे अह्नि विवाहः शुभः स्यात्। तथा वैश्वप्रान्त्यांघ्रिः श्रुतितिथि-भागतः अभिजित् स्यात् ॥५५॥

भा० टी०—मृगशिरा, हस्त, मूल, अनुराधा, मघा, रोहिणी, रेवती, तीनों उत्तरा, स्वाती वेध रहित इन नक्षत्रों में रिक्ता, अमावास्या को छोड़कर अन्य तिथियों में शुभग्रह के दिन विवाह शुभद होता है। उत्तराषाढ़ का चतुर्थ चरण और श्रवण के आरंभ से १५वाँ भाग दोनों मिलकर अभिजित् का मान होता है ॥५५॥

विवाह में पञ्चशलाका चक्र—

वेधोऽन्योन्यमसौ विरिञ्च्यभिजितोर्याम्यानुराधर्क्षयो-
र्विश्वेन्द्वोर्हरिपित्र्ययोर्ग्रहकृतो हस्तोत्तराभाद्रयोः ।
स्वाती-वारुणयोर्भवेन्निर्ऋतिभादित्योस्तथोफान्त्ययोः
खेटे तत्र गते तुरीयचरणाद्योर्वा तृतीयद्वयोः ॥५६॥
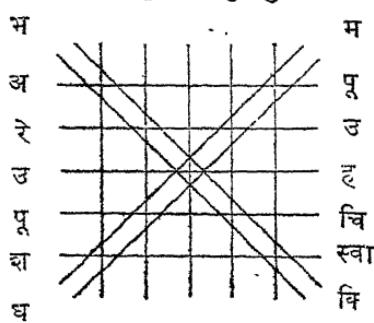
अन्वयः—विरिञ्च्यभिजितोः, याम्यानुराधर्क्षयोः, विश्वेन्द्वोः, हरिपित्र्ययोः हस्तोत्तराभाद्रयोः, स्वातीवारुणयोः, निर्ऋतिभादित्योः तथा उफान्त्ययोः, ग्रहकृतः अन्योन्यं असौ वेधः स्यात् । तत्र गते खेटे तुरीयचरणाद्योः, तथा तृतीयद्वयोः चरणयोर्मिथः वेधः स्यात् ॥५६॥

भा० टी०—रोहिणी अभिजित् का, भरणी अनुराधा का, उत्तरापाढ़ मृगशिरा का, श्रवण मघा का, हस्त उत्तराभाद्रपद का, स्वाती शतभिष का, मूल पुनर्वसु का, उत्तराफाल्गुनी रेवती का, परस्पर ग्रहकृत यह वेध होता है। इसमें एक नक्षत्र के चौथे चरण पर स्थित ग्रह उसके दूसरे नक्षत्र के प्रथम चरण को और तीसरे चरण पर स्थित ग्रह दूसरे नक्षत्र के दूसरे चरण को वेध करता है ॥५६॥

जैसे—कोई ग्रह उत्तरापाढ़ पर है तो वह मृगशिरा को वेध करता है। यदि मृगशिरा पर हो तो उत्तरापाढ़ को वेध करता है। यदि मृगशिरा के चौथे चरण पर ग्रह हो तो उत्तराषाढ़ के प्रथम चरण को वेध करता है। यदि दूसरे चरण पर हो तो तीसरे चरण को वेध करेगा। इसी प्रकार अन्य नक्षत्रों को भी समझना चाहिये।

पञ्चशलाका चक्र—

विवाह से अन्यत्र सप्तशलाका वेध—

शाक्रेज्ये शतभानिले जलशिवे पौष्णार्यमर्क्षे वसु-
द्वीशे वैश्वसुधांशुभे हयभगे सार्पानुराधे मिथः ।
हस्तोपान्तिमभे विधातृविधिभे मूलादिती त्वाष्ट्रभा-
जाङ्घ्री याम्यमघे कृशानुहरिभे विद्धे कुभृद्रेखिके ॥५७॥

अन्वयः——कुभृद्रेखिके शाक्रेज्ये, शतभानिले, जलशिवे, पौष्णार्यमर्क्षे, वसुद्वीशे, वैश्वसुधांशुभे, हयभगे, सार्पानुराधे, हस्तोपान्तिमभे, त्रिधातृ-विधिभे, मूलादिती, त्वाष्ट्रभाजांघ्री, याम्यमघे, कृशानुहरिभे मिथो विद्धे भवतः ॥५७॥

भा० टी०——विवाह से अन्यत्र कार्यों में सप्तशलाका चक्र में ज्येष्ठा पुष्य का, शतभिष स्वाती का, पूर्वाषाढ़ आर्द्रा का, रेवती उत्तराफाल्गुनी का, धनिष्ठा विशाखा का, उत्तराषाढ़ मृगशिरा का, अश्विनी पूर्वाफाल्गुनी का, श्लेषा अनुराधा का, हस्त उत्तराभाद्रपद का, रोहिणी अभिजित् का, मूल पुनर्वसु का, चित्रा पूर्वाभाद्रपद का, भरणी मघा का और कृत्तिका श्रवण का परस्पर वेध होता है ॥५७॥

सप्तशलाका चक्र——

क्रूर ग्रह से युक्त नक्षत्र का परिहार——

ऋक्षाणि क्रूरविद्धानि क्रूरभुक्तादिकानि च।
भुक्त्वा चन्द्रेण मुक्तानि शुभार्हाणि प्रचक्षते ॥५८॥

अन्वयः——क्रूरविद्धानि, क्रूरभुक्तादिकानि च ऋक्षाणि चन्द्रेण भुक्त्वा मुक्तानि शुभार्हाणि प्रचक्षते ॥५८॥

भा० टी०——क्रूर ग्रह से विद्ध नक्षत्र, क्रूर ग्रहने जिस नक्षत्र को भोगकर छोड़ दिया हो अथवा पापग्रह से युक्त नक्षत्र या जिस पर पापग्रह जानेवाला हो ऐसे नक्षत्रों को जब चन्द्रमा भोगकर छोड़ दे तब वे शुभक्रिया के उपयुक्त होते हैं ॥५८॥

लत्तादोष-विचार——

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भं सप्तगोजातिशरैर्मितं हि।
संलत्तयन्तेऽर्कशनीज्यभौमाः सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात् ॥५९॥

अन्वयः——ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे सप्तगोजातिशरैर्मितं भं संलत्तयन्ते तथा अर्कशनीज्यभौमा पुरस्तात् सूर्याष्टतर्काग्निमितं भं संलत्तयन्ते ॥५९॥

भा० टी०—बुध जिस नक्षत्र पर है उससे पीछे ७वें नक्षत्र पर, राहु अपने नक्षत्र से पीछे ९वें पर, पूर्ण चन्द्रमा २२वें नक्षत्र पर और शुक्र अपने नक्षत्र से पीछे ५वें नक्षत्र पर तथा सूर्य अपने नक्षत्र से आगे १२वें नक्षत्र पर, शनि अपने नक्षत्र से आगे ८वें नक्षत्र पर, गुरु अपने नक्षत्र से ६ठे नक्षत्र पर और भौम अपने नक्षत्र से आगे ३रे नक्षत्र पर लत्ता दोष करता है ।।५९।।

पातदोष का विचार—

हर्षणवैधृतिसाध्यव्यतिपातकगण्डशूलयोगानाम् ।
अन्ते यन्नक्षत्रं पातेन निपातितं तत्स्यात् ।।६०।।

अन्वयः—हर्षण-वैधृति-साध्य-व्यतिपातक-गण्ड-शूलयोगानां अन्ते यत् नक्षत्रं तत् पातेन निपातितं स्यात् ।।६०।।

भा० टी०—हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतीपात, गण्ड, शूल, इन योगों के अन्त में जो नक्षत्र होता है वह पात योग से दूषित होता है ।।६०।।

क्रान्तिसाम्यदोष का विचार—

पञ्चास्याजौ गो-मृगौ तौलिकुम्भौ कन्या-मीनौ कर्क्यली चापयुग्मे ।
तत्राऽन्योन्यं चन्द्रभान्वोर्निरुक्तं क्रान्तेः साम्यं नो शुभं मङ्गलेषु ।।६१।।

अन्वयः—पञ्चास्याजौ, गो-मृगौ, तौलिकुम्भौ, कन्या-मीनौ, कर्क्यली, चापयुग्मे, तत्र अन्योन्यं चन्द्रभान्वोः स्थितयोः क्रान्तेः साम्यं निरुक्तं, मङ्गलेषु नो शुभं स्यात् ।।६१।।

भा० टी०—सिंह-मेष, वृष-मकर, तुला-कुम्भ, कन्या-मीन, कर्क-वृश्चिक, धन-मिथुन, इन दोनों राशियों में एक पर चन्द्रमा और दूसरे पर सूर्य हो (अर्थात् सिंह पर चन्द्रमा, मेष पर सूर्य हो) तो क्रान्तिसाम्य दोष होता है जो शुभ कार्य में शुभद नहीं होता है ।।६१।।

खार्जूर अथवा एकार्गल दोष—

व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वशूलान्त्यवज्रे परिघातिगण्डे ।
योगे विरुद्धे त्वभिजित्समेतः खार्जूरमर्काद्विषमे शशी चेत् ।।६२।।

अन्वयः—व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वशूलान्त्यवज्रे परिघातिगण्डे विरुद्धे योगे चेत् अभिजित्समेतः शशी अर्कात् विषमे तदा खार्जूरं स्यात् ।।६२।।

भा० टी०—व्याघात, गण्ड, व्यतीपात, विष्कम्भ, शूल, वैधृति, वज्र, परिघ, अतिगण्ड इन अशुभ योगों के दिन अभिजित् नक्षत्र के साथ गिनने से चन्द्रमा यदि सूर्य के नक्षत्र से विषम नक्षत्र पर हो तो उस दिन खार्जूर दोष होता है ।।६२।।

उपग्रह दोष का विचार—

शराष्टदिक्शक्रनगातिधृत्यस्तिथिर्धृतिश्च प्रकृतेश्च पञ्च ।
उपग्रहाः सूर्यभतोऽब्जताराः शुभा न देशे कुरुबाह्लिकानाम् ।।६३।।

अन्वयः——(यदि) सूर्यभतः अब्जताराः शराष्टदिक्शक्रनगातिधृत्यः तिथिः, धृतिः, प्रकृतेः पञ्च (स्युस्तदा) उपग्रहाः स्युः । कुरुबाह्लिकानां देशे न शुभा भवन्ति ॥६३॥

भा० टी०——यदि सूर्य के नक्षत्र से ५।८।१०।१४।७।१९।१५।१८।२१।२२।२३।२४।२५ इनमें से किसी संख्या का चन्द्र नक्षत्र हो तो उपग्रह दोष होता है। वह कुरु देश (कुरुक्षेत्र) और बाह्लिक देश में विवाह में शुभद नहीं होता है ॥६३॥

पात आदि दोषों का परिहार और अर्धयाम मुहूर्त्त का विचार——

पातोपग्रहलत्तासु नेष्टोऽङ्घ्रिः खेटपत्समः ।
वारस्त्रिघ्नोऽष्टभिस्तष्टः सैकः स्यादर्धयामकः ॥६४॥

अन्वयः——पातोपग्रहलत्तासु खेटपत्समः अङ्घ्रिः नेष्टः स्यात् । वारः त्रिघ्नः अष्टभिस्तष्टः सैकः अर्धयामकः स्यात् ॥६४॥

भा० टी०——पात, उपग्रह, लत्ता इन दोषों में ग्रह के चरण के समान ही नक्षत्र का चरण अशुभ होता है। रविवार से वर्तमान वार-संख्या को ३ से गुणा कर आठ से भाग देकर शेष में एक जोड़ देने से अर्धयाम होता है ॥६४॥

उदाहरण——जैसे गुरुवार की संख्या ५ को ३ से गुणा किया तो १५ हुआ। इसमें आठ का भाग देने से शेष ७ बचा, इसमें एक जोड़ देने से ८ हुआ; अतः गुरुवार को ८वाँ अर्धयाम होगा।

कुलिक मुहूर्त्त——

शक्रार्कदिग्वसुरसाब्ध्यश्विनः कुलिका रवेः ।
रात्रौ निरेकास्तिथ्यंशाः शनौ चान्त्योऽपि निन्दितः ॥६५॥

अन्वयः——रवेः (सकाशात्) शक्रार्कदिग्वसुरसाब्ध्यश्विनः तिथ्यंशा कुलिकाः स्युः । ते निरेकाः रात्रौ कुलिकाः स्युः । शनौ अन्त्योऽपि निन्दितः स्यात् ॥६५॥

भा० टी०——रविवार से आरम्भ कर क्रम से १४।१२।१०।८।६।४।२ मुहूर्त्त कुलिक होता है। अर्थात् रविवार को १४वाँ, सोमवार को १२वाँ, भौमवार को १०वाँ, बुधवार को ८वाँ, गुरुवार को छठा, शुक्रवार को ४था और शनिवार को २रा मुहूर्त्त दिन में कुलिक होता है। और रात्रि में इन्हीं वारों में उक्त मुहूर्त्तों में एक घटाने से कुलिक मुहूर्त्त होता है। जैसे रविवार की रात्रि में १३वाँ एवं चन्द्रवार को ११वाँ इसी प्रकार अन्य वारों में भी समझना। तथा शनिवार को अन्त का मुहूर्त्त भी निन्दित है ॥६५॥

दग्ध तिथि——

चापान्त्यगे गोघटगे पतङ्गे कर्काजगे स्त्रीमिथुने स्थिते च ।
सिंहालिगे नक्रघटे समाः स्युस्तिथ्यो द्वितीयाप्रमुखाश्च दग्धाः ॥६६॥

अन्वयः——चापान्त्यगे, गोघटगे, कर्काजगे, स्त्रीमिथुने, सिंहालिगे, नक्रघटे पतङ्गे द्वितीया प्रमुखाः समाः तिथ्यः दग्धाः स्युः ॥६६॥

भा० टी०—धन, मीन के सूर्य में द्वितीया तिथि, वृष, कुम्भ के सूर्य में चतुर्थी तिथि, कर्क मेष के सूर्य में षष्ठी तिथि, तथा मिथुन के सूर्य में अष्टमी तिथि, सिंह वृश्चिक के सूर्य में दशमी तिथि, मकर तुला के सूर्य में द्वादशी तिथि दग्ध होती है ॥६६॥

जामित्र दोष विचार—

लग्नाच्चन्द्रान्मदनभवनगे खेटे न स्यादिह परिणयनम्।
किं वा बाणाशुगमितलवगे जामित्रं स्यादशुभकरमिदम् ॥६७॥

अन्वयः—लग्नात् वा चन्द्रात् मदनभवनगे खेटे परिणयनं न स्यात्। किंवा बाणाशुगमितलवगे खेटे जामित्रं स्यात्, इह परिणयने इदं अशुभकरं स्यात् ॥६७॥

भा० टी०—लग्न से या चन्द्रमा से विवाहकालिक लग्न से सातवें कोई ग्रह हो तो उस लग्न में विवाह नहीं करना चाहिये। अथवा ५५वें अंश पर कोई ग्रह हो तो यह सूक्ष्म जामित्र होता है। यह अशुभकर होता है। इसमें भी विवाह नहीं करना चाहिये ॥६७॥

उदाहरण—जैसे चन्द्रमा कन्या राशि के ४थे नवांश में है और मीन राशि के चौथे नवांश में मंगल है, अतः सूक्ष्म जामित्र हुआ; क्योंकि कन्या का ६ नवमांश और कुंभ तक ५ राशियों का ४५ नवमांश और ४ मीन का कुल ५५ नवमांश हुए ॥६७॥

एकार्गल आदि दोषों का परिहार—

एकार्गलोपग्रहपात-लत्ता-जामित्र-कर्त्तर्युदयास्तदोषाः ।
नश्यन्ति चन्द्रार्कबलोपपन्ने लग्ने यथार्काभ्युदये तु दोषा ॥६८॥

अन्वयः—चन्द्रार्कबलोपपन्ने लग्ने एकार्गलोपग्रहपातलत्ताजामित्रकर्त्तर्युदयास्त-दोषाः नश्यन्ति, यथा अर्काभ्युदये दोषा नश्यन्ति ॥६८॥

भा० टी०—चन्द्रमा सूर्य के बल से युक्त लग्न हो तो एकार्गल, उपग्रह, पात, लत्ता, जामित्र, कर्त्तरी, उदयास्त आदि दोष नष्ट हो जाते हैं, जैसे सूर्य के उदय होने से रात्रिजन्य दोष नष्ट हो जाता है ॥६८॥

देश के अनुसार दोषों का परिहार—

उपग्रहर्क्षं कुरुबाह्लिकेषु कलिङ्ग-बङ्गेषु च पातितं भम्।
सौराष्ट्र-शाल्वेषु च लत्तितं भं त्यजेत्तु विद्धं किल सर्वदेशे ॥६९॥

अन्वयः—कुरुबाह्लिकेषु देशेषु उपग्रहर्क्षं, च (पुनः) कलिङ्ग-बङ्गेषु पातितं भं, सौराष्ट्रशाल्वेषु लत्तितं भं त्यजेत्। किल (निश्चयेन) विद्धं सर्वदेशे त्यजेत् ॥६९॥

भा० टी०—कुरु (कुरुक्षेत्र), वाह्लिक (काश्मीर के समीप) देश में उपग्रह नक्षत्र, कलिंग (उड़ीसा और मद्रास के बीच का प्रान्त), बंग (बंगाल) में पात से दूषित नक्षत्र, सौराष्ट्र (सूरत), शाल्व (हिमप्रदेश) देश में लत्ता दोष को त्याग देना चाहिये और सभी देशों में विद्ध नक्षत्र को त्याग देना चाहिये ॥६९॥

दग्धदोष का विचार—

शशाङ्कसूर्यर्क्षयुतेर्भशेषे खं भूयुगाङ्गानि दशेशतिथ्यः।
नागेन्दवोऽङ्केन्दुमिता नखाश्चेद्भवन्ति चैते दग्धयोगसञ्ज्ञाः ॥७०॥

अन्वयः—शशाङ्कसूर्यर्क्षयुतेः भशेषे खं भूयुगाङ्गानि दशेशतिथ्यः नागेन्दवः अङ्केन्दुमिताः नखाः चेत् भवन्ति तदा दग्धयोग संज्ञाः भवन्ति ॥७०॥

भा० टी०—चन्द्र-नक्षत्र की संख्या और सूर्य-नक्षत्र की संख्या को एक में जोड़कर सत्ताईस (२७) का भाग देने से यदि शेष ०।१।४।६।१०।११।१५।१८।१९। २० इनमें कोई बचे तो क्रम से दस योग होते हैं ॥७०॥

फल सहित दस योगों के नाम—

वाताभ्राग्निमहीपचोरमरणं रुग्वज्रवादाः क्षति-
र्योगाङ्के दलिते समे मनुयुतेऽथौजे तु सैकेऽर्धिते।
भं दास्रादथ सम्मितास्तु मनुभी रेखाः क्रमात्संलिखेद्
वेधोऽस्मिन् ग्रहचन्द्रयोर्न शुभदः स्यादेकरेखास्थयोः ॥७१॥

अन्वयः—वाताभ्राग्निमहीपचोरमरणं रुग्वज्रवादाः क्षतिः (इति क्रमेण दशयोगनामानि फलानि च ज्ञेयानि) अथ समे योगाङ्के दलिते मनुयुते, ओजे सैके अर्धिते दास्रात् भं ज्ञेयम्। अथ मनुभिः सम्मितारेखाः क्रमात्, संल्लिखेत् अस्मिन् एकरेखास्थयोः ग्रहचन्द्रयोः वेधः न शुभदः स्यात् ॥७१॥

भा० टी०—० शेष में वायुभय, १ शेष में मेघभय, ४ शेष में अग्निभय, ६ शेष में राजभय, १० शेष में चौरभय, ११ शेष में मृत्युभय, १५ शेष में रोगभय, १८ शेष में वज्रभय, १९ शेष में कलह, २० शेष में द्रव्य की हानि होती है। शेष बचे अंक की संख्या सम हो तो उसका आधा कर उसमें १४ जोड़ दे और विषम अंक हो तो उसमें एक जोड़कर आधा करे तो अश्विनी से नक्षत्र होता है। इसके बाद १४ रेखा लिखे, ऊपर योगांक से जो नक्षत्र आया है उसी को आदि मानकर अभिजित् सहित सभी नक्षत्रों को रेखाओं पर लिख दे, इसके बाद जो ग्रह जिस नक्षत्र पर हो उसे उसके नक्षत्र पर लिखे। यदि चक्र में चन्द्रमा (यानी योगांक का नक्षत्र) और ग्रह एक ही रेखा में पड़ें तो यह वेध शुभ नहीं होता है ॥७१॥

दक्षिणदेशीय बाणपञ्चक का विचार—

लग्नेनाढ्या याततिथ्योऽङ्कतष्टाः शेषे नागद्व्यब्धितर्केन्दुसंख्ये।
रोगो वह्नी राजचोरौ च मृत्युर्बाणश्चायं दाक्षिणात्यप्रसिद्धः ॥७२॥

अन्वयः—याततिथ्यः लग्नेन आढ्याः अंकतष्टाः नागद्व्यब्धितर्केन्दुसंख्ये शेषे सति रोगः, वह्निः, राजचोरौ मृत्युबाणश्च स्यात्, अयं (बाणः) दाक्षिणात्यप्रसिद्धो ज्ञेयः ॥७२॥

भा० टी०—शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से वर्तमान तिथि-संख्या तक गिनकर उसमें लग्न की राशि-संख्या को जोड़कर ९ से भाग दे। यदि ८ शेष बचे तो रोग, २ शेष बचे तो अग्नि, ४ शेष बचे तो राज, ६ शेष बचे तो चोर, १ शेष बचे तो मृत्यु बाण होता है। यह बाणपञ्चक दोष दाक्षिणात्य देश में प्रसिद्ध है ॥७२॥

प्राचीन मत से अन्यदेशीय बाणपञ्चक—

रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रान्तियातां-
शकमितिरथ तष्टाङ्कैर्यदा पञ्च शेषाः।
रुगनल-नृप-चौरा मृत्युसञ्ज्ञश्च बाणो
नवहृतशरशेषे शेषकैक्ये सशल्यः ॥७३॥

अन्वयः—रसगुणशशिनागाब्ध्याढ्यसंक्रान्तियातांशकमितिः अङ्कैः तष्टा यदा पञ्च शेषाः तदा क्रमेण रुगनल-नृप-चौरा मृत्युसंज्ञश्च बाणः स्यात्। शेषकैक्ये नवहृतशरशेषे सति सशल्यः स्यात् ॥७३॥

भा० टी०—सूर्य के गतांश में क्रम से ६।३।१।८।४ जोड़कर ९ से भाग देना चाहिए। यदि ५ शेष बचे तो रोग, अग्नि, राज, चौर और मृत्यु बाण होता है अर्थात् ६ जोड़कर९ से भाग देने पर ५ बचे तो रोगबाण, ३ जोड़कर ९ से भाग देने से ५ बचे तो अग्निबाण, १ जोड़ने से ५ शेष बचे तो राजबाण, ८ जोड़कर भाग देने से ५ बचे तो चौरबाण और ४ जोड़कर ९ से भाग देने पर ५ शेष बचे तो मृत्यु बाण होता है। सभी स्थान के शेषों को जोड़कर ९ से भाग दे। यदि ५ शेष बचे तो सशल्यबाण होता है ॥७३॥

तीन प्रकार से बाण का परिहार—

रात्रौ चौररुजौ दिवा नरपतिर्वह्निः सदा सन्ध्ययो-
र्मृत्युश्चाऽथ शनौ नृपो विदि मृतिर्भौमेऽग्निचौरौ रवौ।
रोगोऽथ व्रतगेहगोप-नृपसेवा-यान-पाणिग्रहे
वर्ज्याश्च क्रमतो बुधैरुगनलक्ष्मापालचौरा मृतिः ॥७४॥

अन्वयः—रात्रौ चौररुजौ, दिवा नरपतिः, सदा सन्ध्ययोः वह्निः वर्ज्यः। अथ शनौ नृपः, विदि मृतिः, भौमे अग्निचौरौ, रवौ रोगः (वर्ज्यः)। अथ व्रतगेहगोप-नृप-सेवा-यान-पाणिग्रहे क्रमतः रुगनलक्ष्मापालचौराः मृतिश्च बुधैः वर्ज्याः ॥७४॥

भा० टी०—रात में चौर और रोग बाण को, दिन में राजबाण को, दोनों सन्ध्याओं में मृत्युबाण को त्याग देना चाहिये। शनिवार को राजबाण, बुधवार को मृत्युबाण, भौमवार को अग्नि और चौरबाण, रविवार को रोगबाण को त्याग देना चाहिये। व्रतबन्ध में रोगबाण, घर छवाने में अग्निबाण, राजसेवा (नौकरी) में राजबाण, यात्रा में चौरबाण और विवाह में मृत्युबाण को त्याग देना चाहिये ॥७४॥

ग्रहों की दृष्टि का विचार—

त्र्याशं त्रिकोणं चतुरस्रमस्तं पश्यन्ति खेटाश्चरणाभिवृद्ध्या।
मन्दो गुरुर्भूमिसुतः परे च क्रमेण सम्पूर्णदृशो भवन्ति ।।७५।।

अन्वयः—त्र्याशं, त्रिकोणं, चतुरस्रं, अस्तं, खेटाः चरणाभिवृद्ध्या पश्यन्ति। च मन्दः गुरुः भूमिसुतः परे क्रमेण सम्पूर्णदृशः भवन्ति ।।७५।।

भा० टी०—ग्रह जिस स्थान में है वहाँ से तीसरे और दशम स्थान को १ चरण से, नवें और पाँचवें को २ चरण से, चौथे और आठवें को तीन चरण से और सातवें स्थान को ४ चरण से देखता है। विशेषतः शनि ३।१० स्थान को, वृहस्पति ९।५ स्थान को, मंगल ४।८ स्थान को और शेष ग्रह (रवि, चन्द्र, बुध, शुक्र) ७ वें स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ।।७५।।

लग्न-सप्तम की शुद्धि—

यदा लग्नांशेशो लवमथ तनुं पश्यति युतो
भवेद्वाऽयं वोढुः शुभफलमनल्पं रचयति।
लवद्यूनस्वामी लवमदनभं लग्नमदनं
प्रपश्येद्वा वध्वाः शुभमितरथा ज्ञेयमशुभम् ।।७६।।

अन्वयः—यदा लग्नांशेशः लवं अथवा तनुं पश्यति वा युतो (तदा) अयं वोढुः (वरस्य) अनल्पं शुभफलं रचयति। यदि लवद्यूनस्वामी लवमदनभं वा लग्नमदनं प्रपश्येत् तदा वध्वाः शुभफलं रचयति। इतरथा अशुभं ज्ञेयम् ।।७६।।

भा० टी०—यदि विवाह के समय लग्न के नवमांश का स्वामी नवमांश अथवा लग्न को देखता हो, अथवा उसमें युत हो तो वर को अधिक शुभफल को देता है। यदि लग्न के नवमांश से ७वीं राशि का स्वामी नवमांश से सप्तम राशि को देखता हो अथवा लग्न से सप्तम राशि को देखता हो तो कन्या को शुभ फल देता है। इससे भिन्न स्थिति हो तो अशुभ फल होता है ।।७६।।

लग्नेश और अंशेश के दृष्टिवश शुभाशुभ—

लवेशो लवं लग्नपो लग्नगेहं प्रपश्येन्मिथो वा शुभं स्याद्वरस्य।
लवद्यूनपोंऽशद्युनं लग्नपोऽस्तं मिथो वेक्षते स्याच्छुभं कन्यकायाः ।।७७।।

अन्वयः—लवेशो लवं, लग्नपः लग्नगेहं वा मिथः प्रपश्येत् (तदा) वरस्य शुभं स्यात्। लवद्यूनपः अंशद्युनं, लग्नपः अस्तं वा मिथः ईक्षते (तदा) कन्यकायाः शुभं स्यात् ।।७७।।

भा० टी०—यदि लग्न के नवांश का स्वामी नवमांश को और लग्नेश लग्न को देखता हो अथवा अंशेश लग्न को और लग्नेश नवमांश को देखता हो तो वर को शुभद होता है। लग्न के नवांश से ७वें घर का स्वामी नवांश से सप्तम स्थान को

और लग्नेश सप्तम स्थान को देखता हो अथवा दोनों परस्पर देखते हों तो कन्या को शुभ फल देते हैं ।।७७।।

प्रकारान्तर से शुभाशुभ—

लवपतिशुभमित्रं वीक्षतेंऽशं तनुं वा
परिणयनकरस्य स्याच्छुभं शास्त्रदृष्टम् ।
मदनलवपमित्रं सौम्यमंशंद्युनं वा
तनुमदनगृहं चेद्वीक्षते शर्म वध्वाः ।।७८।।

अन्वयः—(यदि) लवपतिशुभमित्रं अंशं तनुं वा वीक्षते (तदा) परिणयनकरस्य शास्त्रदृष्टं शुभं स्यात् । (चेत्) सौम्यं मदनलवपमित्रं अंशंद्युनं वा तनुमदनगृहं वीक्षते (तदा) वध्वाः शर्म स्यात् ।।७८।।

भा० टी०—यदि लग्न के नवांश का कोई शुभ ग्रह मित्र नवांश को अथवा लग्न को देखता हो तो वर को शास्त्रोक्त शुभफल होता है। और लग्न से सप्तमगृह के नवांश के स्वामी का कोई शुभ ग्रह मित्र नवांश से सातवें अथवा लग्न से सातवें स्थान को देखता हो तो कन्या को शुभ फल देता है ।।७८।।

संक्रान्ति-दोष

विषुवायनेषु परपूर्वमध्यमान् दिवसांस्त्यजेदितरसंक्रमेषु हि ।
घटिकास्तु षोडश शुभक्रिया विधौ परतोऽपि पूर्वमपि सन्त्यजेद्बुधः ।।७९।।

अन्वयः—विषुवायनेषु परपूर्वमध्यमान् दिवसान् त्यजेत् । इतरसंक्रमेषु हि परतः पूर्वं अपि षोडश घटिकाः शुभक्रियाविधौ बुधः संत्यजेत् ।।७९।।

भा० टी०—विषुव संक्रान्ति (मेष-तुला) और अयन-संक्रान्ति (कर्क-मकर) में पर पूर्व और मध्य दिवस विवाहादि शुभक्रिया में त्याग देना चाहिये। और अन्य संक्रान्तियों में संक्रान्ति के समय से १६ घटिका पूर्व और १६ घटिका पीछे की पंडितों को त्याग देनी चाहिये ।।७९।।

सभी ग्रहों की संक्रान्ति में त्याज्य घटी—

देवद्व्यङ्कर्तवोऽष्टाष्टौ नाड्योऽङ्का खनृपाः क्रमात् ।
वर्ज्याः संक्रमणेऽर्कादेः प्रायोऽर्कस्यातिनिन्दिताः ।।८०।।

अन्वयः—अर्कादेः संक्रमणे क्रमात् देवद्व्यङ्कर्तवः अष्टाष्टौ अङ्काः खनृपाः नाड्यः वर्ज्याः। प्रायः अर्कस्य अतिनिन्दिताः भवन्ति ।।८०।।

भा० टी०—सूर्यादि ग्रहों की संक्रान्ति में क्रम से ३३।२।९।६।८८।९।१६० घटी संक्रान्ति से पहले और बाद त्याग देना चाहिये। अर्थात् सूर्य की संक्रान्ति में ३३ घटी, चन्द्रमा की २, भौम की ९, बुध की ६, गुरु की ८८, शुक्र की ९ और शनि की संक्रान्ति में १६० घटी त्याग देनी चाहिये। प्रायः सूर्य की संक्रान्ति अत्यंत निन्दित होती है ।।८०।।

पङ्गु-अन्ध-बधिर लग्न—

घस्रे तुलाऽलीबधिरौ मृगाश्वौ रात्रौ च सिंहाजवृषा दिवान्धाः।
कन्यानृयुक्कर्कटका निशान्धा दिने घटोऽन्त्यो निशि पङ्गुसंज्ञः ॥८१॥

अन्वयः—घस्रे तुलालीबधिरौ, रात्रौ मृगाश्वौ बधिरौ (स्याताम्) च (पुनः) सिंहाजवृषाः दिवान्धाः, कन्यानृयुक्कर्कटकाः निशान्धाः, दिने घटः निशि अन्त्यः पङ्गुसंज्ञः स्यात् ॥८१॥

भा० टी०—दिन में तुला-वृश्चिक और रात्रि में मकर-धन लग्न बधिर होती हैं। दिन में सिंह-मेष-वृष और रात में कन्या, मिथुन, कर्क लग्न अन्धी होती हैं। दिन में कुम्भ और रात में मीन लग्न पंगु होती हैं ॥८१॥

मतान्तर से पंग्वन्धादि लग्न—

बधिरा धन्वितुलालयोऽपराह्णे
मिथुनं कर्कटकोऽङ्गना निशान्धाः।
दिवसान्धा हरिगोक्रियास्तु कुब्जा
मृगकुम्भान्तिमभानि सन्ध्ययोर्हि ॥८२॥

अन्वयः—धन्वितुलालयः अपराह्णे बधिराः स्युः। मिथुनं कर्कटकः अङ्गना एते निशान्धाः, हरिगोक्रियाः दिवसान्धाः भवन्ति। तु (पुनः) मृगकुम्भान्तिमभानि सन्ध्ययोः हि कुब्जा भवन्ति ॥८२॥

भा० टी०—धन, तुला, वृश्चिक ये लग्न अपराह्ण में बधिर होती हैं। मिथुन, कर्क, कन्या ये रात्रि में अन्धी होती हैं। सिंह, वृष, मेष ये लग्न दिन में अन्धी होती हैं। मकर, कुम्भ और मीन ये लग्न सन्ध्याओं में पङ्गु होती है ॥८२॥

पंगु-अंध आदि लग्नों का फल—

दारिद्र्यं बधिरतनौ दिवान्धलग्ने वैधव्यं शिशुमरणं निशान्धलग्ने।
पंग्वङ्गे निखिलधनानि नाशमीयुः सर्वत्राधिपगुरुदृष्टिभिर्न दोषः ॥८३॥

अन्वयः—बधिरतनौ दारिद्र्यं स्यात्। दिवान्धलग्ने वैधव्यं, निशान्धलग्ने शिशुमरणं, पंग्वङ्गे निखिलधनानि नाशं ईयुः, सर्वत्र अधिपगुरुदृष्टिभिः न दोषः स्यात् ॥८३॥

भा० टी०—बधिर लग्न में विवाह होने से दरिद्रता होती है, दिन के अन्धी लग्न में वैधव्य होता है, रात्रि की अन्धी लग्न में विवाह करने से बालक की हानि, पंगु लग्न में संपूर्ण धन का नाश होता है। यदि इन लग्नों के स्वामी अथवा गुरु देखते हों तो इनका कोई दोष नहीं होता है ॥८४॥

विवाह में ग्राह्य नवमांश—

कार्मुकतौलिककन्यायुग्मलवे झषगे वा।
यर्हि भवेदुपयामस्तर्हि सती खलु कन्या ॥८४॥

अन्वयः—कार्मुकतौलिककन्यायुग्मलवे वा झषगे 'लवे' यहि उपयामः भवेत् तर्हि सा कन्या खलु सती स्यात् ॥८४॥

भा० टी०—यदि धन, तुला, वृश्चिक, कन्या, मिथुन और मीन के नवांश में विवाह हो तो वह कन्या निश्चय करके सती होती है ॥८४॥

कहे हुए नवांश में विशेष—

अन्त्यनवांशे न च परिणेया काचन वर्गोत्तममिह हित्वा ।
नो चरलग्ने चरलवयोगं तौलिमृगस्थे शशभृति कुर्यात् ॥८५॥

अन्वयः—इह वर्गोत्तमं हित्वा अन्त्यनवांशे काचन न परिणेया । तौलिमृगस्थे शशभृति चरलग्न चरलवयोगं नो कुर्यात् ॥८५॥

भा० टी०—वर्गोत्तम नवमांश को छोड़कर अन्तिम नवमांश में कन्या का विवाह नहीं करना चाहिये । तुला-मकर राशि के चन्द्रमा हों तो चरलग्न में चर नवमांश में नहीं करना चाहिये । जो राशि लग्न हो वही राशि नवमांश की हो तो उसे वर्गोत्तम नवांश कहते हैं । जैसे मेष लग्न में मेष का नवांश वर्गोत्तम नवांश है ॥८५॥

लग्नभङ्गयोग—

व्यये शनिः खेऽवनिजस्तृतीये भृगुस्तनौ चन्द्रखला न शस्ताः ।
लग्नेट् कविर्ग्लौश्च रिपौ मृतौ ग्लौर्लग्नेट्शुभाराश्च मदे च सर्वे ॥८६॥

अन्वयः—शनिः व्यये, अवनिजः खे, भृगुः तृतीये, चन्द्रखलाः तनौ, न शस्ताः । लग्नेट् कविः ग्लौः, रिपौ, च (पुनः) ग्लौः लग्नेट् शुभाराः मृतौ, च (पुनः) सर्वे ग्रहा मदे न शस्ताः स्युः ॥८६॥

भा० टी०—विवाह लग्न से बारहवें शनि, भौम दशम, शुक्र तीसरे और चन्द्रमा तथा पापग्रह लग्न में शुभद नहीं होते हैं । लग्नेश शुक्र और चन्द्र ये छठे और चन्द्रमा लग्नेश शुभग्रह और मंगल आठवें और सभी ग्रह आठवें में हों तो शुभद नहीं होते हैं । अर्थात् ऐसे लग्न में विवाह नहीं करना चाहिये ॥८६॥

विवाह में लग्नशुद्धि और रेखाप्रद स्थान—

त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोऽर्कपुत्रा-
स्त्र्यायारिगः क्षितिसुतो द्विगुणायगोऽब्जः ।
सप्तव्ययाष्टरहितौ ज्ञगुरू सितोऽष्ट-
त्रिद्यूनषड्व्ययगृहान् परिहृत्य शस्तः ॥८७॥

अन्वयः—त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोऽर्कपुत्राः, त्र्यायारिगः, क्षितिसुतः, द्विगुणायगः अब्जः, ज्ञगुरू सप्तव्ययाष्टरहितः शुभौ । सितः अष्टत्रिद्यूनषड्व्ययगृहान् परिहृत्य शस्तः स्यात् ॥८७॥

भा० टी०—विवाह लग्न से ३।११।८।६ इन स्थानों में रवि, केतु, राहु और शनि शुभ हैं। ३।११।६ इन स्थानों में मंगल, २।३।११ इन स्थानों में चन्द्रमा, बुध और गुरु ७।१२।८ इन स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में और शुक्र ८।३।७।६।१२ स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में शुभ है ॥८७॥

कर्त्तरी आदि दुष्ट दोषों का अपवाद—

पापौ कर्तरिकारकौ रिपुगृहे नीचास्तगौ कर्तरी-
दोषो नैव सितेऽरिनीचगृहगे तत्षष्ठदोषोऽपि न।
भौमेऽस्ते रिपुनीचगे नहि भवेद्भौमोऽष्टमो दोषकृ-
न्नीचे नीचनवांशके शशिनि रिःफाष्टारिदोषोऽपि न ॥८८॥

अन्वयः—(यदि) कर्त्तरिकारकौ पापौ रिपुगृहे वा नीचास्तगौ तदा कर्त्तरी दोषं नैव भवति। सिते अरिनीचगृहगे सति तत्षष्ठदोषः अपि न स्यात। यदि भौमे अस्ते रिपुनीचगे (तदा) अष्टमो भौमः दोषकृत् नहि भवेत्। शशिनि नीचे नीच-नवांशके स्थिते (तस्य) रिप्फाष्टारिदोषः अपि न भवेत् ॥८८॥

भा० टी०—यदि कर्तरी दोष करनेवाले पापग्रह शत्रुगृह में हों अथवा अपनी नीचराशि में हों अथवा अस्तंगत हों तो कर्त्तरी दोष नहीं होता है। यदि शुक्र अपने शत्रुगृह में अथवा नीच गृह में हो तो उसके छठे स्थान का दोष नहीं होता है। यदि भौम अस्तंगत हो अथवा शत्रुगृह में वा नीचराशि में हो तो मंगल के आठवें स्थान का दोष नहीं होता है। चन्द्रमा अपनी नीच राशि में अथवा अपने नीच के नवांश में हो तो चन्द्रमा के छठे, आठवें, बारहवें स्थान का दोष नहीं होता है ॥८८॥

वर्ष आदि अनेक दोषों का परिहार—

अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्षदग्ध-
तिथ्यन्धकाणबधिराङ्गमुखाश्च दोषाः।
नश्यन्ति विद्गुरुसितेष्विह केन्द्रकोणे
तद्वच्च पापविधुयुक्तनवांशदोषः ॥८९॥

अन्वयः—इह विद्गुरुसितेषु केन्द्रकोणे स्थितेषु अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्ष-दग्धतिथ्यन्धकाणबधिराङ्गमुखाः दोषाः नश्यन्ति। च (पुनः) तद्वत् पापविधुयुक्त-नवांशदोषः नश्यन्ति ॥८९॥

भा० टी०—विवाह लग्न में बुध, गुरु, शुक्र यदि केन्द्र (१।४।७।१०), कोण (९।५) स्थानों में से किसी में हों तो वर्ष, अयन, ऋतु, तिथि, मास, नक्षत्र, पक्ष, दग्धतिथि, अन्ध-काण वधिर लग्न आदि के सभी दोष नष्ट हो जाते हैं। तथा पापग्रह और चन्द्रमा से युक्त नवांश का दोष भी नष्ट हो जाता है ॥८९॥

अन्य परिहार—

केन्द्रे कोणे जीव आये रवौ वा लग्ने चन्द्रे वाऽपि वर्गोत्तमे वा।
सर्वे दोषा नाशमायान्ति चन्द्रे लाभे तद्वद्दुर्मुहूर्तांशदोषाः ॥९०॥

अन्वयः—जीवे केन्द्रे वा कोणे, अथवा रवौ आये वा लग्ने वर्गोत्तमे, अपि वा चन्द्रे वर्गोत्तमे सर्वे दोषाः नाशं आयान्ति। तद्वत् चन्द्रे लाभे दुर्मुहूर्तांशदोषाः नाशं आयान्ति ॥९०॥

भा० टी०—गुरु केन्द्र वा कोण में हो, अथवा सूर्य ग्यारहवें स्थान में हो, अथवा लग्न वर्गोत्तम हो, अथवा चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांश में हो तो सभी दोषों का नाश होता है। यदि लग्न से चन्द्रमा ग्यारहवें हो तो दुष्ट मुहूर्त और दुष्ट नवांश का दोष नष्ट हो जाता है ॥९०॥

साधारण दोषों का अपवाद—

त्रिकोणे केन्द्रे वा मदनरहिते दोषशतकं
हरेत् सौम्यः शुक्रो द्विगुणमपि लक्षं सुरगुरुः।
भवेदाये केन्द्रेऽङ्गप उत लवेशो यदि तदा
समूहं दोषाणां दहन इव तूलं शमयति ॥९१॥

अन्वयः—सौम्यः त्रिकोणे वा मदनरहिते केन्द्रे (सति) दोषशतकं हरेत्। शुक्रः द्विगुणं, सुरगुरुः लक्षं दोषं हरेत्। यदि अङ्गपः उत लवेशः आये वा केन्द्रे भवेत् तदा दोषाणां समूहं दहनः तूलं इव शमयति ॥९१॥

भा० टी०—यदि बुध त्रिकोण (९।५) में अथवा ७वें स्थान को छोड़कर अन्य केन्द्रों (१।४।१०) में हो तो एक सौ दोषों का नाश करता है। यदि उक्त स्थानों में शुक्र हो तो दो सौ और गुरु उक्त स्थानों में हो तो एक लक्ष (लाख) दोषों का नाश करता है। यदि लग्नेश अथवा नवमांशेश एकादश अथवा केन्द्र (१।४।७।१०) में हो तो दोषों के समूह को इस प्रकार से नष्ट करता है, जैसे अग्नि रुई का नाश करती है ॥९१॥

विंशोपक—

द्वौ द्वौ ज्ञभृग्वोः पञ्चेन्दौ रवौ सार्धत्रयो गुरौ।
रामा मन्दागुकेत्वारे सार्धैकैकं विंशोपकाः ॥९२॥

अन्वयः—ज्ञभृग्वोः, द्वौ द्वौ, इन्दौ पञ्च, रवौ सार्धत्रयः, गुरौ रामाः, मन्दागकेत्वारे सार्धैकैकं विंशोपकाः स्युः ॥९२॥

भा० टी०—पहले ८७ श्लोक में जो ग्रहों के शुभ स्थान कहे गये हैं उन स्थानों में यदि बुध, शुक्र अपने स्थानों में हों तो २, २, चन्द्रमा हों तो ५, सूर्य हों तो ३॥, गुरु हों तो ३, शनि, राहु, केतु और मङ्गल हों तो १॥, १॥ विंशोपक बल मिलता है ॥९२॥

श्वशुर आदि के कारक ग्रह—

श्वश्रूः सितोऽर्कः श्वशुरस्तनुस्तनुर्जामित्रपः स्याद्दयितो मनः शशी।
एतद्बलं सम्प्रतिभाव्य तान्त्रिकस्तेषां सुखं सम्प्रवदेद्विवाहतः ॥९३॥

अन्वयः—सितः श्वश्रूः, अर्कः श्वशुरः, तनुः (लग्नं) तनुः, जामित्रपः दयितः, शशी मनः स्यात्। तान्त्रिकः विवाहतः एतद्बलं सम्प्रतिभाव्य तेषां सुखं सम्प्रवदेत् ॥९३॥

भा० टी०—शुक्र सास (श्वशुर की स्त्री), सूर्य श्वशुर, (विवाह) लग्न शरीर, सप्तमेश पति, चन्द्रमा मन का अधिपति होता है। दैवज्ञ विवाह-समय को लग्न से इनके बल का विचार करके इनके सुख को कहे ॥९३॥

जो ग्रह बलवान् और अच्छे स्थान मे हों उनमे सुख कहना चाहिये।

संकीर्ण (वर्णसंकर) जातियों के विवाह-मुहूर्त—

कृष्णे पक्षे सौरिकुजार्केऽपि च वारे
वर्ज्ये नक्षत्रे यदि वा स्यात् करपीडा।
सङ्कीर्णानां तर्हि सुतायुर्धनलाभ-
प्रीतिप्राप्त्यै सा भवतीह स्थितिरेषा ॥९४॥

अन्वयः—कृष्णे पक्षे अपि च सौरिकुजार्के वारे वर्ज्ये नक्षत्रे वा यदि संकीर्णानां करपीडा स्यात् तदा सा सुतायुर्धनलाभप्रीतिप्राप्त्यै भवति, इह एषा स्थितिः स्यात् ॥९४॥

भा० टी०—कृष्णपक्ष में शनि, भौम, रवि इन वारों में विवाह के लिये कहे हुए नक्षत्रों से भिन्न नक्षत्रों में यदि वर्णसंकरों (नीच जाति रजक आदि) का विवाह हो तो वह पुत्र, आयु और धन-लाभ को बढ़ानेवाला होता है ॥९४॥

गन्धर्वादि विवाह में नक्षत्र-चक्र—

गान्धर्वादिविवाहेऽर्काद्वेदनेत्रगुणेन्दवः।
कुयुगाङ्गाग्निभूरामास्त्रिपद्यामशुभाः शुभाः ॥९५॥

अन्वयः—गान्धर्वादिविवाहे त्रिपद्यां अर्थात् वेद-नेत्र-गुणेन्दवः कुयुगाङ्गाग्नि-भूरामाः अशुभाः शुभाः स्मृताः ॥९५॥

भा० टी०—गान्धर्वादि विवाह में त्रिपदी चक्र में सूर्य के नक्षत्र से दिन-नक्षत्र तक क्रम से प्रथम ४ नक्षत्र अशुभ, पुनः २ शुभ, ३ अशुभ, १ शुभ, १ अशुभ, ४ शुभ, ६ अशुभ, ३ शुभ, १ अशुभ, ३ शुभ होते हैं ॥९५॥

वैवाहिक अन्य कार्यों का मुहूर्त—

विधोर्बलमवेक्ष्य वा दलनकण्डनं वारकं
गृहाङ्गणविभूषणान्यथ च वेदिकामण्डपान्।
विवाहविहितोडुभिर्विरचयेत्तथोद्वाहतो
न पूर्वमिदमाचरेत् त्रिषण्णवमिते वासरे ॥९६॥

अन्वयः—विधोः बलं अवेक्ष्य विवाहविहितोडुभिः दलनकण्डनं वारकं गृहाङ्गणविभूषणानि कार्याणि। अथ वेदिकामण्डपान् च विरचयेत्। तथा उद्वाहतः पूर्वं त्रिषण्णवमिते वासरे इदं न आचरेत् ॥९६॥

भा० टी०—(वर-कन्या का) चन्द्रबल देखकर वैवाहिक नक्षत्रों में कूटना, पीसना, गीत गाना, मङ्गल चित्रकारी करना, घर का लेपन, मंडप आदि बनाना चाहिये। किन्तु विवाह से पहले ३।६।९ वें दिन में उक्त कार्यों को नहीं करना चाहिये ॥९६॥

वेदी प्रमाण और मंडप के उठाने का मुहूर्त—

हस्तोच्छ्राया वेदहस्तैः समन्तात्तुल्या वेदी सद्मनो वामभागे।
युग्मे घस्त्रे षष्ठहीने च पञ्चसप्ताहे स्यान्मण्डपोद्वासनं सत् ॥९७॥

अन्वयः—सद्मनः वामभागे हस्तोच्छ्राया समन्तात् वेदहस्तैः तुल्या वेदी कार्या। च षष्ठहीने युग्मे घस्त्रे पञ्चसप्ताहे मण्डपोद्वासनं सत् स्यात् ॥९७॥

भा० टी०—घर के वाम भाग में एक हाथ ऊँची चारों तरफ चार-चार हाथ लम्बी-चौड़ी वेदी विवाह के लिए बनावे। छठे दिन को छोड़कर शेष सम दिनों में और ५वें या ७वें दिन मण्डप का उठाना शुभद होता है ॥९७॥

मतान्तर से तैलादि का मुहूर्त—

मेषादिराशिज-वधू-वरयोर्बटोश्च
तैलादिलापनविधौ कथिताऽत्र संख्या।
शैला दिशः शर-दिगक्ष-नगाद्रि-बाणा
बाणाक्ष-बाण-गिरयो विबुधैस्तु कैश्चित् ॥९८॥

अन्वयः—अत्र कैश्चित् विबुधैः मेषादिराशिजवधूवरयोःबटोः च तैलादिलापनविधौ क्रमेण शैलाः दिशः शर-दिगक्ष-नगाद्रिबाणाः बाणाक्ष-बाणगिरयः संख्या कथिता ॥९८॥

भा० टी०—यहाँ पर कुछ पंडितों ने मेषादिराशि वाले वर-कन्या और उपनयन संस्कार योग्य बालकों के तैलादि लगाने में संख्या मेष को ७, वृष को १०, मिथुन को ५, कर्क को १०, सिंह को ५, कन्या को ७, तुला को ७, वृश्चिक को ५, धन को ५, मकर को ५, कुम्भ को ५ और मीन राशि वालों को ७ दिन कही है॥९८॥

मंडप में प्रथम स्तम्भ की दिशा का विचार—

सूर्येऽङ्गना-सिंह-घटेषु शैवे स्तम्भोऽलिकोदण्डमृगेषु वायौ।
मीनाजकुम्भे निर्ऋतौ विवाहे स्थाप्योऽग्निकोणे वृषयुग्मकर्के ॥९९॥

अन्वयः—अङ्गनासिंहघटेषु सूर्ये शैवे, अलिकोदण्डमृगेषु वायौ, मीनाजकुम्भे निर्ऋतौ, वृषयुग्मकर्के अग्निकोणे विवाहे स्तम्भः स्थाप्यः ॥९९॥

भा० टी०—कन्या, सिंह, तुला इन राशियों के सूर्य में प्रथम स्तम्भ ईशानकोण में, वृश्चिक, धन, मकर के सूर्य में वायुकोण में, मीन, मेष, कुम्भ के सूर्य में निर्ऋतिकोण में और वृष, मिथुन, कर्क के सूर्य में अग्निकोण में विवाह में स्तम्भ को स्थापित करे ॥९९॥

गोधूलिलग्न की प्रशंसा—

नास्यामृक्षं न तिथि-करणं नैव लग्नस्य चिन्ता
नो वा वारो न च लवविधिर्नो मुहूर्तस्य चर्चा।
नो वा योगो न मृतिभवनं नैव जामित्रदोषो
गोधूलिः सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्येषु शस्ता ॥१००॥

अन्वयः—अस्यां ऋक्षं न, तिथि-करणं न, लग्नस्य चिन्ता नैव, वा वारः न, च, लवविधिः न, मुहूर्तस्य चर्चा नो, न वा योगः मृतिभवनं नैव, जामित्रदोषः अपि नैव भवति, यतः सा गोधूलिः मुनिभिः सर्वकार्येषु शस्ता उदिता ॥१००॥

भा० टी०—इस गोधूलि लग्न में नक्षत्र की चर्चा नहीं,तिथि, करण तथा लग्न का विचार नहीं है। और वार, नवमांश, मुहूर्त की चिन्ता नहीं है, योग, अष्टम स्थान और जामित्र आदि दोषों का भी विचार नहीं है। ऐसे गोधूलि लग्न को मुनियों ने सभी कार्यों के लिए श्रेष्ठ कहा है ॥१००॥

गोधूलि-समय का निर्णय—

पिण्डीभूते दिनकृति हेमन्ततौ स्यादर्धास्ते तपसमये गोधूलिः।
सम्पूर्णास्ते जलधरमालाकाले त्रेधा योज्या सकलशुभे कार्यादौ ॥१०१॥

अन्वयः—हेमन्ततौ दिनकृति पिण्डीभूते, तपसमये अर्धास्ते, जलधरमाला-काले सम्पूर्णास्ते (रवौ) गोधूलिः स्यात्। एवं त्रेधा गोधूलिः सकलशुभे कार्यादौ योज्या ॥१०१॥

भा० टी०—हेमन्त ऋतु (वृश्चिक, धन के सूर्य में) में जब सूर्य पिण्ड के समान गोलाकार रक्त वर्ण का अस्त के पहले दिखाई पड़ता है तब गोधूली होती है। तप-समय में (वृष-मिथुन के सूर्य में) सूर्य-बिम्ब के अर्धास्त समय में, और ग्रीष्म ऋतु में (कर्क,सिंह के सूर्य में) सूर्य के सम्पूर्ण अस्त हो जाने पर गोधूलि लग्न होती है। इस प्रकार से गोधूली तीन तरह की होती है। इसे संपूर्ण शुभ कार्यों में योजित करना चाहिये ॥१०१॥

गोधूली में विशेष विचार और निषेध—

अस्तं याते गुरुदिवसे सौरे सार्के
लग्नान्मृत्यौ रिपुभवने लग्ने चेन्दौ।
कन्यानाशस्तनुमदमृत्युस्थे भौमे
वोढुर्लाभे धनसहजे चन्द्रे सौख्यम् ॥१०२॥

अन्वयः—गुरुदिवसे अस्तं याते, सौरे सार्के, लग्नात् मृत्यौ रिपुभवने, लग्ने इन्दौ कन्यानाशः स्यात्। तथा तनुमदमृत्युस्थे भौमे वोढुः मृत्युः स्यात्। लाभे धनसहजे चन्द्रे सौख्यं भवेत् ॥१०२॥

भा० टी०—गुरुवार को सूर्य के अस्त होने पर, शनिवार को सूर्य के रहते हुए गोधूली शुभ होती है। गोधूली लग्न से अष्टम, छठे और लग्न में चन्द्रमा हो तो कन्या का नाश होता है। तथा लग्न, सप्तम और अष्टम में मंगल हो तो वर का नाश होता है। और लग्न, द्वितीय और तृतीय चन्द्रमा हो तो सुख होता है ॥१०२॥

प्रत्येक राशि में सूर्य की गति—

मेषादिगेऽर्केऽष्टशरा नगाक्षाः सप्तेषवः सप्तशरा गजाक्षाः।
गोऽक्षाः खतर्काः कुरसाः कुतर्काः ववङ्गानि षष्टिर्नवपञ्च भुक्तिः ॥१०३॥

अन्वयः—मेषादिगे अर्के अष्टशराः नगाक्षाः, सप्तेषवः, सप्तशराः, गजाक्षाः, गोक्षाः, खतर्काः, कुरसाः, कुतर्काः, वव ङ्गानि, षष्टिः, नवपञ्च भुक्तिः स्यात् ॥१०३॥

भा० टी०—मेषादि राशियों में सूर्य की क्रम से ५८,५७,५७, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६१, ६१, ६०, ५९ गति होती है ॥१०३॥

इष्टकालिक सूर्य का स्पष्टीकरण—

संक्रान्तियातघस्राद्यैर्गतिर्निघ्नी खषड् ६० हृता।
लब्धेनांशादिना योज्यं यातर्क्षं स्पष्टभास्करः ॥१०४॥

अन्वयः—संक्रान्तियातघस्राद्यैः गतिः निघ्नी खषड्हृता लब्धेन अंशादिना यातर्क्षं योज्यं स स्पष्टभास्करः स्यात् ॥१०४॥

भा० टी०—जिस दिन सूर्य स्पष्ट करना हो उस दिन बीती हुई संक्रान्ति के घटचादि से इष्टदिन पर्यन्त जितने दिन घटी पलादि बीते हों उनसे जिस राशि में सूर्य हों उसकी गति से गुणा कर गुणनफल में ६० का भाग देवे, लब्ध अंश कला विकला में सूर्य की गत राशि को जोड़ देवे तो तात्कालिक स्पष्ट सूर्य हो जाता है ॥१०४॥

उदाहरण—श्रावण कृष्ण १२ शनिवार को ५२ घटी २३ पल पर कर्क की संक्रान्ति हुई और द्वितीया गुरुवार को ५४ घटी २५ पल पर स्पष्ट सूर्य साधन करना है, तो कर्क-संक्रान्ति से इष्ट दिन पर्यन्त ५ दिन २ घटी २ पल अन्तर हुआ। इससे वर्तमान कर्क राशि के सूर्य की गति ५७ को गुणा कर ६० का भाग देने से ४ अंश ४६ कला ५५ विकला हुआ इसमें सूर्य की गत राशि मिथुन को जोड़ देने से ३।४।४६।५५ राश्यादि स्पष्ट सूर्य हुआ।

अत्रोपपत्तिः—अनुपातः—यद्येकस्मिन् दिवसे गतिकला लभ्यन्ते तदा संक्रान्तिकालादिष्टदिनपर्यन्तं यावद्गतदिनाद्यैः किमिति लब्धं गतदिनसम्बन्धिगतिकलाः = $\frac{\text{गक} \times \text{ग. दि. सं. अव.}}{१}$ पुनरन्योनुपातः यदि षष्टिकलाभिः एकं अंशं तदा गतदिनसम्बन्धिगतिकलाभिः किमिति लब्धमंशाद्यं = $\frac{\text{गक} \times \text{ग. दि. सं. अव.}}{६०}$ एतद् गतराशिसंख्यया युतं तात्कालिकः स्पष्टरविः स्यादित्युपपन्नम् ॥१०४॥

लग्न में इष्टनवांश का साधन—

तनोरिष्टांशकात् पूर्वं नवांशा दशसंगुणाः ।
रामाप्ताः लब्धमंशाद्यं तनोर्वर्गादिसाधने ॥१०५॥

अन्वयः—तनोः इष्टांशकात् पूर्वं नवांशाः दशसंगुणाः रामाप्ताः लब्धं वर्गादि-साधने तनोः अंशाद्यं स्यात् ॥१०५॥

भा० टी०—लग्न के अभीष्ट नवांश के पूर्व नवांश की संख्या को दस से गुणा कर तीन से भाग दे लब्ध अंशादि षड्वर्गसाधन में लग्न अंशादि होता है ॥१०५॥

उदाहरण—जैसे मकर लग्न में मीन का नवमांश विवाह के लिए अभीष्ट है तो मकर राशि में मकरादि नवांश आरंभ होता है अतः तीसरा मीन का नवांश हुआ। इससे पूर्व का दूसरा नवांश हुआ। इसकी संख्या २ को १० से गुणा कर ३ से भाग देने पर ६ अंश ४० कला हुआ; अतः मकर राशि लग्न के आरम्भ होने के समय से ६ अंश ४० कला बीतने के बाद मीन का नवमांश आरम्भ होगा ।

अत्रोपपत्तिः—यदि नवभिर्नवमांशैस्त्रिंशदंशा लभ्यन्ते तदेष्टनवांशेन कियन्त इति फलमिष्टांशाः $= \frac{३० \times इ.\ नवांश}{९} = \frac{१० \times इ.\ नवांश}{३}$ इत्युपपन्नम् ।

लग्न और सूर्य से इष्ट घटी का साधन—

अर्काल्लग्नात् सायनाद्भोग्यभुक्तै-
र्भागैर्निघ्नात् स्वोदयात् खाग्निभक्तात् ।
भोग्यं भुक्तं चान्तरालोदयाढ्यं
षष्ट्या भक्तं स्वेष्टनाड्यो भवेयुः ॥१०६॥

अन्वयः—सायनात् अर्कात् सायनात् लग्नात् भोग्यभुक्तैः भागैः स्वोदयात् निघ्नात् खाग्निभक्तात् क्रमेण भोग्यं भुक्तं (स्यात्) तत् अन्तरालोदयाढ्यं षष्ट्या भक्तं तदा स्वेष्टनाड्यः भवेयुः ॥१०६॥

भा० टी०—सूर्य में अयनांश जोड़ देने से सायन सूर्य होता है। सायन सूर्य की राशि के भोग्यांशों से सायनसूर्य की राशि के स्वदेशीय पलात्मक मान को गुणा कर ३० का भाग देने से सायन सूर्य का भोग्य पल होता है। इसी प्रकार सायन लग्न के भुक्तांश से सायन लग्न के पलात्मक राश्युदय मान को गुणा कर ३० से भाग देने से लब्ध लग्न का भुक्त पल होता है। इन दोनों (सूर्य के भोग्य पल और लग्न के भुक्त पल का) का योग कर इसमें सूर्य और लग्न के मध्य में जो राशियाँ हैं उनके पलात्मक मान को जोड़कर ६० का भाग देने से इष्ट घटी हो जाती है। यह सूर्योदय से होती है। इसी इष्ट घटी पर कार्यारम्भ करना चाहिये ॥१०६॥

उदाहरण—जैसे विवाह-लग्न ९।१०।२५।३० है, इसमें अयनांश २१।५०।२४ जोड़ देने से सायन लग्न १०।२।१५।५४ हुआ। ६ इसके भुक्तांश २।१५।५४ से कुंभ

के उदयमान २५३ को गुणा कर ३० से भाग देने पर लब्ध लग्न का भुक्त पल १९ मिला। स्पष्ट सूर्य २।१५।४५।५० इसमें अयनांश जोड़ देने से सायन सूर्य ३।१७।३६।१४ हुआ। इसके भोग्यांश १२।२३।४६ से कर्क के उदयमान ३४२ को गुणा कर ३० का भाग देने से सूर्य का भोग्य पल १४१ मिला इसमें लग्न का भुक्तपल १९ जोड़ दिया तो १६० हुआ। इसमें सायन सूर्य और लग्न के मध्य की राशियों (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धन, मकर) के मान (३४५ + ३३५ + ३३५ + ३४५ + ३४२ + ३०४) को जोड़ दिया तो २१६६ हुआ। इसमें ६० का भाग दिया तो ३६ घटी ६ पल यही सूर्योदय से इष्ट घटी हुई।

अत्रोपपत्तिः—सूर्येष्टलग्नज्ञानादिष्टकालानयनप्रकारोऽयम्—तत्र रवेः लग्नपर्यन्तं रवेः भोग्यांशाः, लग्नस्य भुक्तांशास्तथा तदन्तर्वर्त्तिराश्युदयाश्च तिष्ठन्ति तथा चैतत्संबन्धिपलानि अहोरात्रवृत्ते सूर्यादारभ्य क्षितिजावधि वर्तते, तदानयनार्थमनुपातो यदि त्रिंशदंशै रविनिष्ठराश्युदयपलानि प्राप्यते तदा भोग्यांशैः वा भुक्तांशैः किमिति सूर्यभोग्यपलानि $= \frac{\text{रा. उ.} \times \text{रविभोअं.}}{३०}$। एवं लग्नभुक्तपलानि $= \frac{\text{रा. उ.} \times \text{लभुअं}}{३०}$ अतः इष्टपलानि = रविभोग्यपल + लग्नभुक्तपल + अंतरालराश्युदयानि। षष्ट्या भक्तानीष्टनाड्यो भवेयुरित्युपपन्नम् सर्वम्।

चेल्लग्नाऽर्कौ सायनावेकराशौ तद्विश्लेषघ्नोदयः खाग्निभक्तः।
स्वेष्टः कालो लग्नमूनं यदार्काद्रात्रेः शेषोऽर्कात्सषड्भान्निशायाम्॥१०७॥

अन्वयः—चेत् सायनौ लग्नार्कौ एकराशौ तदा तद्विश्लेषघ्नोदयः खाग्निभक्तः स्वेष्टः कालः स्यात्। यदा लग्नं अर्कात् ऊनं तदा रात्रेः शेषः स्यात्। निशायां सषड्भात् अर्कात् लग्नं साध्यम्॥१०७॥

भा० टी०—यदि सायन लग्न और सूर्य दोनों एक ही राशि के हों तो दोनों का अंतर करके शेष से उदयमान को गुणा कर ३० का भाग देने से इष्टकाल होता है। यदि सायन सूर्य से लग्न न्यून हो तो इष्टकाल सूर्योदय से पहले का होता है। यदि रात्रि की इष्ट घटी हो तो सायन सूर्य में ६ राशि जोड़कर लग्न का साधन करना चाहिये॥१०७॥

उदाहरण—जैसे सायन सूर्य ३।५।१०।१५ और सायन लग्न ३।४।८।५ है, दोनों कर्क राशि पर हैं, अतः दोनों का अन्तर १।२।१० इसको कर्क के मान ३४२ से गुणा कर ३० से भाग दिया तो ० घटी १२ पल मिला। यहाँ लग्न सूर्य से कम है इसलिये यह सूर्योदय के पूर्व की घटी हुई। इसको ६० में घटा देने से ५९।४८ यह सूर्योदय से इष्ट घटी हुई।

अत्रोपपत्तिः—यदि लग्नार्कौ एकस्मिन्नेव राशौ तदा तयोरन्तरांशैरनुपातो—यदि त्रिंशदंशैः राश्युदयपलानि तदा अन्तरांशैः किमिति तदन्तरपलात्मकइष्टकालः

$= \frac{\text{रा. उ. प.} \times \text{अन्तरांश}}{३०}$ । यदि लग्नादधिकोऽर्कस्तदा स क्षितिजादधस्थो अत एव रात्रिशेषरूपः स इष्टकालः स्यात् । रात्रेष्टकाले यावद्भिरंशैः क्षितिजादधस्थोऽर्कस्तावद्भिरेवांशैरुदयक्षितिजादूर्ध्वस्थः सपड्भो रविः अतएव रात्रिगतेष्टकाले सपड्भसूर्यादेव लग्नानयनं विधेयमित्युपपन्नम् सर्वम् ।

विवाहादि शुभ कार्यों में त्याज्य--

उत्पातान्सह पातदग्धतिथिभिर्दुष्टांश्च योगांस्तथा
चन्द्रेज्योशनसामथास्तमयनं तिथ्याः क्षयर्द्धी तथा ।
गण्डान्तं च सविष्टि संक्रमदिनं तन्वंशपास्तं तथा
तन्वंशेशविधूनथाष्टरिपुगान् पापस्य वर्गास्तथा ॥१०८॥

सेन्दुक्रूरखगोदयांशमुदयास्ताशुद्धि-चण्डायुधान्
खार्जूरं दशयोगयोगसहितं जामित्रलत्ताव्यधम् ।
बाणोपग्रहपापकर्तरि तथा तिथ्यृक्षवारोत्थितं
दुष्टं योगमथार्धयामकुलिकाद्यान् वारदोषानपि ॥१०९॥

क्रूराक्रान्तविमुक्तभं ग्रहणभं यत्क्रूरगन्तव्यभं
त्रेधोत्पातहतं च केतुहतभं सन्ध्यादितं भं तथा ।
तद्वच्च ग्रहभिन्नयुद्धगतभं सर्वानिमान् सन्त्यजे-
दुद्वाहे शुभकर्मसु ग्रहकृतान् लग्नस्य दोषानपि ॥११०॥

अन्वयः---पातदग्धतिथिभिः सह उत्पातान्, तथा दुष्टान् योगान्, अथ चन्द्रेज्योशनसां अस्तमयनं, तथा तिथ्याः क्षयर्धी, च गण्डान्तं, सविष्टि संक्रमदिनं, तथा तन्वंशपास्तं, अथ अष्टरिपुगान् तन्वंशेशविधून्, पापस्य वर्गान्, सेन्दुक्रूरखगोदयांशं, उदयास्ताशुद्धि-चण्डायुधान्, दशयोगयोगसहितं खार्जूरं, जामित्रलत्ताव्यधम्, तथा बाणोपग्रहपापकर्त्तरि, तिथ्यृक्षवारोत्थितं दुष्टं योगं, अथ अर्धयामकुलिकाद्यान् वारदोषान्, अपि क्रूराक्रान्तविमुक्तभं, ग्रहणभं, तथा यत् क्रूरगन्तव्यभं, त्रेधोत्पातहतं च केतुहतभं तथा सन्ध्योदितं भं च तद्वत् ग्रहभिन्नयुद्धगतभं, ग्रहकृतान् लग्नस्य दोषान् अपि इमान् सर्वान् उद्वाहे शुभकर्मसु च सन्त्यजेत् ॥१०८-११०॥

भा० टी०---उत्पात, महापात, दग्ध तिथि, दुष्टयोग, चन्द्र, गुरु, शुक्र का अस्त, तिथि-क्षय और तिथि-वृद्धि, गण्डान्त, भद्रा, संक्रान्तिदिन, लग्न और नवांश के स्वामियों का अस्त तथा लग्नेश, नवांशेश और चन्द्रमा का ६-८ भाव का दोष, पापग्रह का षड्वर्ग, चन्द्रमा और क्रूर ग्रह से युत लग्न तथा नवांश, उदयास्तशुद्धि, चण्डायुध, खार्जूर, दशयोग, जामित्र, लत्ता, वेध, बाण, उपग्रह, पापकर्त्तरी, तिथि-वार-नक्षत्र से उत्पन्न दुष्ट योग, अर्धयाम, कुलिक आदि वार-दोष, क्रूराक्रान्त नक्षत्र, क्रूरभुक्त नक्षत्र, क्रूर ग्रह जिस पर जानेवाला है वह नक्षत्र, त्रिविध

उत्पातों से हत नक्षत्र, केतूदय का नक्षत्र, सन्ध्या में उदित नक्षत्र, ग्रहभिन्न नक्षत्र तथा यद्ध का नक्षत्र, और ग्रह से युत लग्न इन सभी दोषों को विवाहादि शुभ कार्यों में त्याग देना चाहिये ॥१०८-११०॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ विवाहप्रकरणम् ॥ ६ ॥

वधूप्रवेशप्रकरणम्

तत्र वधूप्रवेशो नाम नूतनपरिणीतायाः कन्यायाः प्रथमतः करिष्यमाणो भर्त्तृ-गृहप्रवेशो वधूप्रवेशशब्दवाच्य इति ।

वधूप्रवेश में ग्राह्य समय—

समाद्रिपञ्चाङ्कदिने विवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनान्तराले ।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमासदिनेऽक्षवर्षात् परतो यथेष्टम् ॥१॥

अन्वयः—विवाहात् अष्टिदिनान्तराले समाद्रिपञ्चाङ्कदिने वधूप्रवेशः शुभः स्यात् । परस्तात् विषमाब्दमासदिने (वधूप्रवेशः) शुभः स्यात्, अक्षवर्षात् परतः यथेष्टम् शुभः स्यात् ॥१॥

भा० टी०—विवाह से १६ दिन के अन्दर सम दिनों में अथवा ७, ५, ९वें दिन में वधूप्रवेश शुभ होता है। इसके बाद विषम वर्ष, विषम मास और दिनों में अर्थात् १ मास के अन्दर विषम दिनों में, इसके बाद एक वर्ष के अन्दर विषम मासों में, इसके बाद ५ वर्ष के अन्दर विषम वर्ष में वधू-प्रवेश शुभद होता है। इसके बाद जब चाहे तब शुभ मुहूर्त्त में वधूप्रवेश शुभद होता है ॥१॥

वधूप्रवेश में ग्राह्य तिथि और नक्षत्र—

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले ।
वधूप्रवेशः सन्नेष्टो रिक्तारार्के बुधे परैः ॥२॥

अन्वयः—ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिले वधूप्रवेशः सत् स्यात् । रिक्तारार्के नेष्टः स्यात् । परैः बुधे नेष्टः कथितः ॥२॥

भा० टी०—ध्रुव संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, मृदु संज्ञक, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा, स्वाती इन नक्षत्रों में वधूप्रवेश शुभद होता है। रिक्ता तिथि, भौम और रविवार को छोड़कर शेष तिथि वारों में शुभद होता है। किसी आचार्य के मत से बुधवार भी शुभद नहीं है ॥२॥

विशेष—'निशि वधूसंवेशमङ्गे स्थिरे,' रात्रि में स्थिर लग्न में वधूप्रवेश कराना चाहिये।

विवाह से प्रथम वर्ष में पतिगृह में विशेष—

ज्येष्ठे पतिज्येष्ठमथाधिके पतिं हन्त्यादिभे भर्तृगृहे वधूः शुचौ ।
श्वश्रूं सहस्ये श्वशुरं क्षये तनुं तातं मधौ तातगृहे विवाहतः ॥३॥

अन्वयः—विवाहतः आदिमे ज्येष्ठे भर्तृगृहे वधूः पतिज्येष्ठं हन्यात्, अथ अधिके पतिं, शुचौ श्वश्रूं, सहस्ये श्वशुरं, क्षये निजतनुं हन्ति। अथ आदिमे मधौ तातगृहे तातं हन्ति ॥३॥

भा० टी०—विवाह होने के वाद प्रथम ज्येष्ठ मास में पतिगृह में वधू रह जाय तो पति के जेठे भाई का नाश करती है, प्रथम अधिक मास में रहे तो पति का, प्रथम आपाढ़ मास में रहे तो सास का, प्रथम पौष मास में रहे तो श्वशुर का, प्रथम क्षयमास में अपने शरीर का नाश करती है। यदि पहले चैत्र मास में अपने पिता के घर में रहे तो पिता का नाश करती है ॥३॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ वधूप्रवेशप्रकरणम् ॥ ७ ॥

द्विरागमनप्रकरणम्

तत्र पूर्वं नववधूप्रवेशे जाते तदनन्तरं परावृत्यापि पितृगृहप्राप्ताया अपि वध्वा यथेष्टवर्षाणि स्थितायाः पुनर्भर्तृगृहप्रवेशो द्विरागमनशब्दवाच्यः।

चरेदथौजहायने घटालिमेषगे रवौ
रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे।
नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषे विलग्नके
द्विरागमं लघुध्रुवे चरेऽस्रपे मृदूडुनि ॥१॥

अन्वयः—अथ ओजहायने घटालिमेषगे रवौ रवीज्यशुद्धियोगतः, शुभग्रहस्य वासरे, नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषे विलग्नके, लघुध्रुवे चरे अस्रपे मृदूडुनि द्विरागमं चरेत् ॥१॥

भा० टी०—विषम वर्ष में कुम्भ, वृश्चिक, मेष राशि के सूर्य में, गोचर से सूर्य और गुरु शुद्ध हों, शुभ ग्रह के दिन में, मिथुन, मीन, कन्या, तुला, वृष लग्न में, लघु संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, चर संज्ञक, मूल और मृदु संज्ञक नक्षत्र में द्विरागमन (दोंगा) करना शुभद है ॥१॥

द्विरागमन में शुक्र[1] का विचार—

दैत्येज्यो ह्यभिमुखदक्षिणे यदि स्याद्-
गच्छेयुर्न हि शिशुर्गर्भिणीनवोढाः।

१—विशेषः—यावच्चन्द्रः पूषभात्कृत्तिकाद्ये पादे शुक्रोऽन्धो न दुष्टोऽग्र-दक्षे ॥१॥

जब तक चन्द्रमा रेवती से कृत्तिका के १ चरण पर, अर्थात् मीन और मेष राशि पर, रहता है तब तक शुक्र अन्धा रहता है। उस समय सम्मुख और दाहिने शुक्र में यात्रा करना दोषकारक नहीं होता है ॥१॥

बालश्चेद्व्रजति विपद्यते नवोढा
चेद्वन्ध्या भवति च गर्भिणी त्वगर्भा ॥२॥

अन्वयः—यदि दैत्येज्यः अभिमुखदक्षिणे स्यात् (तदा) शिशुगर्भिणीनवोढाः न गच्छेयुः। हि चेत् बालः व्रजति (तदा) विपद्यते, नवोढा वन्ध्या, च तथा गर्भिणी तु अगर्भा भवति ॥२॥

भा० टी०—द्विरागमन में यदि शुक्र सामने या दाहिने हों तो बालक, गर्भिणी और नवोढा (नूतन विवाहिता स्त्री) यात्रा न करे। यदि उक्त तिथि में बालक यात्रा करे तो वह मर जाता है, नवोढ़ा विधवा होती है और गर्भिणी बिना गर्भ के हो जाती है ॥२॥

सम्मुख शुक्र का परिहार—

नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे करपीडने विबुधतीर्थयात्रयोः।
नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवो भवति दोषकृन्न हि ॥३॥

अन्वयः—नगरप्रवेशविषयाद्युपद्रवे, करपीडने, विबुधतीर्थयात्रयोः, नृपपीडने, नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवः दोषकृत् न हि भवति ॥३॥

भा० टी०—नगर-प्रवेश में, देश के उपद्रव में, विवाह में, देवता और तीर्थ-यात्रा में, राजा से पीड़ित होकर जाने में तथा नववधू के प्रवेश में सम्मुख शुक्र का दोष नहीं होता है ॥३॥

अन्य परिहार—

पित्र्ये गृहे चेत् कुचपुष्पसम्भवः स्त्रीणां न दोषः प्रतिशुक्रसम्भवः।
भृग्वङ्गिरोवत्सवसिष्ठकश्यपात्रीणां भरद्वाजमुनेः कुले तथा ॥४॥

अन्वयः—चेत् पित्र्ये गृहे स्त्रीणां कुचपुष्पसम्भवः (स्यात्तदा) प्रतिशुक्र-सम्भवः दोषः न स्यात्। तथा भृग्वङ्गिरोवत्सवसिष्ठकश्यपात्रीणां भरद्वाजमुनेः कुले प्रतिशुक्रसम्भवः दोषः न भवेत् ॥४॥

भा० टी०—यदि पिता के घर में ही स्त्रियों को कुच-चिह्न और रजोदर्शन हो जाय तो सम्मुख शुक्र का दोष नहीं होता है। और भृगु, अङ्गिरा, वत्स, वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि, भरद्वाज इन मुनियों के गोत्रवालों को भी सम्मुख शुक्र का दोष नहीं होता है ॥४॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ द्विरागमनप्रकरणम् ॥ ८ ॥

अग्न्याधानप्रकरणम्

तत्राग्निर्धीयते श्रौतेन स्मार्त्तेन वा कर्मविशेषेण इति अग्न्याधानम्। तत्र केचित्पाणिग्रहणसमये एव अग्न्याधानमाहुः। अपरे पित्रा भ्रातृभिः सह विभागकाले एवाहुः।

अग्न्याधान का मुहूर्त्त—

स्यादग्निहोत्रविधिरुत्तरगे दिनेशे
मिश्रध्रुवान्त्यशशिशक्रसुरेज्यधिष्ण्ये ।
रिक्तासु नो शशिकुजेज्यभृगौ तु नीचे
नास्तं गते न विजिते न च शत्रुगेहे ।।१।।

अन्वयः—उत्तरगे दिनेशे मिश्रध्रुवान्त्यशशिशक्रसुरेज्यधिष्ण्ये अग्निहोत्रविधिः स्यात्। रिक्तासु नो शुभः। शशिकुजेज्यभृगौ नीचे न, अस्तं गते न, विजिते न, च शत्रुगेहे न शुभः ।।१।।

भा० टी०—उत्तरायण (मकर-कुम्भ, मेष, वृष, मिथुन राशि में सूर्य हों) सूर्य में मिश्र, ध्रुव संज्ञक, रेवती, मृगशिरा, ज्येष्ठा, पुष्य नक्षत्रों में, रिक्ता तिथि को छोड़कर अन्य तिथियों में अग्निहोत्र लेना शुभद होता है। किन्तु चन्द्रमा, भौम, गुरु, शुक्र अपनी नीच राशि में न हों, अस्त न हों, युद्ध में पराजित न हों और अपने शत्रु के घर में न हों ऐसे समय में अग्निहोत्र लेना चाहिये ।।१।।

लग्नशुद्धि—

नो कर्कनक्रझषकुम्भनवांशलग्ने
नोऽब्जे तनौ रविशशीज्यकुजे त्रिकोणे।
केन्द्रर्क्षषट्त्रिभवगे च परैस्त्रिलाभ-
षट्खस्थितैर्निधनशुद्धियुते विलग्ने ।।२।।

अन्वयः—कर्क-नक्र-झष-कुम्भनवांशलग्ने नो, अब्जे तनौ नो शुभः। रविशशीज्यकुजे त्रिकोणे केन्द्रर्क्षषट्त्रिभवगे, परैः त्रिलाभषट्खस्थितैः, निधनशुद्धियुते विलग्ने अग्निहोत्रविधिः स्यात् ।।२।।

भा० टी०—कर्क, मकर, मीन, कुम्भ इन लग्न और नवांशों में तथा लग्न में चन्द्रमा हो ऐसे लग्न में अग्निहोत्र नहीं लेना चाहिये। लग्न से सूर्य, चन्द्रमा, गुरु और भौम त्रिकोण (९।५), केन्द्र (१।४।७।१०), ६।३।११ इन स्थानों में हों और शेष (बुध, शुक्र, शनि, राहु, केतु) ग्रह ३।११।६।१० इन स्थानों में हों, लग्न से अष्टम शुद्ध हो ऐसे लग्न में अग्निहोत्र लेना शुभद होता है।।२।।

यज्ञ करने योग्य अग्नि—

चापे जीवे तनुस्थे वा मेषे भौमेऽम्बरे द्युने।
षट्त्र्यायेऽब्जे रवौ वा स्याज्जाताग्निर्यजति ध्रुवम् ॥३॥

अन्वयः—जीवे चापे तनुस्थे वा भौमे मेषे (लग्नस्थे) वा अम्बरे द्यूने। अब्जे षट्त्र्याये वा रवौ षट्त्र्याये (स्थिते) जाताग्निः ध्रुवं यजति ॥३॥

भा० टी०—बृहस्पति धन राशि का लग्न में हो १, अथवा मेष का मंगल लग्न में हो २, अथवा मंगल लग्न से १०वें या ७वें हो ३, अथवा चन्द्रमा ६।३। ११वें हो ४, अथवा सूर्य ६।३।११वें हो तो ऐसे योग में अग्निहोत्र लेने से निश्चय ही अग्निहोत्री यज्ञ करता है ॥३॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ अग्न्याधानप्रकरणम् ॥ ९ ॥

राजाभिषेकप्रकरणम्

तत्र वैदिकेनाभिषेकाख्येन विशिष्टकर्मणा राजशब्दवाच्यपुरुषतत्संस्कारविशेषो राजाभिषेकशब्देनोच्यते।

राजाभिषेक में समय-शुद्धि—

राजाभिषेकः शुभ उत्तरायणे गुर्विन्दुशुक्रैरुदितैर्बलान्वितैः।
भौमार्कलग्नेशदशेशजन्मपैर्नो चैत्ररिक्तारनिशामलिम्लुचे ॥१॥

अन्वयः—उत्तरायणे (सूर्ये) गुर्विन्दुशुक्रैः उदितैः भौमार्कलग्नेशदशेशजन्मपैः बलान्वितैः राजाभिषेकः शुभः स्यात्। चैत्ररिक्तारनिशामलिम्लुचे नो शुभः स्यात् ॥१॥

भा० टी०—उत्तरायण सूर्य में गुरु, चन्द्रमा, शुक्र के उदय समय में भौम, सूर्य, जन्म लग्नेश, दशेश (अभिषेक के समय जिस ग्रह की दशा हो वह) और जन्मराशीश ये बलवान् हों ऐसे समय में राजाभिषेक करना शुभद होता है। चैत्र मास, रिक्ता तिथि, भौमवार, रात्रि और अधिकमास में राजाभिषेक शुभद नहीं होता है॥१॥

राजाभिषेक के नक्षत्र और लग्नशुद्धिः—

शाक्रश्रवः क्षिप्रमृदुध्रुवोडुभिः शीर्षोदये वोपचये शुभे तनौ।
पापैस्त्रिषष्ठायगतैः शुभग्रहैः केन्द्रत्रिकोणायधनत्रिसंस्थितैः ॥२॥

अन्वयः—शाक्रश्रवः क्षिप्रमृदुध्रुवोडुभिः, शीर्षोदये वा उपचये शुभे तनौ, त्रिषष्ठायगतैः पापैः, केन्द्रत्रिकोणायधनत्रिसंस्थितैः शुभैः राजाभिषेकः शुभः स्यात ॥२॥

भा० टी०—ज्येष्ठा, श्रवण, क्षिप्र संज्ञक, मृदु संज्ञक, ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में, शीर्षोदय[1] (मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ) लग्न में अथवा उपचय (जन्मलग्न वा जन्मराशि से ३।६।१०।११वीं राशि) शुभ लग्न में, लग्न से पाप-ग्रह ३।६।११वें हों और शुभ ग्रह केन्द्र (१।४।७।१०), त्रिकोण (९।५), ११।२।३ रे स्थानों में हो तो राजाभिषेक शुभद होता है ॥२॥

लग्न की ग्रह-स्थिति के अनुसार फल—

पापैस्तनौ रुङ्निधने मृतिः सुते पुत्रार्तिरर्थव्ययगैर्दरिद्रता।
स्यात्खेऽलसो भ्रष्टपदो द्युनाम्बुगैः सर्वं शुभं केन्द्रगतैः शुभग्रहैः ॥३॥

अन्वयः—पापैः तनौ रुग्, निधने मृतिः, सुते पुत्रार्तिः, अर्थव्ययगैः दरिद्रता, खे अलसः, द्युनाम्बुगैः भ्रष्टपदः स्यात्, तथा केन्द्रगतैः शुभग्रहैः सर्वं शुभं स्यात् ॥३॥

भा० टी०—यदि राजाभिषेककालिक लग्न में पापग्रह हों तो राजा रोगी होता है, आठवें पापग्रह हों तो मृत्यु होती है, पाँचवें हों तो पुत्र का कष्ट, दूसरे और बारहवें हों तो दरिद्रता होती है, दशम में हों तो आलसी, सातवें और चौथे हों तो राज्य से भ्रष्ट होता है। यदि केन्द्र में शुभ ग्रह हों तो सभी जगह शुभ फल होता है ॥३॥

राज्यस्थिरता का योग—

गुरुर्लग्नकोणे कुजोऽरौ सितः खे
स राजा सदा मोदते राजलक्ष्म्या।
तृतीयायगौ सौरिसूर्यौ खबन्ध्वो-
र्गुरुश्चेद्धरित्री स्थिरा स्यान्नृपस्य ॥४॥

अन्वयः—गुरुः लग्नकोणे, कुजः अरौ, सितः खे स्थितस्तदा स राजा सदा राज लक्ष्म्या मोदते। यदि, सौरिसूर्यौ तृतीयायगौ, गुरुः खबन्ध्वोः (स्थितस्तदा) नृपस्य धरित्री स्थिरा स्यात् ॥४॥

भा० टी०—यदि राजाभिषेक के समय गुरु लग्न या त्रिकोण में हों, मंगल छठे हों, शुक्र १०वें हों तो वह राजा हमेशा राजलक्ष्मी से युक्त और प्रसन्न रहता है और शनि, सूर्य ३।११वें हों और गुरु दशम या चतुर्थ में हों तो राजा की पृथ्वी सदा स्थिर रहती है ॥४॥

इति मुहूर्त्तचिन्तामणौ राजाभिषेकप्रकरणम् ॥ १० ॥

१—"गोजाश्विकर्किमिथुनाः समृगा निशाख्या पृष्ठोदया विमिथुनाः कथितास्त एव।
शीर्षोदया दिनबलाश्च भवन्ति शेषा लग्नं समेत्युभयतः पृथुरोमयुग्मम्।"
(उपचयान्यरिकर्मलाभदुश्चिक्यसंज्ञितगृहाणि न नित्यमेके।')

यात्राप्रकरणम्

तत्र किंचित्कार्यमुद्दिश्य देशान्तरगमनं यात्रेति वाच्या। सा च द्विविधा। एका समरविजययात्राऽपरा सामान्ययात्रा। तत्र शत्रुनगरजयार्थं वक्ष्यमाण-योगलग्नजातकोक्तराजयोगलग्नेषु प्राधान्येन यात्रा सा समरविजयाख्या। या द्रव्यार्जनार्थं वाराणस्यादितीर्थदर्शनार्थं वा तिथ्यादिशुद्धिमंगीकृत्य यात्रा सा सामान्ययात्रा।

यात्रा-मुहूर्त्त के विचार में विशेष—

यात्रायां प्रविदितजन्मनां नृपाणां दातव्यं दिवसमबुद्धजन्मनां च।
प्रश्नाद्यैरुदयनिमित्तमूलभूतैर्विज्ञाते ह्यशुभशुभे बुधः प्रदद्यात् ॥१॥

अन्वयः—प्रविदितजन्मनां नृपाणां यात्रायां दिवसं दातव्यम्। अबुद्धजन्मनां च प्रश्नाद्यैः उदयनिमित्तमूलभूतैः अशुभशुभे विज्ञाते बुधः (यात्रायां दिवसं) प्रदद्यात् ॥१॥

भा० टी०—जिनका जन्मदिन ज्ञात है उनको जन्मकालिक ग्रहों के अनुसार शुभाशुभ को समझकर और जिनका जन्मदिन अज्ञात है उनको शकुन और प्रश्न-लग्नादि से शुभाशुभ समझकर यात्रा में शुभ मुहूर्त्त बताना चाहिये ॥१॥

यात्रा में प्रश्नलग्न से फल—

जननराशितनू यदि लग्नगे तदधिपौ यदि वा तत एव वा।
त्रिरिपुखायगृहं यदि वोदयो विजय एव भवेद्वसुधापतेः ॥२॥

अन्वयः—यदि जननराशितनू लग्नगे वा तदधिपौ ततः एव यदि वा त्रिरिपु-खायगृहं उदयः स्यात् तदा वसुधापतेः विजय एव भवेत् ॥२॥

भा० टी०—यदि जन्मलग्न वा जन्मराशि प्रश्नकालिक लग्न में हो, अथवा उन दोनों (जन्मलग्न-जन्मराशि) के स्वामी लग्न में हों, अथवा जन्मराशि जन्मलग्न से ३।६।१०।११वीं राशि प्रश्नलग्न हो तो यात्रा करनेवाले (राजा) की विजय ही होती है ॥२॥

अन्य फल—

रिपुजन्मलग्नभमथाधिपौ तयोस्तत एव वोपचयसद्म चेद्भवेत्।
हिबुके द्युनेऽथ शुभवर्गकस्तनौ यदि मस्तकोदयगृहं तदा जयः ॥३॥

अन्वयः—रिपुजन्मलग्नभं अथवा तयोः अधिपौ, वा ततः एव उपचयसद्म चेत् हिबुके द्युने भवेत् तदा वसुधापतेः जयः स्यात्। अथ यदि तनौ शुभवर्गकः वा मस्तकोदयगृहं तदा जयः स्यात् ॥३॥

भा० टी०—शत्रु की जन्मलग्न वा जन्मराशि अथवा दोनों के स्वामी प्रश्न-लग्न से चौथे वा सातवें हों अथवा शत्रु के जन्मलग्न जन्मराशि से उपचयराशि

(३।६।१०।११) में से कोई भी राशि प्रश्नलग्न से चौथे वा सातवें हो, अथवा लग्न में शुभग्रह का षड्वर्ग हो अथवा प्रश्नलग्न में शीर्षोदयराशि (मिथुन-सिंह-कन्या-तुला-धन-कुम्भ) राशि हो तो राजा की विजय होती है ॥३॥

अन्य फल—

यदि पृच्छितनौ वसुधा रुचिरा शुभवस्तु यदि श्रुतिदर्शनगम् ।
यदि पृच्छति चादरतश्च शुभग्रहदृष्टयुतं चरलग्नमपि ॥४॥

अन्वयः—यदि पृच्छितनौ वसुधा रुचिरा, यदि वा शुभवस्तु श्रुतिदर्शनगं भवेत्, च यदि आदरतः पृच्छति, अपि (वा) शुभग्रहदृष्टयुतं चरलग्नं स्यात् तदा जयः स्यात् ॥४॥

भा० टी०—यदि प्रश्न के समय सुन्दर भूमि हो अथवा सुन्दर शुभ वस्तु सुनने और देखने में आती हो, और यदि आदर से प्रश्न पूछे और शुभ ग्रह से प्रश्नलग्न युत और दृष्ट हो और चरलग्न हो तो भी विजय होती है ॥४॥

अन्य फल—

विधुकुजयुतलग्ने सौरिदृष्टेऽथ चन्द्रे
मृतिभमदनसंस्थे लग्नगे भास्करेऽपि ।
हिबुकनिधनहोराद्यूनगे चापि पापे
सपदि भवति भङ्गः प्रश्नकर्तुस्तदानीम् ॥५॥

अन्वयः—अथ विधुकुजयुतलग्ने सौरिदृष्टे, चन्द्रे मृतिभमदनसंस्थे, भास्करे लग्नगे, अपि, भास्करे मृतिभमदनसंस्थे, चन्द्रे लग्नगे, पापे हिबुकनिधनहोरा-द्यूनगे तदानीं प्रश्नकर्तुः सपदि भङ्गो भवति ॥५॥

भा० टी०—प्रश्नलग्न में चन्द्रमा और मंगल हों शनि देखता हो, अथवा चन्द्रमा ८वें, ७वें हो और सूर्य लग्न में हो, अथवा सूर्य ८वें या ७वें हो चन्द्रमा लग्न में हो अथवा पापग्रह ४।८।१।७ इन स्थानों में से किसी स्थान में हों तो प्रश्नकर्त्ता की पराजय होती है ॥५॥

प्रश्नलग्न से अन्य फल का विचार—

त्रिकोणे कुजात् सौरिशुक्रज्ञजीवा
यदेकोऽपि वा नो गमोऽर्काच्छशीवा ।
बलीयांस्तु मध्ये तयोर्यो ग्रहः स्यात्
स्वकीयां दिशं प्रत्युताऽसौ नयेच्च ॥६॥

अन्वयः—यदा कुजात् सौरिशुक्रज्ञजीवा (सर्वे) वा एकोऽपि त्रिकोणे तदा गमः नो भवेत् । वा शशी अर्कात् त्रिकोणे तदा गमः नो भवेत् प्रत्युत तयोर्मध्ये यो ग्रहो बलीयान् असौ स्वकीयां दिशं नयेत् ॥६॥

भा० टी०—प्रश्नकालिक लग्न में यदि भौम से शनि, शुक्र, बुध गुरु, ये सभी या इनमें से एक भी त्रिकोण में हो तो प्रश्नकर्त्ता की यात्रा नहीं होती है। अथवा सूर्य मे त्रिकोण में चन्द्रमा हो तो भी यात्रा नहीं होती है। किन्तु इन दोनों ग्रहों में जो बलवान् होता है वह अपनी दिशा को ले जाता है ।।६।।

अन्य योग—

प्रश्ने गम्यदिगीशात् खेटः पञ्चमगो यः।
बोभूयाद्बलयुक्तः स्वामाशां नयतेऽसौ ।।७।।

अन्वयः—प्रश्ने गम्यदिगीशात् पञ्चमगः यः खेटः (असौ चेत्) बलयुक्तः बोभूयात् (तदा) असौ स्वां आशां नयते ।।७।।

भा० टी०—प्रश्नलग्न में जानेवाली दिशा के स्वामी से ५वें स्थान में जो ग्रह हो वह यदि बली हो तो वह अपनी दिशा को ले जाता है ।।७।।

सौरमान से यात्रा का समय—

धनुर्मेष-सिंहेषु यात्रा प्रशस्ता, शनिज्ञोशनोराशिगे चैव मध्या।
रवौ कर्कमीनाऽलिसंस्थेऽतिदीर्घा, जनुः पञ्चसप्तत्रितारारश्च नेष्टाः ।।८।।

अन्वयः—धनुर्मेषसिंहेषु (रवौ) यात्रा प्रशस्ता स्यात्, च शनिज्ञोशनोराशिगे (रवौ) मध्या स्यात्। कर्कमीनाऽलिसंस्थे (रवौ) अतिदीर्घा यात्रा स्यात्। तथा जनुः पञ्चसप्तत्रिताराः नेष्टाः भवन्ति ।।८।।

भा० टी०—धन, मेष, सिंह राशि के सूर्य में यात्रा करना श्रेष्ठ होता है। शनि, बुध, शुक्र की राशि (१०।११।३।६।२।७) में यात्रा मध्यम होती है और कर्क, मीन, वृश्चिक राशि के सूर्य में दीर्घ यात्रा होती है। यात्रा के समय १।५।७।३ ये ताराएँ अशुभ होती हैं ।।८।।

तिथि-नक्षत्र की शुद्धि—

न षष्ठी न च द्वादशी नाऽष्टमी नो,
सिताद्या तिथिः पूर्णिमाऽमा न रिक्ता।
हयादित्य-मैत्रेन्दुजीवान्त्यहस्त-
श्रवोवासवैरेव यात्रा प्रशस्ता ।।९।।

अन्वयः—षष्ठी शुभा न, च द्वादशी न, अष्टमी नो सिताद्याः तिथिः, पूर्णिमा, अमा, रिक्ता न शुभा भवति। हयादित्यमैत्रेन्दुजीवान्त्यहस्तश्रवोवासवैः एव यात्रा प्रशस्ता स्यात् ।।९।।

भा० टी०—षष्ठी, द्वादशी, शुक्लपक्ष की प्रतिपदा, तथा पूर्णिमा, अमावास्या, रिक्ता (४।९।१४) इन तिथियों में यात्रा श्रेष्ठ नहीं होती है। अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा इन्हीं नक्षत्रों में ही यात्रा श्रेष्ठ होती है ।।९।।

वार और नक्षत्र शूल—

न पूर्वदिशि शक्रभे न विधुसौरिवारे तथा
न चाऽजपदभे गुरौ यमदिशीनदैत्येज्ययोः।
न पाशिदिशि धातृभे कुजबुधेऽर्यमर्क्षे तथा
न सौम्यककुभि व्रजेत् स्वजयजीवितार्थी बुधः ॥१०॥

अन्वयः—स्वजयजीवितार्थी बुधः शक्रभे तथा विधुसौरिवारे न व्रजेत्। च (पुनः) अजपदभे, गुरौ यमदिशि न व्रजेत्। इन दैत्येज्ययोः धातृभे पाशि दिशि न व्रजेत्। तथा कुजबुधे अर्यमर्क्षे सौम्यककुभि न व्रजेत् ॥१०॥

भा० टी०—अपने जीवन और विजय को चाहनेवाला पुरुष ज्येष्ठा नक्षत्र और शनि, चन्द्रवार, को पूर्वदिशा में, पूर्वाभाद्रपदा और गुरुवार को दक्षिण दिशा में, रविवार, शुक्रवार और रोहिणी नक्षत्र में पश्चिम दिशा में, भौम, बुध वारों में तथा उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्तर दिशा में यात्रा न करे ॥१०॥

समयशूल—

पूर्वाह्णे ध्रुवमिश्रभैर्न नृपतेर्यात्रा न मध्याह्नके
तीक्ष्णाख्यैरपराह्णके न लघुभैर्नो पूर्वरात्रे तथा।
मित्राख्यैर्न च मध्यरात्रिसमये चोग्रैस्तथा नो चरै-
रात्र्यन्ते हरिहस्तपुष्यशशिभिः स्यात् सर्वकाले शुभा ॥११॥

अन्वयः—ध्रुवमिश्रभैः पूर्वाह्णे नृपतेः यात्रा न शुभा स्यात्। तीक्ष्णाख्यैः मध्याह्नके न शुभा, लघुभैः अपराह्णके न शुभा। तथा मित्राख्यैः पूर्वरात्रे न, तथा च मध्यरात्रिसमये उग्रैः न, तथा रात्र्यन्ते चरैः यात्रा न शुभा भवति। हरिहस्त-पुष्यशशिभिः सर्वकाले नृपतेः यात्रा शुभा स्यात् ॥११॥

भा० टी०—ध्रुव मिश्र संज्ञक नक्षत्रों में पूर्वाह्ण काल में, तीक्ष्ण संज्ञक नक्षत्र में मध्याह्न के समय, लघु संज्ञक नक्षत्र में अपराह्ण के समय, मित्र संज्ञक नक्षत्र में पूर्वरात्रि में, उग्र संज्ञक नक्षत्र में मध्यरात्रि में और चर संज्ञक नक्षत्र में रात्रि के अन्त-भाग में यात्रा शुभद नहीं होती है। और श्रवण, हस्त, पुष्य, मृगशिरा इन नक्षत्रों में सभी समयों में यात्रा श्रेष्ठ होती है ॥११॥

यात्रा में नक्षत्रों की त्याज्य घटी—

पूर्वाग्निपित्र्यान्तकतारकाणां भूपप्रकृत्युग्रतुरङ्गमाः स्युः।
स्वातीविशाखेन्द्रभुजङ्गमानां नाड्यो निषिद्धा मनुसम्मिताश्च ॥१२॥

अन्वयः—पूर्वाग्निपित्र्यान्तकतारकाणां भूपप्रकृत्युग्रतुरङ्गमाः, च (पुनः) स्वातीविशाखेन्द्रभुजङ्गमानां मनुसम्मिताः नाड्यः निषिद्धाः स्युः ॥१२॥

भा० टी०—तीनों पूर्वा की आरम्भ से भूप (१६ घटी), कृत्तिका की प्रकृति (२१ घटी), मघा की उग्र (११ घटी), भरणी की तुरङ्ग (७ घटी), तथा स्वाती, विशाखा, ज्येष्ठा, श्लेषा की १४ घटी यात्रा में निषिद्ध है ॥१२॥

मतान्तर से नक्षत्रों की त्याज्य घटी—

पूर्वार्धमाग्नेयमघाऽनिलानां त्यजेद्धि चित्राहियमोत्तरार्धम् ।
नृपः समस्तां गमने जयार्थी स्वातीं मघां चौशनसो मतेन ॥१३॥

अन्वयः—आग्नेयमघानिलानां पूर्वार्धं, चित्राहियमोत्तरार्धं, हि (निश्चयेन) जयार्थी नृपः गमने त्यजेत् । च उशनसः मतेन स्वातीं मघां समस्तां त्यजेत् ॥१३॥

भा० टी०—कृत्तिका, मघा, स्वाती इनका पूर्वार्द्ध, चित्रा, श्लेषा, भरणी इनका उत्तरार्ध अपनी विजय चाहनेवाले यात्रा में त्याग दें। और शुक्राचार्य के मत से निश्चय करके स्वाती और मघा को सम्पूर्ण त्याग दें ॥१३॥

नक्षत्रों की जीव मृतपक्षादि संज्ञा—

तमोभुक्ततारा: स्मृतो विश्वसंख्याः शुभो जीवपक्षो मृतश्चापिभोग्याः ।
तदाक्रान्तभं कर्तरीसंज्ञमुक्तं ततोऽक्षेन्दुसंख्यं भवेद्ग्रस्तनाम ॥१४॥

अन्वयः—तमोभुक्ततारा: विश्वसंख्याः जीवपक्षः शुभः स्मृतः । च (पुनः) भोग्याः (विश्वसंख्याः) मृतः (पक्षः) उक्तः । तदाक्रान्तभं कर्त्तरीसंज्ञं उक्तम् । ततः अक्षेन्दुसंख्यं ग्रस्तनाम भवेत् ॥१४॥

भा० टी०—राहु से भुक्त[1] १३ नक्षत्रों की जीवपक्ष संज्ञा है और वे शुभ हैं तथा राहु के नक्षत्र से भोग्य १३ नक्षत्रों की मृतपक्ष संज्ञा है। जिस नक्षत्र पर राहु हो उसकी कर्त्तरी संज्ञा है। और उससे १४वें नक्षत्र की ग्रस्त संज्ञा है ॥१४॥

जीवपक्ष आदि नक्षत्रों के फल—

मार्तण्डे मृतपक्षगे हिमकरश्चेज्जीवपक्षे शुभा
यात्रा तद्विपरीतगे क्षयकरी द्वौ जीवपक्षे शुभा।
ग्रस्तर्क्षं मृतपक्षतः शुभकरं ग्रस्तात्तथा कर्तरी
यायीन्दुः स्थितिमान् रविर्जयकरौ तौ द्वौ तयोर्जीवगौ ॥१५॥

अन्वयः—मार्तण्डे मृतपक्षगे चेत् हिमकरः। जीवपक्षे तदा यात्रा शुभा स्यात्। विपरीतगे क्षयकरी स्यात्। द्वौ यदि जीवपक्षे तदा शुभा स्यात्। ग्रस्तर्क्ष मृतपक्षतः शुभकरं, तथा ग्रस्तात् कर्त्तरी शुभकरी। तथा इन्दुः यायी, रविः स्थितिमान्, तौ द्वौ जीवगौ तयोः शुभकरौ प्रोक्तौ ॥१५॥

भा० टी०—सूर्य मृतपक्ष संज्ञक नक्षत्र में हो और चन्द्रमा जीवपक्ष संज्ञक नक्षत्र में हो तो यात्रा शुभकर होती है। इससे विपरीत हों तो यात्रा क्षयकरी (हानिकारक) होती है। यदि दोनों (रवि-चन्द्र) जीव पक्ष में हों तो यात्रा शुभकर होती

१—विशेष—जिस नक्षत्र पर राहु है उससे आगे के नक्षत्रों की भुक्त संज्ञा होती है और पीछे के नक्षत्रों की भोग्य संज्ञा होती है; क्योंकि राहु सदा उल्टा (वक्र) चलता है।

है। मृतपक्ष संज्ञक नक्षत्र से ग्रस्त नक्षत्र शुभ है। तथा प्रश्न में कर्तरी शुभ है। चन्द्रमा यायी (मुद्दई) है और रवि स्थिर (मुद्दालेह) है। यदि दोनों जीवपक्ष में हों तो सुलह और चन्द्रमा जीवपक्ष में हो तो यायी की विजय तथा सूर्य जीवपक्ष में हो तो तो स्थायी की विजय होती है ॥१५॥

अकुल, कुल और कुलाकुल संज्ञक नक्षत्र—

स्वात्यन्तकाहिवसुपौष्णकरानुराधा-
दित्यध्रुवाणि विषमास्तिथयोऽकुलाः स्युः।
सूर्येन्दुमन्दगुरवश्च कुलाऽकुला ज्ञो
मूलाम्बुपेशविविभं दशषड्द्वितिथ्यः ॥१६॥
पूर्वाश्वीज्यमघेन्दुकर्णदहनद्वीशेन्द्रचित्रास्तथा
शुक्रारौ कुलसंज्ञकाश्च तिथयोऽर्काष्टेन्द्रवेदैर्मिताः।
यायी स्यादकुले जयी च समरे स्थायी च तद्वत्कुले
सन्धिः स्यादुभयोः कुलाऽकुलगणे भूमीशयोर्युध्यतोः ॥१७॥

अन्वयः—स्वात्यन्तकाहिवसुपौष्णकरानुराधादित्यध्रुवाणि विषमाः तिथयः सूर्येन्दुमन्दगुरवश्च अकुलाः स्युः। ज्ञः मूलाम्बुपेशविविभं दशषड्द्वितिथ्यः कुलाकुलाः स्युः। पूर्वाश्वीऽज्यमघेन्दुकर्णदहनद्वीशेन्द्रचित्राः तथा शुक्रारौ अर्काष्टेन्द्रवेदैर्मिताः तिथयः कुलसंज्ञकाः स्युः। समरे अकुले यायी जयी स्यात्। तद्वत् कुले स्थायी जयी स्यात्। उभयोः भूमीशयोः कुलाकुलगणे युध्यतोः सन्धिः स्यात् ॥१६-१७॥

भा० टी०—स्वाती, भरणी, श्लेषा, धनिष्ठा, रेवती, हस्त, अनुराधा, पुनर्वसु, ध्रुव संज्ञक नक्षत्र, विषम तिथि और सूर्य, चन्द्र, शनि और गुरु इन वारों की अकुल संज्ञा है। बुधवार, मूल, शतभिष, आर्द्रा, अभिजित् इन नक्षत्रों की तथा दशमी, षष्ठी, द्वितीया इन तिथियों की कुलाकुल संज्ञा है। तीनों पूर्वा, अश्विनी, पुष्य, मघा, मृगशिरा, श्रवण, कृत्तिका, विशाखा, ज्येष्ठा, चित्रा इन नक्षत्रों की, शुक्र और भौमवार की द्वादशी, अष्टमी, चतुर्दशी, चतुर्थी इन तिथियों की कुल संज्ञा है। अकुल संज्ञक नक्षत्रादि में यदि युद्ध आरम्भ हो तो यायी (चढ़ाई करनेवाले) की विजय होती है। और कुल संज्ञक में स्थायी की विजय होती है। कुलाकुलसंज्ञक में युद्धारम्भ हो तो दोनों में सन्धि (सुलह) हो जाती है ॥१६-१७॥

पथिराहुचक्र—

स्युर्धर्मे दस्रपुष्योरगवसुजलपद्वीशमैत्राण्यथार्थे
याम्याजांघ्रीन्द्रकर्णादितिपितृपवनोडून्यथो भानि कामे।
वह्न्याद्रबुध्न्यचित्रानिर्ऋतिविधिभगाख्यानि मोक्षेऽथ रोहि-
ण्याप्येन्द्रन्त्यर्क्षविश्वार्यमभदिनकरक्षाणि पथ्यादिराहौ ॥१८॥

अन्वयः—पथ्यादिराहौ दस्रपुष्योरगवसुजलपद्वीशमैत्राणि (भानि) अर्थे स्युः। अथ याम्याजांघ्रीन्द्रकर्णादितिपितृपवनोडूनि धर्मे स्युः। अथो वह्न्यार्द्रा-बुध्न्यचित्रानिर्ऋतिविधिभगाख्यानि भानि कामे स्युः अथ रोहिण्याप्येन्द्वन्त्यर्क्ष-विश्वार्यमभदिनकरर्क्षाणि मोक्षे स्युः ॥१८॥

भा० टी०—पथिराहुचक्र में अश्विनी, पुष्य, श्लेषा, धनिष्ठा, शतभिषा, विशाखा, अनुराधा ये नक्षत्र धनस्थान में; भरणी, पूर्वभाद्रपदा, ज्येष्ठा, श्रवण, पुनर्वसु, मघा, स्वाती ये धर्मस्थान में; कृत्तिका, आर्द्रा, उत्तराभाद्रपदा, चित्रा, मूल, अभिजित्, पूर्वाफाल्गुनी ये कामस्थान में; रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वा-षाढ़, मृगशिरा, उत्तराषाढ़, रेवती, हस्त ये मोक्ष स्थान में हैं ॥१८॥

राहुचक्र का फल—

धर्मगे भास्करे वित्तमोक्षे शशी वित्तगे धर्ममोक्षस्थितः शस्यते ।
कामगे धर्ममोक्षार्थगः शोभनो मोक्षगे केवलं धर्मगः प्रोच्यते ॥१९॥

अन्वयः—धर्मगे भास्करे वित्तमोक्षे शशी शस्यते। वित्तगे भास्करे धर्ममोक्ष-स्थितः। कामगे भास्करे धर्ममोक्षार्थगः शशी शोभनः। मोक्षगे भास्करे केवलं धर्मगः शशी शोभनः प्रोच्यते ॥१९॥

भा० टी०—धर्मस्थान के नक्षत्र में सूर्य और अर्थ वा मोक्ष के नक्षत्र में चन्द्रमा हो, अथवा अर्थ में सूर्य, धर्म या मोक्ष में चन्द्रमा हो, अथवा काम में सूर्य धर्म, मोक्ष, अर्थ में चन्द्रमा हो, अथवा काम में सूर्य और केवल धर्म में चन्द्रमा हो तो यात्रा शुभ होती है ॥१९॥

मास के अनुसार तिथियों का फल—

पौषे पक्षत्यादिका द्वादशैवं तिथ्यो माघादौ द्वितीयादिकास्ताः ।
कामात्तिस्रः स्युस्तृतीयादिवच्च याने प्राच्यादौ फलं तत्र वक्ष्ये ॥२०॥
सौख्यं क्लेशो भीतिरर्थागमश्च शून्यं नैःस्वं निःस्वता मिश्रता च ।
द्रव्यक्लेशो दुःखमिष्टाप्तिरर्थो लाभः सौख्यं मङ्गलं वित्तलाभः ॥२१॥
लाभो द्रव्याप्तिर्धनं सौख्यमुक्तं भीतिर्लाभो मृत्युरर्थागमश्च ।
लाभः कष्टद्रव्यलाभौ सुखं च कष्टं सौख्यं क्लेशलाभौ सुखं च ॥२२॥
सौख्यं लाभः कार्यसिद्धिश्च कष्टं क्लेशः कष्टात् सिद्धिरर्थो धनंच ।
मृत्युर्लाभो द्रव्यलाभश्च शून्यं शून्यं सौख्यं मृत्युरत्यन्तकष्टम् ॥२३॥

अन्वयः—पौषे पक्षत्यादिका द्वादश तिथ्यः। एवं माघादौ द्वितीयादिकाः ताः, च (पुनः) कामात् तिस्रः तृतीयादिवत् ज्ञेयाः। तत्र प्राच्यादौ याने फलं वक्ष्ये अन्यत् श्लोकक्रमेण स्पष्टम् ॥२०-२३॥

भा० टी०—पूर्वादि दिशा की यात्रा में पौष मास की प्रतिपदा से और माघ आदि मासों में द्वितीया आदि से द्वादशी पर्यन्त और १३।१४।१५ तिथियों को

३।४।५ तिथि के समान जानना, इनका फल क्रम से यह है। सौख्य, क्लेश, भय, धनागम, शून्य, निर्धन, दरिद्रता, मिश्रता, द्रव्य का क्लेश, दुःख, इष्टप्राप्ति, धनागम। लाभ, सुख, मंगल, धनलाभ। लाभ, द्रव्यप्राप्ति, धन, सुख। भय, लाभ, मृत्यु, धनागम। लाभ, कष्ट, धनलाभ, सुख। कष्ट, सुख, कष्ट से लाभ, सुख। सुख, लाभ, कार्यसिद्धि, कष्ट। क्लेश, कष्ट से सिद्धि, अर्थ, धन। मृत्यु, लाभ, धन का लाभ, शून्य। शून्य, सुख, अत्यन्त कष्ट ये क्रम से फल होते हैं ॥२०-२३॥

स्पष्टार्थचक्र—

पौ.	मा.	फा.	चै.	वै.	ज्ये	आ.	श्र.	भा.	आ.	का.	मा.	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	सौख्यं	क्लेश	भय	धना
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शून्य	निस्व	नैस्व	मिश्र
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	द्रव्यक्ले.	दुःख	इष्टाप्ति	अर्थ
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	लाभ	सौख्य	मङ्गल	वित्तल
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	लाभ	द्रव्यप्राप्ति	धन	सौख्य
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	भीति	लाभ	मृत्यु	अर्थाग.
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	लाभ	कष्ट	द्रव्यलाभ	सुख
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कष्ट	सौख्य	क्लेशाल्ला.	सुख
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	सौख्यं	लाभ	कार्यसि.	कष्ट
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	क्लेश	कष्टाप्ति.	अर्थ	धन
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	मृत्यु	लाभ	द्रव्यलाभ	शून्य
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	शून्य	सौख्य	मृत्यु	अ.कष्ट

सर्वांकज्ञान चक्र—

तिथ्यृक्षवारयुतिरद्रिगजाग्नितष्टा
स्थानत्रयेऽत्र वियति प्रथमेऽतिदुःखी।
मध्ये धनक्षतिरथो चरमे मृतिः स्यात्
स्थानत्रयेऽङ्कयुजि सौख्य-जयौ निरुक्तौ ॥ २४ ॥

अन्वयः—तिथ्यृक्षवारयुतिः स्थानत्रये क्रमेण अद्रिगजाग्नितष्टा प्रथमे (स्थाने) वियति अतिदुःखी, मध्ये धनक्षतिः, अथो चरमे मृतिः स्यात्। स्थानत्रये अङ्कयुजि सौख्यजयौ निरुक्तौ ॥२४॥

भा० टी०—यात्रा समय के तिथि, नक्षत्र और वार का योग कर तीन स्थान में रखना। उनमें क्रम से ७।८।३ से भाग देना। यदि प्रथम स्थान अर्थात् ७ से भाग देने पर शून्य बचे तो यात्रा में अत्यंत दुःख, दूसरे स्थान में शून्य हो तो धन की हानि और तीसरे स्थान में शून्य हो तो मृत्यु होती है। और तीनों स्थानों में अंक बचे तो सुख और विजय होती है ॥२४॥

नोट—तिथि की गणना शुक्ल पक्षादि से, नक्षत्र की गणना अश्विनी से और वार की गणना रवि से करनी चाहिये ।

उदाहरण—जैसे आषाढ़ शुक्ल १३ शनिवार अनुराधा नक्षत्र में यात्रा करनी है तो तिथि-संख्या १३,वार-संख्या ७ और नक्षत्र-संख्या १७ तीनों का योग ३७ हुआ । इसे तीन स्थान में रखकर क्रम से ७ से भाग दिया तो प्रथम स्थान में २ शेष बचा । ८ से भाग दिया तो दूसरे स्थान में ५ शेष बचा और ३ से भाग दिया तो तीसरे स्थान में १ शेष बचा इसलिए यात्रा बड़ी ही सुन्दर होगी ।

महाडल और भ्रम योग—

रवेर्भतोऽब्जभोन्मितिर्नगावशेषिता द्व्यगा ।
महाडलो न शस्यते त्रिषण्मिता भ्रमो भवेत् ॥ २५ ॥

अन्वयः—रवेर्भतः अब्जभोन्मितिः नगावशेषिता द्व्यगा तदा महाडलः स्यात् । स न शस्यते । त्रिषण्मिता तदा भ्रमो भवेत् ॥२५॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र के नक्षत्र तक (अर्थात् जिस दिन यात्रा करनी है उस दिन जो नक्षत्र हो वही चन्द्र-नक्षत्र है) गिनकर उसमें सात से भाग दे । यदि २ और ७ शेष बचे तो उस दिन महाडल योग होता है जो कि यात्रा में शुभकर नहीं होता है । यदि ३।६ शेष बचे तो भ्रम योग होता है । यह भी शुभद नहीं होता है ॥२५॥

हिम्बर योग—

शशाङ्कभं सूर्यभतोऽत्र गण्यं पक्षादितिथ्या दिनवासरेण ।
युतं नवाप्तं नगशेषकं चेत् स्याद्धिम्बरं तद्गमनेऽतिशस्तम् ॥२६॥

अन्वयः—अत्र सूर्यभतः शशाङ्कभं गण्यं तत् पक्षादितिथ्या दिनवासरेण युतं नवाप्तं चेत् नगशेषकं तदा हिम्बरं स्यात् । तत् गमने अतिशस्तं स्यात् ॥२६॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गिनकर उसमें शुक्ल-पक्षादि से इष्ट दिन पर्यन्त तिथि-संख्या को और रविवार से वार-संख्या को जोड़कर नौ (९) से भाग देना यदि ७ शेष बचे तो हिम्बर योग होता है जो कि यात्रा में अत्यन्त श्रेष्ठ होता है ॥२६॥

घात चन्द्र का विचार—

भूपञ्चाङ्कद्वयङ्गदिग्वह्निसप्तवेदाष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्रः ।
मेषादीनां राजसेवाविवादे वर्ज्यो युद्धाद्ये च नाऽन्यत्र वर्ज्यः ॥२७॥

अन्वयः—मेषादीनां (राशीनां क्रमात्) भूपञ्चाङ्कद्वयङ्गदिग्वह्निसप्तवेदाष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्रः स्यात् । स राजसेवाविवादे च युद्धाद्ये वर्ज्यः, अन्यत्र न वर्ज्यः ॥२७॥

भा० टी०—मेषादि राशिवालों को क्रम से १।५।९।२।६।१०।३।७।४।८।११।१२ राशि के चन्द्रमा घात चन्द्र होते हैं। यह राजसेवा (नौकरी), विवाद (झगड़ा) और युद्ध में त्याज्य हैं, अन्यत्र नहीं ॥२७॥

मतान्तर से घात चन्द्र में नक्षत्रों के त्याज्य चरण—

आग्नेयत्वाष्ट्र-जलपपित्र्यवासवरौद्रभे ।
मूलब्राह्माजपादर्क्षे पित्र्यमूलाजभे क्रमात् ॥ २८ ॥
रूपद्वयग्न्यग्निभूरामद्वयब्ध्यग्न्यब्धियुगाग्नयः ।
घातचन्द्रे धिष्ण्यपादा मेषाद्वर्ज्या मनीषिभिः ॥ २९ ॥

अन्वयः—आग्नेयत्वाष्ट्रजलपपित्र्यवासवरौद्रभे मूलब्राह्माजपादर्क्षे पित्र्य-मूलाजभे क्रमात् मेषात् घातचन्द्रे रूपद्वयग्न्यग्निभूरामद्वयब्ध्यग्न्यब्धियुगाग्नयः मनीषिभिः वर्ज्याः ॥२८-२९॥

भा० टी०—मेषादि राशिवालों को क्रम से कृत्तिका, चित्रा, शतभिषा, मघा, धनिष्ठा, आर्द्रा, मूल, रोहिणी, पूर्वाभाद्रपदा, मघा, मूल, पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्रों के क्रम से १।२।३।३।१।३।२।४।३।४।४।३। ये चरण पण्डितों को त्याग देने चाहिये ॥२८-२९॥

घात तिथि—

गोस्त्रीझषे घाततिथिस्तु पूर्णा भद्रा नृयुक्कर्कटकेऽथ नन्दा ।
कौर्प्याजयोर्नक्रघटे च रिक्ता जया धनुःकुम्भहरौ न शस्ताः ॥३०॥

अन्वयः—गोस्त्रीझषे पूर्णा घाततिथिः, तु (पुनः) नृयुक्कर्कटके भद्रातिथिः, अथ कौर्प्याजयोः नन्दा, नक्रघटे रिक्ता, धनुः कुम्भहरौ जया घाततिथिः न शस्ता स्युः ॥३०॥

भा० टी०—वृष, कन्या, मीन इन राशि वालों को पूर्णा तिथि; मिथुन, कर्क राशिवालों को भद्रा तिथि; वृश्चिक, मेष राशिवालों को नन्दा तिथि; मकर, तुला राशि वालों को रिक्ता तिथि; धन, सिंह, कुम्भ राशि वालों को जया तिथि घात होती है। यह यात्रा आदि में शुभद नहीं होती है ॥३०॥

घात वार—

नक्रे भौमो गोहरिस्त्रीषु मन्दश्चन्द्रो द्वन्द्वेऽर्कोजभे ज्ञश्च कर्के ।
शुक्रः कोदण्डालिमीनेषु कुम्भे जूके जीवो घातवारा न शस्ताः ॥३१॥

अन्वयः—नक्रे भौमः, गोहरिस्त्रीषु मन्दः, द्वन्द्वे चन्द्रः, अजभे अर्कः, च (पुनः) कर्के ज्ञः, कोदण्डालिमीनेषु शुक्रः, कुम्भे जूके जीवः घातवाराः न शस्ताः स्युः ॥३१॥

भा० टी०—मकर राशिवालों को भौमवार, वृष, सिंह, कन्या राशिवालों को शनिवार, मिथुन को चन्द्रवार, मेष राशि को रविवार, कर्क राशि को बुधवार, धन, वृश्चिक, मीन राशि वालों को शुक्रवार घात वार हैं। ये यात्रा आदि में शुभ नहीं होते हैं ॥३१॥

घात नक्षत्र—

मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यम्बुपान्त्यभम् ।
याम्यब्राह्मेशसार्पञ्च मेषादेर्घातिभं न सत् ॥ ३२ ॥

अन्वयः—मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यम्बुपांत्यभम् । याम्यब्राह्मेशसार्पं च क्रमात् मेषादेः घातभं न सत् स्यात् ॥३२॥

भा० टी०—मेषादि राशिवालों को क्रम से मघा, हस्त, स्वाती, अनुराधा, मूल, श्रवण, शतभिषा, रेवती, भरणी, रोहिणी, आर्द्रा, श्लेषा, ये नक्षत्र घातक होते हैं। इन्हें यात्रा आदि में त्याग देना चाहिये ॥३२॥

योगिनी का विचार—

नवभूम्यः शिववह्नयोऽक्षविश्वेऽर्ककृताः शक्ररसास्तुरङ्गतिथ्यः ।
द्विदिशोऽमावसवश्च पूर्वतः स्युस्तिथयः सम्मुखवामगा न शस्ताः ॥३३॥

अन्वयः—नवभूम्यः, शिववह्नयः, अक्षविश्वे, अर्ककृताः, शक्ररसाः, तुरङ्गतिथ्यः, द्विदिशः, च, अमावसवः, तिथयः (क्रमेण) पूर्वतः स्युः। एताः सम्मुखवामगाः न शस्ताः स्युः ॥३३॥

भा० टी०—नवमी और प्रतिपदा तिथि को पूर्व में; एकादशी, तृतीया को अग्निकोण में; पंचमी, त्रयोदशी को दक्षिण में; द्वादशी, चतुर्थी को नैर्ऋत्यकोण में; चतुर्दशी, षष्ठी को पश्चिम में; सप्तमी, पूर्णिमा को वायव्यकोण में; द्वितीया, दशमी को उत्तर में और अमावस्या, अष्टमी को ईशान कोण में योगिनी रहती है। यात्रा में सामने और बायें शुभद नहीं होती है ॥३३॥

घातलग्न—

भूमिद्वयब्ध्यद्रिदिक्सूर्याङ्गाष्टाङ्केशाग्निसायकाः ।
मेषादिघातलग्नानि यात्रायां वर्जयेत् सुधीः ॥ ३४ ॥

अन्वयः—भूमिद्वयब्ध्यद्रिदिक्सूर्याङ्गाष्टाङ्केशाग्निसायकाः, 'क्रमात्' मेषादिघातलग्नानि सुधीः यात्रायां वर्जयेत् ॥३४॥

भा० टी०—मेषादि राशि वाले पुरुषों को क्रम से १।२।४।७।१०।१२।६।८। ९।११।३।५ ये लग्न घात लग्न होती हैं। इनको पंडितगण यात्रा में त्याग दें ॥३४॥

कालपाश योग—

कौबेरीतो वैपरीत्येन कालो वारेऽर्काद्ये सम्मुखे तस्य पाशः ।
रात्रावेतौ वैपरीत्येन गण्यौ यात्रायुद्धे सम्मुखे वर्जनीयौ ॥३५॥

अन्वयः—कौबेरीतः अर्काद्ये वारे वैपरीत्येन कालः स्यात्, तस्य सम्मुखे पाशः स्यात् । एतौ रात्रौ वैपरीत्येन गण्यौ, (तौ) यात्रायुद्धे सम्मुखे वर्जनीयौ ॥३५॥

भा० टी०—रविवारादि को उत्तर दिशा से विपरीत क्रम से काल रहता है और उसके सम्मुख दिशा में पाश रहता है। अर्थात् रविवार को उत्तर में काल और

दक्षिण में पाश; सोम को वायव्य में काल, आग्नेय में पाश; भौमवार को पश्चिम में काल, पूर्व में पाश; बुधवार को नैर्ऋत्य में काल, ईशान में पाश; गुरुवार को दक्षिण में काल, उत्तर में पाश; शुक्रवार को आग्नेय में काल, वायव्य में पाश; शनिवार को पूर्व में काल, पश्चिम में पाश। रात्रि में इन दोनों को उलटा समझना चाहिये, अर्थात् रवि को रात्रि में उत्तर में पाश और दक्षिण में काल। इसी प्रकार सभी दिशाओं में जानना। यात्रा और युद्ध में सम्मुख काल-पाश को त्याग देना चाहिये ॥३५॥
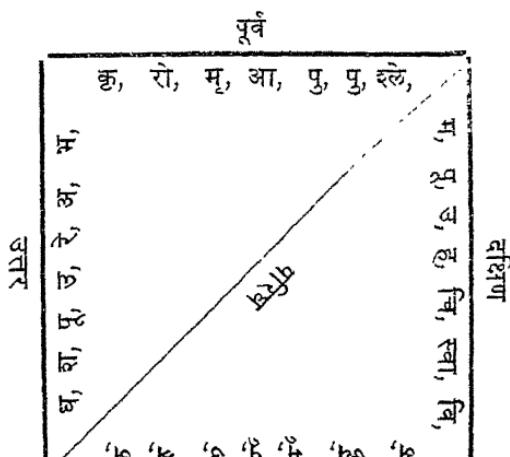
परिघ दण्ड—

भानि स्थाप्यान्यब्धिदिक्षु सप्त सप्तानलर्क्षतः।
वायव्याग्नेयदिक्संस्थं पारिघं नैव लङ्घयेत् ॥३६॥

अन्वयः—अनलर्क्षतः सप्त सप्त भानि अब्धिदिक्षु स्थाप्यानि, तत्र वायव्याग्नेय-दिक्संस्थं पारिघं नैव लंघयेत् ॥३६॥

भा० टी०—पूर्व आदि चारों दिशाओं में कृत्तिका से सात-सात नक्षत्र स्थापित करना। उसमें वायव्य और अग्निकोण में स्थित परिघ दंड का उल्लंघन करके यात्रा नहीं करनी चाहिये ॥३६॥

विशेष—जिस दिशा में जो नक्षत्र है उसी नक्षत्र में उस दिशा में यात्रा करने से परिघ दंड का उल्लंघन नहीं होता है। उससे विपरीत दिशा में यात्रा करने से परिघ दंड का उल्लंघन होता है। अर्थात् पूर्व-उत्तर के नक्षत्रों में दक्षिण-पश्चिम यात्रा करने में और दक्षिण-पश्चिम के नक्षत्रों में पूर्व-उत्तर दिशा में यात्रा करने में परिघ दंड का उल्लंघन होता है। स्पष्टार्थ चक्र देखो ॥

परिघचक्र—

परिघदंड का परिहार—

अग्नेर्दिशं नृप इयात् पुरुहूतदिग्भै-
रेवं प्रदक्षिणगता विदिशोऽथ कृत्ये ।
आवश्यकेऽपि परिघं प्रविलङ्घ्य गच्छे-
च्छूलं विहाय यदि दिक्तनुशुद्धिरस्ति ॥ ३७ ॥

अन्वयः—नृपः पुरुहूतदिग्भैः अग्नेः दिशं इयात्। एवं प्रदक्षिणगताः विदिशः इयात्। अथ आवश्यके कृत्ये शूलं विहाय यदि दिक्तनुशुद्धिः अस्ति तदा परिघं प्रविलंघ्य अपि गच्छेत् ॥३७॥

भा० टी०—राजा पूर्व दिशा के नक्षत्रों में अग्निकोण में यात्रा करे। इसी प्रकार प्रदक्षिणगत विदिशों में यात्रा करे। अर्थात् दक्षिण दिशा के नक्षत्रों में नैर्ऋत्यकोण में, पश्चिम दिशा के नक्षत्रों में वायव्यकोण में, उत्तर दिशा के नक्षत्रों में ईशानकोण में यात्रा करे तो परिघ का उल्लंघन नहीं होता है। आवश्यक कार्य में दिशाशूल को त्यागकर यदि [1]अभीष्ट दिशा की लग्न शुद्ध हो तो परिघ दंड का उल्लंघन करके भी यात्रा कर सकते हैं ॥३७॥

सभी दिशाओं के यात्रा के नक्षत्र और केन्द्रस्थ वक्रग्रह के दिनादि का निषेध—

मैत्रार्कपुष्याश्विनभैर्निरुक्ता यात्रा शुभा सर्वदिशासु तज्ज्ञैः ।
वक्रीग्रहः केन्द्रगतोऽस्य वर्गो लग्ने दिनं चास्य गमे निषिद्धम् ॥ ३८ ॥

अन्वयः—मैत्रार्कपुष्याश्विनभैः सर्वदिशासु तज्ज्ञैः यात्रा शुभा निरुक्ता। वक्रीग्रहः केन्द्रगतः वा लग्ने अस्य वर्गः च (पुनः) अस्य दिनं गमे निषिद्धम् ॥३८॥

भा० टी०—अनुराधा, हस्त, पुष्य, अश्विनी इन नक्षत्रों में पंडितों ने सभी दिशाओं की यात्रा शुभद कही है। केन्द्र में कोई वक्री ग्रह हो, अथवा वक्री ग्रह का षड्वर्ग लग्न में हो अथवा वक्री ग्रह का वार हो तो ये तीनों यात्रा में निषिद्ध हैं ॥३८॥

अयन-शुद्धि—

सौम्यायने सूर्य-विधू तदोत्तरां प्राचीं व्रजेत्तौ यदि दक्षिणायने ।
प्रत्यग्यमाशां च तयोर्दिवानिशं भिन्नायनत्वेऽथ वधोऽन्यथा भवेत् ॥३९॥

अन्वयः—यदि सूर्य-विधू सौम्यायने तदा उत्तरां प्राचीं व्रजेत्। यदि तौ (रविचन्द्रौ) दक्षिणायने तदा प्रत्यग्यमाशां व्रजेत्। अथ च तयोः भिन्नायनत्वे दिवानिशं व्रजेत्। अन्यथा वधः भवेत् ॥३९॥

भा० टी०—यदि सूर्य और चन्द्र उत्तरायण में हों तो पूर्व और उत्तर की यात्रा करे। यदि दोनों रवि चन्द्र दक्षिणायन में हों तो पश्चिम और दक्षिण की यात्रा

१—विशेष—मेष, सिंह, धन ये पूर्वदिशा की, वृष, कन्या, मकर ये दक्षिण दिशा की, मिथुन, तुला, कुम्भ ये पश्चिम दिशा की और कर्क, वृश्चिक, मीन ये त्तर दिशा की लग्न हैं ।

करे। यदि दोनों भिन्न अयन में हों तो सूर्य के अयन की दिशा में दिन में और चन्द्रमा के अयन की दिशा में रात्रि में यात्रा करे। अन्यथा (इससे विपरीत) यात्रा करने से मरण होता है ॥३९॥

त्रिविध सम्मुख शुक्र का विचार—

उदेति यस्यां दिशि यत्र याति गोलभ्रमाद्वाऽथ ककुब्भसंघे।
त्रिधोच्यते सम्मुख एव शुक्रो यत्रोदितस्तां तु दिशं न यायात् ॥४०॥

अन्वयः—शुक्रः यस्यां दिशि उदेति, गोलभ्रमाद् यत्र याति, अथवा ककुब्भसंघे यत्र तिष्ठति, त्रिधा सम्मुख शुक्र एव उच्यते। यत्र शुक्रः उदितः तां दिशं तु न यायात् ॥४०॥

भा० टी०—शुक्र जिस दिशा में उदय हो, गोल के भ्रमणवश (उत्तर-दक्षिण गोल के अनुसार) जिस दिशा में जाय, अथवा नक्षत्र-समूह के अनुसार कृत्तिका आदि नक्षत्रों के स्थितिवश (परिघ चक्र के अनुसार) जिस दिशा में हो; यह तीन प्रकार सम्मुख शुक्र का है। जिस दिशा में शुक्र उदित हो उस दिशा में यात्रा न करे ॥४०॥

शुक्र के वक्र आदि का अपवाद—

वक्रास्तनीचोपगते भृगोः सुते, राजा व्रजन् याति वशं हि विद्विषाम्।
बुधोऽनुकूलो यदि तत्र सञ्चलन्, रिपूञ्जयेन्नैव जयः प्रतीन्दुजे ॥४१॥

अन्वयः—भृगोः सुते वक्रास्तनीचोपगते व्रजन् राजा हि विद्विषां वशं याति। यदि बुधः अनुकूलः तत्र सञ्चलन् रिपून् जयेत्, प्रतीन्दुजे नैव जयः स्यात् ॥४१॥

भा० टी०—यदि शुक्र के वक्र, अस्त, नीच राशि में रहते हुए राजा यात्रा करे तो शत्रु के वश में हो जाता है। बुध के अनुकूल समय में (अर्थात् बुध के पीछे रहते) यात्रा करे तो शत्रु को जीतता है, और सम्मुख बुध में यात्रा करे तो विजय नहीं होती है ॥४१॥

सम्मुख शुक्र का परिहार—

यावच्चन्द्रः पूषभात् कृत्तिकाद्ये पादे शुक्रोऽन्धो न दुष्टोऽग्रदक्षे।
मध्ये मार्गं भार्गवास्तेऽपि राजा तावत्तिष्ठेत् सम्मुखत्वेऽपि तस्य ॥४२॥

अन्वयः—पूषभात् कृत्तिकाद्ये पादे यावत् चन्द्रः तिष्ठति तावत् शुक्रः अन्धः भवति, अग्रदक्षे न दुष्टः भवेत्। मध्ये मार्गं भार्गवास्ते अपि राजा तस्य सम्मुखत्वे अपि तावत् तिष्ठेत् ॥४२॥

भा० टी०—जब तक चन्द्रमा रेवती से कृत्तिका के प्रथम चरण तक रहता है तब तक शुक्र अन्धा रहता है, ऐसे समय में (अर्थात् अन्धाक्ष में) सम्मुख और दाहिने शुक्र का दोष नहीं होता है। रास्ते में यदि शुक्र अस्त हो जाय अथवा सम्मुख हो जाय तो तब तक वहाँ ठहर जाय जब तक कि शुक्र बायें और पीछे न हो जाय ॥४२॥

यात्रा में निषिद्ध लग्न—

कुम्भ-कुम्भांशकौ त्याज्यौ सर्वथा यत्नतो बुधैः ।
तत्र प्रयातुर्नृपतेरर्थनाशः पदे पदे ॥४३॥

अन्वयः—बुधैः यत्नतः सर्वथा कुम्भकुम्भांशकौ त्याज्यौ, यतः तत्र प्रयातुः नृपतेः पदे पदे अर्थनाशः स्यात् ॥४३॥

भा० टी०—पंडितगण प्रयत्न करके हमेशा यात्रा में कुम्भ लग्न और कुम्भ के नवमांश को त्याग दें; क्योंकि इसमें यात्रा करनेवाले राजा का पद-पद पर द्रव्य का नाश होता है ॥४३॥

अन्य अनिष्ट लग्न और शुभ लग्न—

अथ मीनलग्न उत वा तदंशके चलितस्य वक्रमिह वर्त्म जायते ।
जनिलग्नजन्मभपती शुभग्रहौ भवतस्तदा तदुदये शुभो गमः ॥४४॥

अन्वयः—अथ मीनलग्न उत वा तदंशके चलितस्य वर्त्म इह वक्रं जायते । जनिलग्नजन्मभपती शुभग्रहौ भवतः तदा तदुदये गमः शुभः स्यात् ॥४४॥

भा० टी०—मीन लग्न अथवा उसके नवमांश में यात्रा करनेवाले का मार्ग विलोम हो जाता है। यदि जन्मलग्न और जन्मराशि के स्वामी शुभ ग्रह हों और यात्रा लग्न में हों तो यात्रा शुभद होती है ॥४४॥

अन्य अनिष्ट लग्न—

जन्मराशितनुतोऽष्टमेऽथवा स्वारिभाच्च रिपुभे तनुस्थिते ।
लग्नगास्तदधिपा यदाऽथवा स्युर्गतं हि नृपतेर्मृतिप्रदम् ॥४५॥

अन्वयः—जन्मराशितनुतः अष्टमे, अथवा स्वारिभात् रिपुभे तनुस्थिते अथवा तदधिपाः यदा लग्नगाः (तदा) नृपतेः गतं मृतिप्रदं स्यात् ॥४५॥

भा० टी०—जन्मराशि और जन्मलग्न से अष्टम राशि अथवा अपने शत्रु की जन्मलग्न और जन्मराशि से छठी राशि लग्न में हो, अथवा इन राशियों के स्वामी लग्न में हों तो ऐसे योग में यात्रा करनेवाले (राजा) की मृत्यु होती है ॥४५॥

अन्य शुभ लग्न और नौका यात्रा—

लग्ने चन्द्रे वाऽपि वर्गोत्तमस्थे यात्रा प्रोक्ता वाञ्छितार्थैकदात्री ।
अम्भोराशौ वा तदंशे प्रशस्तं नौकायानं सर्वसिद्धिप्रदायि ॥४६॥

अन्वयः—लग्ने वर्गोत्तमस्थे अपि वा चन्द्रे वर्गोत्तमस्थे यात्रा वांछितार्थैकदात्री प्रोक्ता। अम्भोराशौ वा तदंशे लग्ने नौकायानं प्रशस्तं सर्वसिद्धिप्रदायि च स्यात् ॥४६॥

भा० टी०—लग्न वर्गोत्तम नवांश में हो अथवा चन्द्रमा वर्गोत्तम नवांश में हो तो यात्रा अभीष्ट फल को देनेवाली होती है। जलचर राशि लग्न हो अथवा

लग्न में जलचर राशि का नवमांश हो तो नौका से यात्रा श्रेष्ठ और सब सिद्धियों को देनेवाली होती है ॥४६॥

दिग्द्वार लग्न में यात्रा का फल—

दिग्द्वारभे लग्नगते प्रशस्ता यात्राऽर्थदात्री जयकारिणी च ।
हानिं विनाशं रिपुतो भयं च कुर्यात्तथा दिक्प्रतिलोमलग्ने ॥४७॥

अन्वयः—दिग्द्वारभे लग्नगते यात्रा प्रशस्ता, अर्थदात्री जयकारिणी च स्यात् । तथा दिक्प्रतिलोमलग्ने हानिं विनाशं रिपुतः भयं च कुयात् ॥४७॥

भा० टी०—दिग्द्वार[1] लग्न में यात्रा धन देनेवाली और विजय करनेवाली होती है। और दिशा से विलोम लग्न में यात्रा करने से हानि, विनाश और शत्रु से भय होता है ॥४७॥

अन्य शुभ लग्न—

राशिः स्वजन्मसमये शुभसंयुतो यो
यः स्वारिभान्निधनगोऽपि च वेशिसंज्ञः ।
लग्नोपगः स गमने जयदोऽथ भूप-
योगैर्गमो विजयदो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥४८॥

अन्वयः—स्वजन्मसमये यः राशिः शुभसंयुतः, यः स्वारिभात् निधनगः, अपि च यः वेशिसंज्ञः स (चेत्) लग्नोपगः (तदा) जयदः स्यात्। अथ भूपयोगैः गमः मुनिभिः विजयदः प्रदिष्टः ॥४८॥

भा० टी०—यात्रा करनेवाले के जन्मसमय में अर्थात् जन्माङ्ग में जो राशि शभ ग्रह से युत हो वही यदि यात्रा-काल में लग्न हो, अथवा शत्रु की जन्मराशि वा जन्मलग्न से आठवीं राशि लग्न हो, अथवा[2] वेशिसंज्ञक राशि लग्न में हो तो यात्रा में विजय होती है। और राजयोग[3] में यात्रा करने से विजय होती है। ऐसा मुनियों ने कहा है ॥४८॥

दिशाओं के स्वामी—

सूर्यः सितो भूमिसुतोऽथ राहुः, शनिः शशी ज्ञश्च बृहस्पतिश्च ।
प्राच्यादितो दिक्षु विदिक्षु चाऽपि, दिशामधीशाः क्रमतः प्रदिष्टाः ॥४९॥
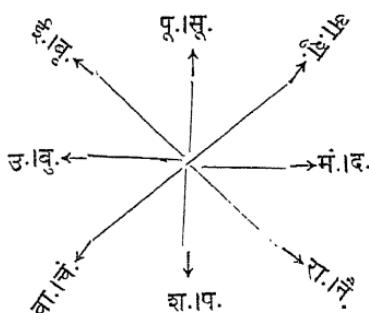
अन्वयः—अथ सूर्यः, सितः, भूमिसुतः, राहुः, शनिः, शशी, ज्ञः च बृहस्पतिः, क्रमतः प्राच्यादितः दिक्षु विदिक्षु च अपि दिशां अधीशाः प्रदिष्टाः ॥४९॥

१—३५ वें श्लोक के विशेष में देखो।

२—जन्म समय सूर्य राशि पर है उससे दूसरी राशि वेशि संज्ञक होती है।

३—जातक ग्रन्थों में कहे हुए राजयोगों में ।

भा० टी०—सूर्य, शुक्र, भौम, राहु, शनि, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति ये ग्रह क्रम से पूर्व आदि दिशा और विदिशाओं के स्वामी होते हैं ॥४९॥

दिशा के स्वामियों का प्रयोजन—

केन्द्रे दिगधीशे गच्छेदवनीशः ।
लालाटिनि तस्मिन्नेयादरिसेनाम् ॥ ५० ॥

अन्वयः—दिगधीशे केन्द्रे अवनीशः गच्छेत् । तस्मिन् लालाटिनि अरिसेनां न इयात् ॥५०॥

भा० टी०—यदि यात्राकालिक लग्न से केन्द्र में दिशा के स्वामी हों तो राजा यात्रा करे। यदि केन्द्र में दिशा के स्वामी के रहने से लालाटिक योग होता हो तो उसमें शत्रु सेना पर चढ़ाई न करे ॥५०॥
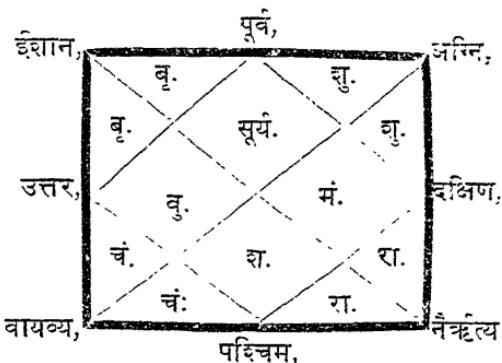
लालाटिक योग—

प्राच्यादौ तरणिस्तनौ भृगुसुतो लाभव्यये भूसुतः ,
कर्मस्थोऽथ तमो नवाष्टमगृहे सौरिस्तथा सप्तमे ।
चन्द्रः शत्रुगृहात्मजेऽपि च बुधः पातालगो गीष्पति- ,
वित्तभ्रातृगृहे विलग्नसदनाल्लालाटिकाः कीर्तिताः ॥५१॥

अन्वयः—अथ तरणिः तनौ, भृगुसुतः लाभव्यये, भूसुतः कर्मस्थः, तमः नवाष्टमगृहे, तथा सौरिः सप्तमे, चन्द्रः शत्रुगृहात्मजे, अपि च बुधः पातालगः, गीष्पतिः वित्तभ्रातृगृहे, विलग्नसदनात् प्राच्यादौ लालाटिकाः कीर्त्तिताः ॥५१॥

भा० टी०—लग्न में सूर्य हों तो पूर्व दिशा में, शुक्र एकादश वा बारहवें हो तो अग्निकोण में, मंगल दशम स्थान में हो तो दक्षिण दिशा में, राहु नवम और अष्टम स्थान में हो तो नैर्ऋत्यकोण में, शनि सातवें स्थान में हो तो पश्चिम दिशा में, चन्द्रमा छठे और पाँचवें स्थान में हो तो वायव्यकोण में, बुध चौथे स्थान में हो तो उत्तर दिशा में, गुरु दूसरे और तीसरे स्थान में हो तो ईशानकोण में लालाटिक योग करते हैं ॥५१॥

लालाटिक चक्र—

पर्युषित यात्रा के चार योग—

मृगे गत्वा शिवे स्थित्वाऽदितौ गच्छञ्जयेद्रिपून् ।
मैत्रे प्रस्थाय शाक्रे हि स्थित्वा मूले व्रजंस्तथा ॥ ५२ ॥
प्रस्थाय हस्तेऽनिलतक्षधिष्ण्ये स्थित्वा जयार्थी प्रवसेद् द्विदैवे ।
वस्वन्त्यपुष्ये निजसीम्नि चैकरात्रोषितः क्ष्मां लभतेऽवनीशः ॥५३॥

अन्वयः—मृगे गत्वा शिवे स्थित्वा अदितौ गच्छन् रिपून् जयेत् । तथा मैत्रे प्रस्थाय शाक्रे स्थित्वा हि मूले व्रजन् रिपून् जयेत् । हस्ते प्रस्थाय अनिलतक्षधिष्ण्ये स्थित्वा द्विदैवे जयार्थी अवनीशः प्रवसेत् । च वस्वन्त्यपुष्ये निजसीम्नि एकरात्रोषितः अवनीशः क्ष्मां लभते ॥५२-५३॥

भा० टी०—मृगशिरा नक्षत्र में घर से यात्रा करके कहीं आर्द्रा में ठहरकर पुनर्वसु में यात्रा करे तो शत्रु को जीतता है। अथवा अनुराधा में प्रस्थान करके ज्येष्ठा में ठहरकर मूल में यात्रा करे तो शत्रु को जीतता है। हस्त में प्रस्थान करके स्वाती और चित्रा विताकर विशाखा में विजय की इच्छा वाला राजा यात्रा करे। धनिष्ठा, रेवती, पुष्य में यात्रा करके अपनी सीमा में एक रात्रि रहकर यात्रा करनेवाला राजा भूमि को प्राप्त करता है ॥५२-५३॥

समय का बल—

उषःकालो विना पूर्वां गोधूलिः पश्चिमां विना ।
विनोत्तरां निशीथः सन् याने याम्यां विनाऽभिजित् ॥५४॥

अन्वयः—पूर्वां विना उषःकालः, पश्चिमां विना गोधूलिः, उत्तरां विना निशीथः, याम्यां विना अभिजित् याने सत् स्यात् ॥५४॥

भा० टी०—पूर्वदिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं में उषःकाल में, पश्चिम दिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं में गोधूलि में, उत्तर दिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं में अर्धरात्रि में, दक्षिण दिशा को छोड़कर अन्य दिशाओं में अभिजित् मुहूर्त में यात्रा करना शुभद होता है ॥५४॥

लग्न आदि १२ भावों की संज्ञा—

लग्नाद्भावाः क्रमाद्देह—१—कोश २—धानुष्क ३—वाहनम् ४—मन्त्रा ५—ऽरि ६-मार्ग७-आयुश्च८-हृद्९-व्यापारा१०-ऽऽगम११व्ययाः १२

अन्वयः—देह-कोश-धानुष्क-वाहनम्, मन्त्रः, अरिः, मार्गः-आयुः, च हृद्-व्यापारागमव्ययाः लग्नात् क्रमात् भावाः स्युः ॥५५॥

भा० टी०—देह १, कोश २, धानुष्क ३, वाहन ४, मन्त्र ५, अरि ६, मार्ग ७, आयु ८, हृदय ९, व्यापार १०, आगम ११, व्यय १२, ये लग्न से बारह भावों की संज्ञाएँ हैं ॥५५॥

यात्रा-लग्न से विशेष शुभाशुभ फल—

केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः शुभाः स्युर्याने पापास्त्र्यायषट्खेषु चन्द्रः ।
नेष्टो लग्नान्त्यारिरन्ध्रे शनिः खेऽस्ते शुक्रो लग्नेट् नगान्त्यारिरन्ध्रे ।५६।

अन्वयः—केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः, त्र्यायषट्खेषु पापाः याने शुभाः स्युः। चन्द्रः लग्नान्त्यारिरन्ध्रे नेष्टः स्यात्। खे शनिः नेष्टः, अस्ते शुक्रः नेष्टः, लग्नेट् नगान्त्यारिरन्ध्रे नेष्टः स्यात् ॥५६॥

भा० टी०—यात्रा-लग्न से केन्द्र और कोण में शुभ ग्रह और ३।११।६।१० इन स्थानों में पापग्रह यात्रा में शुभद होते हैं। चन्द्रमा १।१२।६।८ वें स्थान में अशुभ होता है। १०वें स्थान में शनि अशुभ होता है। ७ वें स्थान में शुक्र अशुभ होता है। लग्नेश (यात्रा-लग्न का स्वामी) ७।१२।६।८ वें स्थान में अशुभ होता है ॥५६॥

ब्राह्मणादि के हेतु योगादि का फल—

योगात्सिद्धिर्धरणिपतीनामृक्षगुणैरपि भूदेवानाम् ।
चौराणां शुभशकुनैरुक्ता भवति मुहूर्तादपि मनुजानाम् ॥५७॥

अन्वयः—धरणिपतीनां योगात्, भूदेवानां ऋक्षगुणैः, चौराणां शुभशकुनैः, मनुजानां मुहूर्तात् अपि सिद्धिः स्यात् ॥५७॥

भा० टी०—राजाओंको योग(राजयोग) से, ब्राह्मणों को नक्षत्र के गुण से, चोरों को शुभ शकुन से, अन्य मनुष्यों को मुहूर्त्त से यात्रा की सिद्धि होती है ॥५७॥

विजय योग—

सहजे रविर्दशमभे शशी तथा शनि-मङ्गलौ रिपुगृहे सितः सुते ।
हिबुके बुधो गुरुरपीह लग्नगः स जयत्यरीन् प्रचलितोऽचिरान्नृपः ॥५८॥

अन्वयः—सहजे रविः, दशमे शशी तथा शनिमङ्गलौ रिपुगृहे, सितः सुते, हिबुके बुधः, गुरुः अपि लग्नगः इह (योगे) यः नृपः प्रचलितः सः अचिरात् अरीन जयति ॥५८॥

भा० टी०—लग्न से ३रे स्थान में सूर्य, दशम स्थान में चन्द्रमा, तथा शनि मंगल छठे स्थान में,शुक्र ५वें स्थान में, ४थे स्थान में बुध और गुरु भी लग्न में हों तो ऐसे योग में यात्रा करनेवाला राजा थोड़े ही समय में शत्रुओं को जीत लेता है॥५८॥

भ्रातरि सौरिर्भूमिसुतो वैरिणि लग्ने देवगुरुः ।
आयगतोऽर्कः शत्रुजयश्चेदनुकूलो दैत्यगुरुः ॥ ५९ ॥

अन्वयः—भ्रातरि सौरिः , वैरिणि भूमिसुतः, लग्ने देवगुरुः, आयगतः अर्कः, चेत् दैत्यगुरुः अनुकूलः तदा शत्रून् जयति ॥५९॥

भा० टी०—३रे स्थान में शनि हो, छठे स्थान में भौम, लग्न में गुरु हों, ग्यारहवें सूर्य हों, यदि शुक्र अनुकूल हों तो शत्रुओं को जीतता है ॥५९॥

तनौ जीव इन्दुर्मृतौ वैरिगोऽर्कः ।
प्रयातो महीन्द्रो जयत्येव शत्रून् ॥ ६० ॥

अन्वयः—तनौ जीवः, मृतौ इन्दुः, वैरिगः अर्कः (एवं योगे) प्रयातः महीन्द्रः शत्रून् जयत्येव ॥६०॥

भा० टी०—लग्न में गुरु हों, अष्टम में चन्द्रमा हों, छठें स्थान में सूर्य हों तो यात्रा करनेवाला राजा शत्रुओं को जीतता ही है ॥६०॥

लग्नगतः स्याद् देवपुरोधाः ।
लाभधनस्थैः शेषनभोगैः ॥ ६१ ॥

अन्वयः—देवपुरोधाः लग्नगतः शेषनभोगैः लाभधनस्थैः शत्रून् जयति ॥६१॥

भा० टी०—गुरु लग्न में हों और शेष ग्रह ११।९ वें स्थान में हों तो यात्रा करनेवाला शत्रुओं को जीतता ही है ॥६१॥

द्यूने चन्द्रे समुदयगेऽर्के जीवे शुक्रे विदि धनसंस्थे ।
ईदृग्योगे चलति नरेशो जेता शत्रून् गरुड इवाहीन् ॥ ६२ ॥

अन्वयः—चन्द्रे द्यूने, समुदयगे अर्के, जीवे शुक्रे विदि धनसंस्थे, ईदृग्योगे नरेशः चलति (तदा) गरुडः अहीन् इव शत्रून् जेता ॥६२॥

भा० टी०—सप्तम स्थान में चन्द्रमा, लग्न में सूर्य, गुरु, शुक्र, बुध दूसरे स्थान में हों ऐसे योग में यात्रा करनेवाला इस प्रकार से शत्रुओं को जीतता है जैसे गरुड़ सर्प को जीतता है ॥६२॥

वित्तगतः शशिपुत्रो भ्रातरि वासरनाथः ।
लग्नगते भृगुपुत्रे स्युः शलभा इव सर्वे ॥ ६३ ॥

अन्वयः—शशिपुत्रः, वित्तगतः, भ्रातरि वासरनाथः, भृगुपुत्रे लग्नगते सर्वे शलभा इव भवन्ति ॥६३॥

भा० टी०—बुध दूसरे स्थान में हों, तीसरे सूर्य हों, और शुक्र लग्न में हों तो सभी शत्रु जैसे दीपक से फतिंगे नष्ट हो जाते हैं वैसे ही नष्ट हो जाते हैं॥६३॥

उदये रविर्यदि सौरिररिगः शशी दशमेऽपि ।
वसुधापतिर्यदि याति रिपुवाहिनी वशमेति ।। ६४ ।।

अन्वयः—यदि उदये रविः, सौरिः अरिगः अपि (तथा) शशी दशमे अत्र यदि वसुधापतिः याति तदा रिपुवाहिनी वशं एति ।।६४।।

भा० टी०—यदि लग्न में सूर्य हों, शनि छठे हों, चन्द्रमा दशम में हों ऐसे योग में यदि राजा यात्रा करे तो शत्रुसेना वश में हो जाती है ।।६४।।

तनौ शनिकुजौ रविर्दशमभे बुधो भृगुसुतोऽपि लाभदशमे ।
त्रिलाभरिपुभेषु भूसुतशनी गुरुज्ञभृगुजास्तथा बलयुताः ।। ६५ ।।

अन्वयः—तथा तनौ शनिकुजौ, दशमभे रविः, बुधः भृगुसुतोऽपि लाभदशमे, भसुतशनी त्रिलाभरिपुभेषु गुरुभृगुजाः वलयुताः तदा जयः स्यात् ।।६५।।

भा० टी०—लग्न में शनि, भौम हों; दशम में रवि हों, बुध या शुक्र एकादश या दशम हों, अथवा मंगल और शनि ३।११।६ स्थान में हों, बुध और शुक्र बली हों तो भी राजा की विजय होती है ।।६५।।

समुदयगे विबुधगुरौ मदनगते हिमकिरणे ।
हिबुकगतौ बुधभृगुजौ सहजगताः खलखचराः ।। ६६ ।।

अन्वयः—विबुधगुरौ समुदयगे, हिमकिरणे मदनगते, बुधभृगुजौ हिबुकगतौ, खलखचराः सहजगताः तदा जयः स्यात् ।।६६।।

भा० टी०—गुरु लग्न में हों, चन्द्रमा ७ वें हों, बुध, शुक्र चौथे स्थान में हों और पापग्रह तीसरे स्थान में हों तो भी राजा की विजय होती है ।।६६।।

त्रिदशगुरुस्तनुगो मदने हिमकिरणो रविरायगतः ।
सितशशिजावपि कर्मगतौ रविसुतभूमिसुतौ सहजे ।।६७।।

अन्वयः—त्रिदशगुरुः तनुगः, हिमकिरणः मदने, रविः आयगतः सितशशिजौ कर्मगतौ रविसुतभूमिसुतौ सहजे तदापि जयः स्यात् ।।६७।।

भा० टी०—गुरु लग्न में हों, चन्द्रमा सातवें हों, सूर्य एकादश में हों, शुक्र बुध दशम में हों, शनि मंगल तीसरे स्थान में हों तो भी विजय होती है ।।६७।।

देवगुरौ वा शशिनि तनुस्थे वासरनाथे रिपुभवनस्थे ।
पञ्चमगेहे हिमकरपुत्रः कर्मणि सौरिः सुहृदि सितश्च ।।६८।।

अन्वयः—देवगुरौ वा शशिनि तनुस्थे, रिपुभवनस्थे वासरनाथे हिमकरपुत्रः पञ्चमगेहे, कर्मणि सौरिः, च सितः सुहृदि तदापि जयः ।।६८।।

भा० टी०—गुरु वा चन्द्रमा लग्न में हों, छठे स्थान में सूर्य हों, बुध पाँचवें स्थान में हों, दशम स्थान में शनि हों और शुक्र चौथे में हों तो भी विजय होती है ।।६८।।

हिमकिरणसुतो बली चेत्तनौ त्रिदशपतिगुरुर्हि केन्द्रस्थितः ।
व्ययगृहसहजारिधर्मस्थितो यदि च भवति निर्बलश्चन्द्रमाः ।।६९।।

अन्वयः—चेत् बली हिमकिरणसुतः तनौ, त्रिदशपतिगुरुः केन्द्रस्थितः, च (पुनः) यदि निर्बलः चन्द्रमाः व्ययगृहसहजारिधर्मसंस्थितो भवति तदापि जयः स्यात् ॥६९॥

भा० टी०—यदि बलवान् बुध लग्न में हों, गुरु केन्द्र में हों और यदि निर्बल चन्द्रमा १२।३।६।९ वें स्थान में हो तो भी विजय होती है ॥६९॥

अशुभखगैरनवाष्टमदस्थैर्हिबुकसहोदरलाभगृहस्थः
कविरिह केन्द्रगगीष्पतिदृष्टो वसुचयलाभकरः खलु योगः ॥७०॥

अन्वयः—अशुभखगैः अनवाष्टमदस्थैः कविः हिबुकसहोदरलाभगृहस्थः केन्द्रगगीष्पतिदृष्टः इह खलु वसुचयलाभकरः योगः स्यात् ॥७०॥

भा० टी०—पापग्रह नवम अष्टम से भिन्न स्थान में हों, शुक्र ४।३।११ स्थान में हों और केन्द्र में बैठे हुए गुरु से देखे जाते हों तो यह योग धनसमूह का लाभ करानेवाला होता है ॥७०॥

रिपुलग्नकर्महिबुके शशिजे परिवीक्षिते शुभनभोगमनैः ।
व्ययलग्नमन्मथगृहेषु जयः परिवर्जितेष्वशुभनामधरैः ॥७१॥

अन्वयः—शशिजे रिपुलग्नकर्महिबुके, शुभनभोगमनैः परिवीक्षिते अशुभनामधरैः व्ययलग्नमन्मथगृहेषु परिवर्जितेषु जयः स्यात् ॥७१॥

भा० टी०—बुध ६।१।१०।४ इन स्थानों में हों, शुभ ग्रह देखते हों, और पापग्रह १२।१।७ वें को छोड़कर अन्य स्थानों में हों तो भी विजय होती है ॥७१॥

राज्यप्राप्ति योग—

लग्ने यदि जीवः पापा यदि लाभे
कर्मण्यपि वा चेद्राज्याधिगमः स्यात् ।
द्यूने बुध-शुक्रौ चन्द्रो हिबुके वा
तद्वत् फलमुक्तं सर्वैर्मुनिवर्यैः ॥७२॥

अन्वयः—यदि लग्ने जीवः पापाः यदि लाभे अपि वा कर्मणि चेत् तदा राज्याधिगमः स्यात्। वा बुध-शुक्रौ द्यूने चन्द्रः हिबुके तदा सर्वैः मुनिवर्यैः तद्वत् फलं उक्तम् ॥७२॥

भा० टी०—यदि लग्न में गुरु हों, पापग्रह ११ वें या १० वें हों तो राज्यप्राप्ति होती है। अथवा बुध शुक्र ७ वें हों, चन्द्रमा चौथे हों तो सभी मुनियों ने राज्यप्राप्ति का योग कहा है ॥७२॥

रिपुतनुनिधने शुक्रजीवेन्दवो ह्यथ बुध-भृगुजौ तुर्यगेहस्थितौ ।
मदनभवनगश्चन्द्रमा वाऽम्बुगः शशिसुतभृगुजान्तर्गतश्चन्द्रमाः ॥७३॥

अन्वयः—शुक्रजीवेन्दवः रिपुतनुनिधने, अथवा बुधभृगुजौ तुर्यगेहस्थितौ चन्द्रमा मदनभवनगः, अथवा अम्बुगः चन्द्रमा शशिसुतभृगुजान्तर्गतः तदा जयः स्यात ॥७३॥

भा० टी०—यदि शुक्र, गुरु, चन्द्रमा ये लग्न से छठे, लाभ और आठवें स्थान में हों (१), अथवा बुध और शुक्र चौथे स्थान में हों और चन्द्रमा सप्तम स्थान में हो (२), अथवा चन्द्रमा चौथे स्थान में बुध और शुक्र के मध्य में हो (३), इन तीनों योगों में राजा की विजय होती है ॥७३॥

सितजीवभौमबुधभानुतनूजास्तनुमन्मथारिहिबुकत्रिगृहे चेत् ।
क्रमतोऽरिसोदरखशात्रवहोराहिबुकायगैर्गुरुदिनेऽखिलखेटैः ॥७४॥

अन्वयः—चेत् सितजीवभौमबुधभानुतनूजाः क्रमतः तनुमन्मथारिहिबुकत्रिगृहे स्थिताः, वा गुरुदिने अखिलखेटैः क्रमतः अरिसोदरखशात्रवहोराहिबुकायगैः तदापि जयः स्यात् ॥७४॥

भा० टी०—यदि शुक्र, गुरु, भौम, बुध और शनि क्रम से लग्न, सप्तम, छठे, चौथे और तीसरे स्थान में हों, अथवा गुरु का दिन हो और सभी ग्रह क्रम से अर्थात् सूर्य छठे, चन्द्रमा तीसरे, भौम दसवें, बुध छठे, गुरु लग्न में, शुक्र चतुर्थ में और शनि एकादश हों तो भी विजय होती है ॥७४॥

सहजे कुजो निधनगश्च भार्गवो मदने बुधो रविररौ तनौ गुरुः ।
अथ चेत्स्युरिज्यसितभानवो जलत्रिगता हि सौरिरुधिरौ रिपुस्थितौ ॥७५॥

अन्वयः—कुजः सहजे, च (पुनः) निधनगः भार्गवः बुधः मदने, रविः अरौ, तनौ गुरुः तदा जयः स्यात् । अथ चेत् इज्यसितभानवः जलत्रिगताः, सौरिरुधिरौ रिपुस्थितौ तदा हि जयः स्यात् ॥७५॥

भा० टी०—भौम तीसरे स्थान में, आठवें स्थान में शुक्र, बुध सातवें स्थान में, सूर्य छठे स्थान में और लग्न में गुरु हों तो विजय होती है । अथवा गुरु, शुक्र और सूर्य चौथे और तीसरे स्थान में हों, शनि भौम छठे स्थान में हों तो विजय होती है ॥७५॥

योग—अधियोग—योगाधियोग—

एको ज्ञेज्यसितेषु पञ्चमतपःकेन्द्रेषु योगस्तथा
द्वौ चेत्तेष्वधियोग एषु सकला योगाधियोगः स्मृतः ।
योगे क्षेममथाधियोगगमने क्षेमं रिपूणां वधं
चाथो क्षेमयशोऽवनीश्च लभते योगाधियोगे व्रजन् ॥७६॥

अन्वयः—ज्ञेज्यसितेषु एकः पञ्चमतपःकेन्द्रेषु योगः । तथा चेत् तेषु द्वौ (तदा) अधियोगः । एषु सकलाः (तदा) योगाधियोगः स्मृतः । अथ योगे क्षेमं, अथ अधियोगगमने क्षेमं, रिपूणां वधं च लभते । अथ योगाधियोगे व्रजन् क्षेमयशो-ऽवनीश्च लभते ॥७६॥

भा० टी०—बुध, गुरु, शुक्र इनमें एक भी यदि ५।९ और केन्द्र में हो तो योग होता है । इनमें कोई दो उक्त स्थानों में ों तो अधियोग होता है । यदि ये तीनों

ग्रह उक्त स्थानों में हों तो योगाधियोग होता है। योग में यात्रा करने से कुशल, अधियोग में यात्रा करने से कुशल और शत्रुओं का वध तथा योगाधियोग में यात्रा करने से कुशल, यश और पृथ्वी का लाभ होता है ।।७६।।

विजयादशमी—

इषमासि सिता दशमी विजया, शुभकर्मसु सिद्धिकरी कथिता ।
श्रवणर्क्षयुता सुतरां शुभदा, नृपतेस्तु गमे जयसन्धिकरी ।।७७।।

अन्वयः—इषमासि सिता (दशमी) विजयादशमी शुभकर्मसु सिद्धिकरी गदिता । सा चेत् श्रवणर्क्षयुता नितरां शुभदा, नृपतेः गमे तु जयसन्धिकरी भवति ।।७७।।

भा० टी०—आश्विन मास के शुक्लपक्ष की दशमी को विजयादशमी कहते हैं। वह सभी शुभ कर्मों को सिद्ध करनेवाली होती है। यदि वह श्रवण नक्षत्र से युत हो तो अत्यंत शुभद होती है। उस दिन यात्रा करने से राजा की विजय और सन्धि होती है ।।७७।।

यात्रा में चित्तशुद्धि और शकुनादि का विचार—

चेतोनिमित्तशकुनैः खलु सुप्रशस्तै-
र्ज्ञात्वा विलग्नबलमुर्व्यधिपः प्रयाति ।
सिद्धिर्भवेदथ पुनः शकुनादितोऽपि
चेतोविशुद्धिरधिका न च तां विनेयात् ।।७८।।

अन्वयः—यदि सुप्रशस्तैः चेतोनिमित्तशकुनैः विलग्नबलं ज्ञात्वा उर्व्यधिपः प्रयाति तदा खलु सिद्धिः भवेत्। अथ शकुनादितोऽपि चेतोविशुद्धिः अधिका तां विना च न इयात् ।।७७।।

भा० टी०—यदि श्रेष्ठ चित्त प्रसन्न करनेवाले शकुन हों अर्थात् चित्त प्रसन्न हो तो केवल शुद्ध लग्न का विचार कर राजा यात्रा करे तो कार्य की सिद्धि होती है। शकुनादि से चित्त की शुद्धि अधिक बलवान् होती है। बिना चित्तशुद्धि के यात्रा न करे ।।७८।।

यात्रा में आवश्यक निषेध—

व्रतबन्धन-देवताप्रतिष्ठा-करपीडोत्सव-सूतकासमाप्तौ ।
न कदापि चलेदकालविद्युद्घनवर्षातुहिनेऽपि सप्तरात्रम् ।।७९।।

अन्वयः—व्रतबन्धन-देवताप्रतिष्ठा-करपीडोत्सव-सूतकासमाप्तौ कदापि न चलेत्। अकालविद्युत्घनवर्षातुहिने अपि सप्तरात्रं न चलेत् ।।७९।।

भा० टी०—यदि अपने घर में यज्ञोपवीत, देव-प्रतिष्ठा, विवाह कोई उत्सव का दिन, कोई सूतक (जननाशौच या मरणाशौच) हो तो बिना उसकी समाप्ति के यात्रा न करे। बिना समय के बिजली चमके, पानी बरसे और पाला पड़े तो सात रात्रि पर्यन्त कदापि यात्रा न करे ।।७९।।

एक ही दिन में यात्रा और प्रवेश में विशेष——

महीपतेरेकदिने पुरात्पुरे यदा भवेतां गमनप्रवेशकौ ।
भवारशूलप्रतिशुक्रयोगिनीर्विचारयेन्नैव कदापि पण्डितः ॥८०॥

अन्वयः——यदा महीपतेः एकदिने पुरात् पुरे गमनप्रवेशकौ भवेतां तदा भवारशूलप्रतिशुक्रयोगिनीः पण्डितः कदापि नैव विचारयेत् ॥८०॥

भा० टी०—यदि राजा का एक ही दिन में यात्रा और अन्यत्र प्रवेश होता हो तो नक्षत्र, वारशूल, सम्मुख शुक्र, योगिनी का विचार पंडित को न करना चाहिये ॥८०॥

एक ही दिन में यात्रा और प्रवेश में मुहूर्त्त का विचार——

यद्येकस्मिन् दिवसे महीपतेर्निर्गमप्रवेशौ स्तः ।
तर्हि विचार्यः सुधिया प्रवेशकालो न यात्रिकस्तत्र ॥८१॥

अन्वयः——यदि महीपतेः एकस्मिन् दिवसे निर्गमप्रवेशौ स्तः, तर्हि तत्र सुधिया प्रवेशकालः विचार्यः, यात्रिकः न विचार्यः ॥८१॥

भा० टी०——यदि राजा का एक ही दिन में यात्रा और प्रवेश हो जाय तो वहाँ पंडित को प्रवेशकाल का विचार करना चाहिये, यात्रा का विचार नहीं करना चाहिये ॥८१॥

यात्रा में त्रिनवमी दोष——

प्रवेशान्निर्गमं तस्मात् प्रवेशं नवमे तिथौ ।
नक्षत्रे च तथा वारे नैव कुर्यात् कदाचन ॥ ८२ ॥

अन्वयः——प्रवेशान्निर्गमं तस्मात् नवमे तिथौ, नवमे नक्षत्रे तथा च नवमे वारे प्रवेशं कदाचन नैव कुर्यात् ॥८२॥

भा० टी०——प्रवेश करके यात्रा करना, फिर यात्रा से नवीं तिथि, नवें नक्षत्र और नवें वार में प्रवेश कभी भी नहीं करना चाहिये ॥८२॥

यात्रा-विधि——

अग्निं हुत्वा देवतां पूजयित्वा नत्वा विप्रानर्चयित्वा दिगीशम् ।
दत्वा दानं ब्राह्मणेभ्यो दिगीशं ध्यात्वा चित्ते भूमिपालोऽधिगच्छेत् ॥८३॥

अन्वयः——अग्निं हुत्वा, देवतां पूजयित्वा, विप्रान् नत्वा, दिगीशं अर्चयित्वा, ब्राह्मणेभ्यो दानं दत्वा, दिगीशं चित्ते ध्यात्वा, भूमिपालः अधिगच्छेत् ॥८३॥

भा० टी०——अग्नि में हवन करके, देवता का पूजन करके, ब्राह्मणों को नमस्कार करके, दिशा के स्वामी का पूजन करके, ब्राह्मणों को दान देकर और दिशा के स्वामी का चित्त में ध्यान करते हुए राजा यात्रा करे ॥८३॥

नक्षत्रदोहद——

कुल्माषांस्तिलतण्डुलानपि तथा माषांश्च गव्यं दधि
त्वाज्यं दुग्धमथैणमांसमपरं तस्यैव रक्तं तथा ।

तद्वत्पायसमेव चाषपललं मार्गं च शाशं तथा
षाष्टिक्यं च प्रियंग्वपूपमथवा चित्राण्डजान् सत्फलम् ॥८४॥
कौर्मं सारिकगौधिकं च पललं शाल्यं हविष्यं हया-
धृक्षे स्यात् कृसरान्नमुद्गमपि वा पिष्टं यवानां तथा ।
मत्स्यान्नं खलु चित्रितान्नमथवा दध्यन्नमेवं क्रमा-
द्भक्ष्याऽभक्ष्यमिदं विचार्य मतिमान् भक्षेत्तथाऽऽलोकयेत् ॥८५॥

अन्वयः—हयाद्यृक्षे क्रमात् कुल्मापान्, तिलतण्डुलान्, तथा मापान्, गव्यं दधि, दुग्धं अथ एणमांसं अपरं तस्यैव रक्तं तथा तद्वत् पायसं एव चाषपललं मार्गं च शाशं तथा पाष्टिक्यं, प्रियंग्वपूपं, अथ चित्राण्डजान्, सत्फलं, कौर्मं सारिकगौधिकं च पललं, शाल्यं, हविष्यं, कृसरान्नमुद्गं, अपि यवानां पिष्टं, तथा मत्स्यान्नं, चित्रितान्नं, दध्यन्नं एवं भक्ष्याभक्ष्यं विचार्य मतिमान् भक्षेत् तथा आलोकयेत् ॥८४-८५॥

भा० टी०—अश्विनी से क्रम से अर्थात् अश्विनी में उड़द, भरणी में तिल-चावल, कृत्तिका में उड़द, रोहिणी में गौ का दधि, मृगशिरा में गौ का घी, आर्द्रा में गौ का दूध, पुनर्वसु में हरिण का मांस, पुष्य में हरिण का रक्त, श्लेषा में दूध की खीर, मघा में चाष (पपीहा) का मांस, पूर्वाफाल्गुनी में मृग का मांस, उत्तरा फाल्गुनी में खरगोश का मांस, हस्त में साठी का चावल, चित्रा में मालकाँगनी, स्वाती में पूआ (मालपूआ), विशाखा में अनेक वर्ण के पक्षी, अनुराधा में उत्तम फल, ज्येष्ठा में कछुये का मांस, मूल में सारिक पक्षी का मांस, पूर्वाषाढ़ा में गोह का मांस, उत्तराषाढ़ा में साही का मांस, अभिजित् में मूंग, श्रवण में खिचड़ी, धनिष्ठा में मूँग भात, शतभिषा में यव (जौ) की पीठी, पूर्वाभाद्रपदा में मछली-भात, उत्तराभाद्रपदा में खिचड़ी और रेवती में दही-भात, यदि नक्षत्र अनिष्टद हो तो उस नक्षत्र के पदार्थ को अपने देश-कुल के अनुसार भक्ष्याभक्ष्य का विचार कर यात्रा के समय भोजन कर अथवा देखकर बुद्धिमान् यात्रा करें तो नक्षत्र का दोष नहीं होता है ॥८४-८५॥

दिशा का दोहद—

आज्यं तिलौदनं मत्स्यं पयश्चापि यथाक्रमम् ।
भक्षयेद्दोहदं दिश्यमाशां पूर्वादिकां व्रजेत् ॥ ८६ ॥

अन्वयः—आज्यं, तिलौदनं, मत्स्यं, अपि च पयः यथाक्रमं दिश्यं दोहदं भक्षयेत् ततः पूर्वादिकां आशां व्रजेत् ॥८६॥

भा० टी०—पूर्व दिशा में घी, दक्षिण दिशा में तिल-भात, पश्चिम दिशा में मछली और उत्तर दिशा में दूध, इन दिशा के दोहदों को खाकर तब उस दिशा में यात्रा करे ॥८६॥

वार-दोहद—

रसालां पायसं काञ्जीं शृतं दुग्धं तथा दधि ।
पयोऽशृतं तिलान्नं च भक्षयेद्वारदोहदम् ॥ ८७ ॥

अन्वयः—रसालां, पायसं, काञ्जीं, श्रृतं दुग्धं तथा दधि, अश्रृतं पयः, तिलान्नं च यथाक्रमं वारदोहदं भक्षयेत् ॥८७॥

भा० टी०—रविवार को रसाला (शिखरन), सोमवार को खीर, भौमवार को मठा, बुधवार को पका हुआ दूध, गुरुवार को दधि, शनिवार को तिल-भात खाकर यात्रा करने से वार-दोष नहीं होता है ॥८७॥

तिथि-दोहद—

पक्षादितोऽर्कदलतण्डुलवारिसर्पिः
श्राणा हविष्यमपि हेमजलं त्वपूपम् ।
भुक्त्वा व्रजेद्रुचकमम्बु च धेनुमूत्रं
यावान्नपायसगुडानसृगन्नमुद्गान् ॥ ८८ ॥

अन्वयः—पक्षादितः अर्कदलतण्डुलवारिसर्पिः, श्राणा, हविष्यं, हेमजलं, अपूपं, रुचकं अम्बु च धेनुमूत्रं, यावान्नापयसगुडान्, असृगन्नमुद्गान् भुक्त्वा व्रजेत् ॥८८॥

भा० टी०—पक्षादि तिथि से अर्थात् प्रतिपदा को मदार का पत्ता, द्वितीया को चावल का पानी, तृतीया को घी, चतुर्थी को इमली, पंचमी को मूँग, षष्ठी को सुवर्णजल, सप्तमी को पूआ, अष्टमी को बिजौरा नीबू, नवमी को जल, दशमी को गोमूत्र, एकादशी को यव, द्वादशी को खीर, त्रयोदशी को गुड़, चतुर्दशी को रुधिर (रक्त), पञ्चदशी को मूँगभात, इन पदार्थों का उक्त तिथियों में भोजन कर यात्रा करने से तिथि का दोष नहीं होता है ॥८८॥

यात्रा-समय की विधि—

उद्धृत्य प्रथमत एव दक्षिणाङ्घ्रिं द्वात्रिंशत्पदमधिगत्य दिश्ययानम् ।
आरोहेत्तिलघृतहेमताम्रपात्रं दत्त्वाऽऽदौ गणकवराय च प्रगच्छेत् ॥८९॥

अन्वयः—प्रथमतः दक्षिणांघ्रि एव उद्धृत्य द्वात्रिंशत्पदं अधिगत्य दिश्ययानं आरोहेत् । तथा च आदौ गणकवराय तिलघृतहेमताम्रपात्रं दत्वा प्रगच्छेत् ॥८९॥

भा० टी०—पहले दाहिने पैर को उठाकर ३२ पैर (कदम) चलकर अभीष्ट दिशा की सवारी पर चढ़े तथा पहले श्रेष्ठ दैवज्ञ को तिल, घी, सुवर्ण और ताम्रपात्र देकर यात्रा करे ॥८९॥

प्रत्येक दिशा के वाहन—

प्राच्यां गच्छेद् गजेनैव दक्षिणस्यां रथेन हि ।
दिशि प्रतीच्यामश्वेन तथोदीच्यां नरैर्नृपः ॥ ९० ॥

अन्वयः—नृपः प्राच्यां दिशि गजेनैव, दक्षिणस्यां हि रथेन, प्रतीच्यां दिशि अश्वेन तथा उदीच्यां नरैः गच्छेत् ॥९०॥

भा० टी०—राजा पूर्व दिशा में हाथी से, दक्षिण दिशा में रथ से, पश्चिम दिशा में घोड़े से और उत्तर दिशा में मनुष्य (पालकी) से यात्रा करे । यदि इनका अभाव हो तो इनका स्मरण करता हुआ यात्रा करे ॥९०॥

यात्रा के स्थान—

देवगृहाद्वा गुरुसदनाद्वा स्वगृहान्मुख्यकलत्रगृहाद्वा ।
प्राश्य हविष्यं विप्रानुमतः पश्यन् शृण्वन् मङ्गलमेयात् ॥ ९१ ॥

अन्वयः—देवगृहात्, वा गुरुसदनात्, वा स्वगृहात् वा मुख्यकलत्रगृहात् , विप्रानुमतः नृपः हविष्यं प्राश्य मङ्गलं पश्यन् शृण्वन् एयात् ॥९१॥

भा० टी०—देवता के गृह (मन्दिर) से, गुरु के गृह से, अपने गृह से, मुख्य स्त्री के गृह से ब्राह्मणों की आज्ञा से राजा हविष्य को खाकर मङ्गल को देखता और सुनता हुआ यात्रा करे ॥९१॥

यात्रा में विलम्ब होने से प्रस्थान के योग्य वस्तु—

कार्याद्यैरिह गमनस्य चेद्विलम्बो भूदेवादिभिरुपवीतमायुधं च ।
क्षौद्रं चामलफलमाशु चालनीयं सर्वेषां भवति यदेव हृत्प्रियं वा ॥९२॥

अन्वयः—इह कार्याद्यैः चेत् गमनस्य विलम्बः तदा भूदेवादिभिः क्रमात् उपवीतं आयुधं च तथा क्षौद्रं, आमलफलञ्च आशु चालनीयम्। वा सर्वेषां यदेव हृत्प्रियं भवति तदेव चालनीयम् ॥९२॥

भा० टी०—यदि कार्यवश यात्रा करने में विलम्ब हो तो ब्राह्मणादि वर्ण क्रम से यज्ञोपवीत, शस्त्र, मधु और आँवला का प्रस्थान रख दे (अर्थात् ब्राह्मण यज्ञोपवीत, क्षत्रिय शस्त्र, वैश्य मधु, शूद्र आँवला)। अथवा सभी को जो हृदय से प्रिय वस्तु हो उसी का प्रस्थान करे ॥९२॥

प्रस्थान का परिमाण—

गेहाद्गेहान्तरमपि गमस्तर्हि यात्रेति गर्गः
सीम्नः सीमान्तरमपि भृगुर्बाणविक्षेपमात्रम् ।
प्रस्थानं स्यादिति कथयतेऽथो भरद्वाज एवं
यात्रा कार्या वहिरिह पुरात् स्याद्वसिष्ठो ब्रवीति॥९३॥

अन्वयः—गेहात् गेहान्तरं अपि गमः तर्हि यात्रा इति गर्गः, तथा सीम्नः सीमान्तरं अपि गमः इति भृगुः, अथो बाणविक्षेपमात्रं एवं भरद्वाजः कथयते। इह पुरात् बहिः यात्रा कार्या इति वसिष्ठः ब्रवीति ॥९३॥

भा० टी०—एक घर से दूसरे घर में जाने को यात्रा गर्ग मुनि कहते हैं। तथा एक सीमा से दूसरी सीमा तक जाने को भृगु ऋषि यात्रा कहते हैं। भरद्वाज मुनि के मत से बाण फेंकने से जहाँ तक जाय उतनी दूर जाने को यात्रा कहते हैं। वसिष्ठ के मत से पुर (ग्राम) से बाहर हो जाने को यात्रा (प्रस्थान) कहते हैं ॥९३॥

प्रस्थान में विशेष—

प्रस्थानमत्र धनुषां हि शतानि पञ्च
केचिच्छतद्वयमुशन्ति दशैव चाऽन्ये ।

सम्प्रस्थितो य इह मन्दिरतः प्रयातो
गन्तव्यदिक्षु तदपि प्रयतेन कार्यम् ॥ ९४ ॥

अन्वयः—अत्र केचित् धनुषां पञ्चशतानि प्रस्थानं उशन्ति, केचित् शतद्वयं, अन्ये च दशैव यावत् प्रस्थानं उशन्ति। इह यः सम्प्रस्थितः स मन्दिरतः गन्तव्यदिक्षु प्रयातो भवेत्, तदपि प्रयतेन कार्यम् ॥९४॥

भा० टी०—यहाँ पर कोई आचार्य पाँच सौ धनुप (दो हजार हाथ) की दूरी पर प्रस्थान करने को कहते हैं। कोई दो सौ धनुप, कोई दस धनुप कहते हैं। जिस दिशा की यात्रा करनी हो नियम मे उसी दिशा में प्रस्थान को करे ॥९४॥

प्रस्थान के बाद स्थिति और मैथुननिषेध—

प्रस्थाने भूमिपालो दशदिवसमभिव्याप्य नैकत्र तिष्ठेत्
सामन्तः सप्तरात्रं तदितरमनुजः पञ्चरात्रं तथैव ।
ऊर्ध्वं गच्छेच्छुभाहेऽप्यथ गमनदिनात् सप्तरात्राणि पूर्वं
चाऽशक्तौ तद्दिनेऽसौ रिपुविजयमना मैथुनं नैव कुर्यात् ॥ ९५ ॥

अन्वयः—प्रस्थाने भूमिपालः दशदिवसं अभिव्याप्य एकत्र न तिष्ठेत्। सामन्तः सप्तरात्रं, तथैव तदितरमनुजः पञ्चरात्रं अभिव्याप्य एकत्र न तिष्ठेत्। ऊर्ध्वं शुभाहे गच्छेत्। अथ रिपुविजयमनाः असौ (राजा) गमनदिनात् पूर्वं सप्तरात्राणि मैथुनं न कुर्यात्। च अशक्तौ तद्दिनेऽपि मैथुनं नैव कुर्यात् ॥९५॥

भा० टी०—राजा प्रस्थान के बाद १० दिन तक उस स्थान में न रहे। सामन्त (मांडलिक राजा) सात रात्रि, इतर मनुष्य ५ रात्रि पर्यन्त न रहे। यदि इससे अधिक हो जाय तो शुभ दिन में यात्रा करे। शत्रु को जीतने की इच्छावाला यात्रा करने से सात रात्रि पहले मैथुन न करे, यदि अशक्त हो तो यात्रा के दिन मैथुन न करे ॥९५॥

यात्रा में त्याज्य वस्तु—

दुग्धं त्याज्यं पूर्वमेव त्रिरात्रं क्षौरं त्याज्यं पञ्चरात्रं च पूर्वम् ।
क्षौद्रं तैलं वासरेऽस्मिन्वमिश्च त्याज्यं यत्नाद्भूमिपालेन नूनम् ॥९६॥

अन्वयः—(यात्रादिनात्) पूर्वमेव त्रिरात्रं दुग्धं त्याज्यं, पञ्चरात्रं पूर्वं क्षौरं, च (पुनः) अस्मिन् वासरे क्षौद्रं, तैलं, वमिश्च भूमिपालेन यत्नात् नूनं त्याज्यम् ॥९६॥

भा० टी०—यात्रा करने के दिन से तीन रात पहले दूध त्याग देना चाहिये, पाँच रात पहिले हजामत बनाना, जिस दिन यात्रा करनी हो उस दिन मधु, तेल और वमन (कै) करना राजा यत्नपूर्वक निश्चय करके त्याग दे ॥९६॥

यात्रा में विशेष त्याज्य पदार्थ—

भुक्त्वा गच्छति यदि चेत्तैलगुडक्षारपक्वमांसानि ।
विनिवर्तते स रुग्णः स्त्रीद्विजमवमान्य गच्छतो मरणम ॥९७॥

अन्वयः—यदि चेत् तैलगुडक्षारपक्वमांसानि भुक्त्वा गच्छति तदा स रुग्णः विनिवर्तते। तथा स्त्रीद्विजमवमान्य गच्छतः मरणं भवेत् ॥९७॥

भा० टी०—यदि तैल, गुड़, पका हुआ मांस भोजन कर यात्रा करे तो वह रोगी होकर लौटता है और स्त्री तथा ब्राह्मण का अपमान कर यात्रा करे तो उसका मरण होता है ॥९७॥

अकालवृष्टि का दोष और लक्षण—

यदि मास्सु चतुर्षु पौषमासादिषु वृष्टिर्हि भवेदकालवृष्टिः।
पशुमर्त्यपदाङ्किता न यावद्वसुधा स्यान्न हि तावदत्र दोषः ॥९८॥

अन्वयः—यदि पौषमासादिषु चतुर्षु मास्सु वृष्टिः भवेत्, तदा असौ अकालवृष्टिः ज्ञेया, अत्र पशुमर्त्यपदाङ्किता वसुधा यावत् न स्यात् तावत् दोषः न हि भवेत् ॥९८॥

भा० टी०—यदि पौषादि चार महीनों (पौष, माघ, फाल्गुन, चैत्र) में वृष्टि हो तो उसे अकालवृष्टि कहते हैं। पृथ्वी जब तक पशुओं और मनुष्यों के पद-चिह्नों से अंकित न हो तब तक दोष नहीं होता ॥९८॥

दोष का परिहार—

अल्पायां वृष्टौ दोषोऽल्पो भूयस्यां दोषो भूयान्
जीमूतानां निर्घोषे वृष्टौ वा जातायां भूपः।
सूर्येन्द्वोर्बिम्बे सौवर्णे कृत्वा विप्रेभ्यो दद्याद्
दुःशाकुन्ये साज्यं स्वर्णं दत्वा गच्छेत् स्वेच्छाभिः ॥ ९९ ॥

अन्वयः—अल्पायां वृष्टौ अल्पः दोषः, भूयस्यां भूयान् दोषः, जीमूतानां निर्घोषे वा वृष्टौ जातायां भूपः सूर्येन्द्वोः सौवर्णे बिम्बे कृत्वा विप्रेभ्यः दद्यात्। दुःशाकुन्ये साज्यं स्वर्ण दत्वा स्वेच्छाभिः गच्छेत् ॥९९॥

भा० टी०—अल्प वृष्टि में अल्प दोष तथा अधिक वर्षा में अधिक दोष होता है। यदि मेघ गरजे अथवा वृष्टि हो जाय तो रवि-चन्द्रमा का सुवर्ण का बिम्ब बनाकर दान देकर यात्रा करे। दुःशकुन होने पर घी और सुवर्ण दान देकर अपनी इच्छा के अनुसार यात्रा करे ॥९९॥

यात्रा में शुभ शकुन—

विप्राश्वेभफलान्नदुग्धदधिगोसिद्धार्थपद्माम्बरं
वेश्यावाद्यमयूरचाषनकुला बद्धैकपश्वामिषम्।
सद्वाक्यं कुसुमेक्षुपूर्णकलशच्छत्राणि मृत्कन्यका
रत्नोष्णीषसितोक्षमद्यससुतस्त्रीदीप्तवैश्वानराः ॥१००॥
आदर्शाञ्जनधौतवस्त्ररजका मीनाज्यसिंहासनं
शावं रोदनवर्जितं ध्वजमधुच्छागास्त्रगोरोचनम्।

भारद्वाजनृयानवेदनिनदा माङ्गल्यगीतांकुशा
दृष्टाः सत्फलदाः प्रयाणसमये रिक्तो घटः स्वानुगः ॥१०१॥

अन्वयः—विप्राश्वेभफलान्नदुग्धदधिगोसिद्धार्थपद्माम्बरं, वेश्यावाद्यमयूरचापनकुलाः, बद्धैकपश्वामिषं, सद्वाक्यम्, कुसुमेक्षुपूर्णकलशच्छत्राणि, मृत्कन्यका, रत्नोष्णीषसितोक्षमद्यससुतस्त्रीदीप्तवैश्वानराः आदर्शाञ्जनधौतवस्त्ररजकाः, मीनाज्यसिंहासनम्, रोदनवर्जितं शावं, ध्वजमधुच्छागास्त्रगोरोचनम्, भारद्वाजनृयानवेदनिनदाः, माङ्गल्यगीतांकुशाः, प्रयाणसमये दृष्टाः सत्फलदाः भवन्ति। तथा रिक्तो घटः स्वानुगः शुभः स्यात् ॥१००-१०१॥

भा० टी०—यात्रा के समय ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, गौ, सरसों, कमल, वस्त्र, वेश्या, बाजा, मयूर, पपीहा, नेवला, बँधा हुआ एक पशु, मांस, शुभ वचन, पुष्प, ऊख, पूर्णकलश, छत्र, मिट्टी, कन्या, रत्न, पगड़ी, सफेद बैल, मदिरा, पुत्र के साथ स्त्री, जलती हुई अग्नि शुभ होती है। तथा दर्पण, अञ्जन, धोया हुआ वस्त्र, धोबी, मछली, घी, सिंहासन, रोदन-वर्जित मुर्दा, पताका, शहद, बकरा, अस्त्र, गोरोचन, भरद्वाज पक्षी, पालकी, वेदध्वनि, गायन, अंकुश ये पदार्थ यात्रा के समय सामने दिखाई दें तो शुभद होते हैं, और पीछे खाली घड़ा आता हो तो शुभ होता है ॥१००-१०१॥

अशुभ-सूचक शकुन—

वन्ध्या चर्म तुषास्थि सर्पलवणाङ्गारेन्धनक्लीबविट्
तैलोन्मत्तवसौषधारिजटिलप्रव्राट्तृणव्याधिताः ।
नग्नाभ्यक्तविमुक्तकेशपतिता व्यङ्गक्षुधार्ता असृक्
स्त्रीपुष्पं सरठः स्वगेहदहनं मार्जारयुद्धं क्षुतम् ॥१०२॥
काषायी गुडतक्रपङ्कविधवाकुब्जाः कुटुम्बे कलि-
र्वस्त्रादेः स्खलनं लुलायसमरं कृष्णानि धान्यानि च ।
कार्पासं वमनं च गर्दभरवो दक्षेऽतिरुट् गर्भिणी
मुण्डार्द्राम्बरदुर्वचोऽन्धबधिरोदक्यो न दृष्टाः शुभाः ॥१०३॥

अन्वयः—वन्ध्या, चर्म, तुषास्थि, सर्पलवणाङ्गारेन्धनक्लीबविट् तैलोन्मत्तवसौषधारिजटिलप्रव्राट्तृणव्याधिताः, नग्नाभ्यक्तविमुक्तकेशपतिताः, व्यङ्गक्षुधार्ता, असृक्, स्त्रीपुष्पं, सरठः, स्वगेहदहनं, मार्जारयुद्धं, क्षुतम्, काषायी, गुडतक्रपङ्कविधवाकुब्जाः कुटुम्बे कलिः, वस्त्रादेः स्खलनं, लुलायसमरं, च (पुनः) कृष्णानि धान्यानि, कार्पासं, वमनं, पुनः गर्दभरवः दक्षे, अतिरुट्, गर्भिणी, मुण्डार्द्राम्बर दुर्वचोऽन्धबधिरोदक्यः, प्रयाणसमये दृष्टाः न शुभाः भवन्ति ॥१०२-१०३॥

भा० टी०—वन्ध्या, चर्म, भूसी, हड्डी, सर्प, नमक, अङ्गार, इन्धन, नपुंसक, विष्ठा, तैल, उन्मत्त, चर्बी, औषधि, शत्रु, जटाधारी, संन्यासी, तृण, रोगी, नग्न,

उबटन लगाये हुए, खुले केशवाला मनुष्य, जातिहीन, अङ्गहीन पुरुष, मूला, रुधिर, रजस्वला स्त्री, गिरगिट, अपने घर का जलना, बिल्लार का युद्ध, छींक, गेरुआ वस्त्र पहिने हुए, गुड़, मट्ठा, कीचड़, विधवा स्त्री, कुबड़ा, कुटुम्ब में झगड़ा का होना, वस्त्र आदि का गिरना, भैंसों की लड़ाई, काला धान्य, रुई, वमन, दाहिने हाथ की तरफ गधे का शब्द, अधिक क्रोध, गर्भिणी, माथा मुड़ाया हुआ, भींगे वस्त्र वाला, दुष्ट वचन, अन्धा, बहिरा और रजस्वला स्त्री ये पदार्थ यात्रा-समय में दिखाई दें तो अशुभ होता है ॥१०२-१०३॥

अन्य शुभ शकुन—

गोधाजाहकसूकरादिशशकानां कीर्तनं शोभनं
नो शब्दो न विलोकनं च कपिऋक्षाणामतो व्यत्ययः ।
नद्युत्तारभयप्रवेशसमरे नष्टार्थसंवीक्षणे
व्यत्यस्ताः शकुना नृपेक्षणविधौ यात्रोदिताः शोभनाः ॥१०४॥

अन्वयः—गोधाजाहकसूकरादिशशकानां कीर्त्तनं शोभनं स्यात् । शब्दः नो शुभः, विलोकनं च न शोभनम्, तथा कपिऋक्षाणां अतो व्यत्ययः स्यात् । नद्युत्तारभयप्रवेशसमरे नष्टार्थसंवीक्षणे शकुनाः व्यत्यस्ताः ज्ञेयाः । नृपेक्षणविधौ यात्रोदिताः शकुनाः शोभनाः ज्ञेयाः ॥१०४॥

भा० टी०—गोह, जाहक (गात्रसंकोची जीव), सूकर (सूअर) आदि, खरगोश इनका कीर्त्तन या सुनाई देना शुभ है। परन्तु इनका शब्द और दिखाई पड़ना शुभद नहीं है तथा वन्दर और भालू का इससे विपरीत फल होता है। नदी के पार करने के समय, भय से भागने के समय, गृहप्रवेश के समय, नष्ट द्रव्य के खोजने में शकुन को उलटा अर्थात् शुभ शकुन अशुभ और अशुभ शकुन शुभ होते हैं। राजा का दर्शन करने में यात्रा में कहे हुए शकुन शुभद होते हैं ॥१०४॥

पक्षी आदि का शुभ शकुन—

वामाङ्गे कोकिला पल्ली पोतकी सूकरी रला ।
पिङ्गला छुच्छुका श्रेष्ठाः शिवाः पुरुषसंज्ञिताः ॥१०५॥

अन्वयः—कोकिला पल्ली पोतकी सूकरी रला पिङ्गला छुच्छुका शिवा पुरुषसंज्ञिताः वामाङ्गे श्रेष्ठाः भवन्ति ॥१०५॥

भा० टी०—कोयल, छिपकली, कबूतरी, सूकरी, रला पक्षी, पिंगला पक्षी, छछूंदर, गीदड़ी तथा पुरुष संज्ञक खंजन आदि पक्षी वाम भाग में पड़ें तो शुभद होते हैं ॥१०५॥

दक्षिण भाग के अन्य शुभ शकुन—

छिक्करः पिक्कको भासः श्रीकण्ठो वानरो रुरुः ।
स्त्रीसंज्ञकाः काकऋक्षश्वानः स्युर्दक्षिणाः शुभाः ॥१०६॥

अन्वयः—छिक्करः, पिक्ककः, भासः, श्रीकण्ठः, वानरः, रुरुः, स्त्रीसंज्ञकाः काकऋक्षश्वानः दक्षिणाः शुभाः ॥१०६॥

भा० टी०—छिक्कर मृग, पिक्कक, भास, श्रीकण्ठ, वानर, कृष्णमृग, स्त्री-संज्ञक कौआ, रीछ, कुत्ता ये दाहिने शुभ होते हैं ॥१०६॥

दाहिने भाग में सामान्यतः शुभ शकुन—

प्रदक्षिणगताः श्रेष्ठा यात्रायां मृगपक्षिणः ।
ओजा मृगा व्रजन्तोऽतिधन्या वामे खरस्वनः ॥१०७॥

अन्वयः—यात्रायां मृगपक्षिणः प्रदक्षिणगताः श्रेष्ठाः (स्युः) ओजाः मृगाः व्रजन्तः अतिधन्या तथा वामे खरस्वनः शुभः ॥१०७॥

भा० टी०—यात्रा के समय मृग और पक्षी दाहिने तरफ जायँ तो शुभ है, विषम मृग जाते हों तो अत्यंत शुभ हैं और वायें तरफ गदहे का स्वर सुनाई दे तो शुभ है ॥१०७॥

दुष्ट शकुन का परिहार—

आद्येऽपशकुने स्थित्वा प्राणानेकादश व्रजेत् ।
द्वितीये षोडश प्राणांस्तृतीये न क्वचिद् व्रजेत् ॥१०८॥

अन्वयः—आद्ये अपशकुने एकादश प्राणान् स्थित्वा, द्वितीये अपशकुने षोडश प्राणान् स्थित्वा व्रजेत्, तृतीये अपशकुने क्वचित् न व्रजेत् ॥१०८॥

भा० टी०—प्रथम अपशकुन होने पर ११ श्वास रुककर यात्रा करे। दूसरी वार अपशकुन होने पर सोलह श्वास रुककर यात्रा करे। तीसरी वार अपशकुन होने पर कभी भी यात्रा न करे ॥१०८॥

यात्रा से लौटने पर गृह में प्रवेश का मुहूर्त—

यात्रानिवृत्तौ शुभदं प्रवेशनं मृदु-ध्रुवैः क्षिप्रचरैः पुनर्गमः ।
द्वीशेऽनले दारुणभे तथोग्रभे स्त्रीगेहपुत्रात्मविनाशनं क्रमात् ॥१०९॥

अन्वयः—यात्रानिवृत्तौ मृदुध्रुवैः प्रवेशनं शुभदं स्यात् । क्षिप्रचरैः पुनः गमः स्यात् । द्वीशे अनले वारुणभे तथा उग्रभे (प्रवेशने) क्रमात् स्त्रीपुत्रगेहात्म-विनाशनं स्यात् ॥१०९॥

भा० टी०—यात्रा से लौटने पर मृदु संज्ञक ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में घर में प्रवेश[1]

१—विशेष—प्रवेश तीन प्रकार का—अपूर्व, पूर्व और द्वंद्वामय—होता है; यथा—

अपूर्वसंज्ञः प्रथमप्रवेशः यात्रावसाने च सुपूर्वसंज्ञः ।
द्वंद्वामयस्त्वग्निभयाद्विजातस्त्वेवं प्रवेशस्त्रिविधः प्रदिष्टः ॥

नूतन गृह में प्रवेश को अपूर्व प्रवेश कहते हैं। युद्ध में विजय पाकर घर आकर पुनः घर में प्रवेश को सुपूर्व प्रवेश कहते हैं। और अग्निभय से, नदी की बाढ़ से घर के बह जाने पर अथवा राजा के क्रोध से घर का नाश होकर पुनः गृह की प्राप्ति हो गई हो तो उसमें प्रवेश करने को द्वन्द्वामय प्रवेश कहते हैं।

करना चाहिये। यदि क्षिप्र और चर संज्ञक नक्षत्रों में प्रवेश करे तो फिर यात्रा करनी पड़ती है। विशाखा, कृत्तिका, शतभिषा तथा उग्र संज्ञक नक्षत्र में प्रवेश करने से क्रम से स्त्री, पुत्र, गृह और अपना नाश होता है ॥१०९॥

विवाह और यात्रा-प्रकरणोक्त दोषों का पुनः स्मरण

अयनर्क्षमास-तिथिकाल-वासरोद्भवशूलसम्मुखसितज्ञदिक्कदाः ।
गुरुवक्रतादिपरिघाख्यदण्डकस्त्र्यृतुजाद्यशौचमपि वोत्सवादिकम् ॥११०॥

अन्वयः—अयनर्क्षमासतिथिकालवासरोद्भवशूलसम्मुखसितज्ञदिक्कदाः, गुरुवक्रतादिपरिघाख्यदण्डकस्त्र्यृतुजाद्यशौचम्, अपि वा उत्सवादिकं गमे त्यजेत् ॥११०॥

भा० टी०—अयन, नक्षत्र, मास, तिथि, वार से उत्पन्न दोष, शूल, सम्मुख शुक्र, बुध, दिशा के स्वामी गुरु की वक्रता आदि दोष, परिघदण्ड, स्त्री का रजोदर्शन-काल, जन्ममरण का अशौच, विवाहादि उत्सव ये सभी यात्रा में त्याग देने चाहिये ॥११०॥

दक्षिण दिशा की यात्रा में विशेष—

मृतपक्षरिक्तरवितर्कसंख्यकास्तिथयश्च सौरिरविभौमवासराः ।
अपि वामपृष्ठगविधुस्तथाडलो वसुपञ्चकाभिजिदथापि दक्षिणे ॥१११॥

अन्वयः—मृतपक्षरिक्तरवितर्कसंख्यकाः तिथयः च (पुनः) सौरिरवि-भौम-वासराः अपि वामपृष्ठगविधुः तथा अडलः अथ वसुपञ्चकाभिजित् अपि दक्षिणे त्याज्यम् ॥१११॥

भा० टी०—मृतपक्ष (नक्षत्र), रिक्ता, द्वादशी, षष्ठी तिथि, रवि भौम वार, बायें और पीछे चन्द्रमा, अडल योग ये सम्पूर्ण सभी यात्रा में त्याग देने चाहिये। धनिष्ठादि पाँच नक्षत्र (धनिष्ठा, शतभिष, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती), अभिजित् मुहूर्त ये दक्षिण दिशा की यात्रा में त्याग देने चाहिये ॥१११॥

यात्रा में लग्नदोष का विचार—

लग्ने जन्मर्क्षतन्वोर्मृतिगृहमहितर्क्षाच्च षष्ठं तदीशा
वा लग्ने कुम्भमीनर्क्षनवलवतनू चापि पृष्ठोदयं च ।
पृष्ठाशासंस्थमृक्षं दशमशनिरथो सप्तमे चापि काव्यः
केन्द्रे वक्राश्च वक्रिग्रहदिवसविवाहोक्तदोषाश्च नेष्टाः ॥११२॥

अन्वयः—जन्मर्क्षतन्वोः मृतिगृहं, च (तथा) अहितर्क्षात् षष्ठं लग्ने वा तदीशे लग्ने च (तथा) कुम्भमीनर्क्षनवलवतनू अपि च पृष्ठोदयं पृष्ठाशासंस्थं ऋक्षं, अथो दशमशनिः, सप्तमे काव्यः, अपि च केन्द्रे वक्राः वक्रिग्रहदिवसविवाहोक्तदोषाश्च (यात्रायां) नेष्टाः ॥११२॥

भा० टी०—जन्म की राशि और जन्म-लग्न से अष्टम राशि, शत्रु की राशि से छठी राशि यात्रा-लग्न में हो अथवा इसके स्वामी लग्न में हों, कुम्भ-मीन राशि लग्न

हो अथवा कुम्भ-मीन का नवांश लग्न में हों, पृष्ठोदय राशि लग्न हो, पीछे की दिशा में स्थित नक्षत्र, और लग्न से दशम शनि, सातवें शुक्र,केन्द्र में वक्री ग्रह, वक्री ग्रह का दिन और विवाह-प्रकरण में कहे हुए दोष यात्रा में त्याग देने चाहिये ॥११२॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ यात्राप्रकरणम् ॥११॥

वास्तुप्रकरणम्

तत्र त्रिविधप्रवेशे वशिष्ठाद्यभिहिते अपूर्वसंज्ञः प्रथमः प्रवेश इत्युक्तं स च गृहनिर्माणायत्त इति वास्तुनिर्माणप्रारंभ उच्यते ।

वास करने योग्य ग्राम और उससे लाभादि का विचार—

यद्भं द्वयङ्कसुतेशदिङ्मितमसौ ग्रामः शुभो नामभात्
स्वं वर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितम् ।
काकिण्यस्त्वनयोश्च तद्विवरतो यस्याधिकाः सोऽर्थदो-
ऽथ द्वारं द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां हितं पूर्वतः ॥ १ ॥

अन्वयः—नामभात् यद्भं द्वयङ्कसुतेशदिङ्मितं असौ ग्रामः शुभः स्यात् । च (पुनः) स्वं वर्गं द्विगुणं विधाय परवर्गाढ्यं गजैः शेषितं अनयोः काकिण्यः स्युः । तद्विवरतः यस्य अधिकाः स अर्थदः स्यात् । अथ द्विजवैश्यशूद्रनृपराशीनां पूर्वतः द्वारं हितं स्यात् ॥ १ ॥

भा० टी०—पुकारने के नाम से जो राशि हो उससे ग्राम की राशि २।९।५। ११।१०वीं हो तो उस ग्राम में वास करने से शुभ फल होता है। अपने वर्ग की संख्या को दूना करके दूसरे के (ग्राम के) वर्ग की संख्या को उसमें जोड़ दे और आठ से भाग दे तो शेष वासकर्ता की काकिणी होती है। इसी प्रकार ग्राम के वर्ग को दूना करके अपने वर्ग की संख्या को जोड़कर आठ का भाग देने से ग्राम की काकिणी होती है। दोनों का अंतर करने से जिसका अधिक शेष होता है वही धनदाता होता है। और ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, क्षत्रिय राशिवालों को पूर्व दिशा से क्रम से द्वार करना हितकर होता है। अर्थात् द्विज राशिवाले पूर्व मुख के द्वार का, वैश्य राशिवाले दक्षिण मुख के द्वार का, शूद्र राशिवाले पश्चिम मुख के द्वार का और क्षत्रिय राशिवाले उत्तर मुख के द्वार का गृह बनावें ॥ १ ॥

उदाहरण—जैसे नीलकंठ को बाँसगाँव में गृह बनाना है तो नीलकंठ का अनुराधा नक्षत्र और वृश्चिक राशि है और बाँसगाँव का रोहिणी नक्षत्र और वृष राशि है। अतः वासकर्ता की राशि से ग्राम की राशि ७वीं पड़ी इसलिए प्रत्येक के अनुसार ग्राम वास के लिए अशुभ हुआ।

काकिणी का विचार——नीलकंठ का ५वाँ वर्ग तवर्ग है। और ग्राम का छठा वर्ग पवर्ग है। अतः वासकर्ता के वर्ग को दूना किया तो १० हुआ। इसमें ग्राम के वर्ग ६ को जोड़कर ८ से भाग दिया तो शेष ० बचा। यह वासकर्ता की काकिणी हुई। इसी प्रकार ग्राम के वर्ग ६ को दूना करके वासकर्ता के वर्ग ५ को जोड़ दिया तो १७ हुए। इसमें ८ से भाग दिया; शेष १ बचा; यह ग्राम की काकिणी हुई। वासकर्ता की काकिणी से ग्राम की काकिणी अधिक है, अतः ग्राम धन देनेवाला है। अतः वास करने से लाभ होगा।

गृह में राशि का विचार——मेषेऽश्विवित्रिनयं हरौ त्रित्रिमूनं मूलत्रयं धन्विनि द्वे द्वेभे परतो गृहेश घटितं प्राग्वत्तु नाड्यन्यथा अर्थात् अश्विनी से तीन नक्षत्रों (अश्विनी, भरणी, कृत्तिका) की मेष राशि, मघा से तीन नक्षत्रों (मघा, पूर्वा फाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी) की सिंह राशि, मूल से तीन नक्षत्रों (मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा) की धन राशि होती है। और शेष राशियाँ दो-दो नक्षत्रों की होती हैं। गृहेश और गृह के नक्षत्र से विवाहोक्त मेलापक देखना किन्तु नाड़ी अन्यथा देखना अर्थात् दोनों की एक नाड़ी हो।

राशि के अनुसार ग्रामवास का विचार——

गोसिंहनक्रमिथुनं निवसेन्न मध्ये
ग्रामस्य पूर्वककुभोऽलिझषाङ्गनाश्च ।
कर्को धनुस्तुलभमेषघटाश्च तद्वद्-
वर्गास्स्वपञ्चमपरा बलिनः स्युरैन्द्र्याः ॥ २ ॥

अन्वयः——गोसिंहनक्रमिथुनं ग्रामस्य मध्ये न निवसेत्, च (तथा) पूर्व-ककुभः क्रमेण अलिझषाङ्गनाः कर्कः धनुस्तुलभमेषघटाः न निवसेत्। च (पुनः) तद्वत् स्वपञ्चमपराः वर्गाः ऐन्द्र्याः (सकाशात्) बलिनः स्युः ॥ २ ॥

भा० टी०——वृष, सिंह, मकर, मिथुन राशिवाले ग्राम के मध्यभाग में न वास करें। और पूर्व दिशा से क्रम से वृश्चिक, मीन, कन्या, कर्क, धन, तुला, मेष, कुम्भ राशि वाले वास न करें। अर्थात् ग्राम की पूर्व दिशा में वृश्चिक राशि वाले, अग्नि-कोण में मीन राशि वाले, दक्षिण में कन्या राशि वाले, नैर्ऋत्यकोण में कर्क राशि वाले, पश्चिम में धन राशि वाले, वायव्यकोण में तुला राशि वाले, उत्तर में मेष राशि वाले और ईशानकोण में कुम्भ राशि वाले वास न करें। अवर्गादि आठ वर्ग पूर्व आदि आठ दिशा में बली होते हैं किन्तु अपने से पाँचवाँ वर्ग शत्रु होता है। अर्थात् अपने वर्ग से पाँचवें वर्ग की दिशा में वास न करे जैसे अवर्ग की पूर्व दिशा है अतः जिनका अवर्ग है वे इससे पाँचवें वर्ग तवर्ग की दिशा पश्चिम में वास न करें ॥२॥

गृह के विस्तार-दैर्घ्य और पिंड का विचार—

एकोनितेष्टर्क्षहता द्वितिथ्यो रूपोनितेष्टाय हतेन्दुनागैः ।
युक्ता घनैश्चापि युता विभक्ता भूपाश्विभिः शेषमितो हि पिण्डः ॥ ३ ॥
स्वेष्टायनक्षत्रभवोऽथ दैर्घ्यहृत्स्याद्विस्तृतिर्विस्तृतिहृच्च दीर्घता ।
आया ध्वजो धूमहरिश्वगोखरेभध्वाङ्क्षकाः पिण्ड इहाष्टशेषिते ॥ ४ ॥

अन्वयः—एकोनितेष्टर्क्षहता द्वितिथ्यः, रूपोनितेष्टाय हतेन्दुनागैः युक्ताः घनैश्चापि युताः, भूपाश्विभिः विभक्ताः शेषमितः स्वेष्टाय नक्षत्रभवः पिण्डः स्यात्। अथ च दैर्घ्यहृत् विस्तृतिः, च (तथा) विस्तृतिहृत् दीर्घता (स्यात्) । ध्वजः धूमहरिश्वगोखरेभध्वांक्षकाः आयाः स्युः। इह पिण्डे अष्टशेषिते क्रमेण ध्वजादिकाः आयाः स्युः ॥३-४॥

भा० टी०—(अपने नाम के नक्षत्र से जिस नक्षत्र के साथ मेलापक बनता हो किन्तु नाड़ी एक हो उसे इष्ट नक्षत्र मानना चाहिये और आठ आयों में से एक विषम आय को इष्ट आय मानना चाहिये।) इष्ट नक्षत्र की संख्या में से १ घटाकर शेषसे १५२ को गुणा कर इससे इष्ट आय-संख्या में एक घटाकर शेषसे ८१ को गुणा कर जोड़ दे और १७ और उसमें जोड़कर २१६ से भाग दे तो शेष इष्ट नक्षत्र और इष्ट आय से उत्पन्न पिंड होता है। पिंड में दैर्घ्य (लंबाई) से भाग देने से शेष विस्तार (चौड़ाई) होता है और विस्तार से भाग देने से शेष दैर्घ्य होता है। और पिंड में आठ ८ से भाग देने से ध्वज १, धूम २, सिंह ३, श्वान ४, वृष ५, खर ६, हस्ती ७ और ध्वांक्ष ८ ये आठ आय होते हैं ॥ ३-४ ॥

उदाहरण—जैसे पं० नीलकंठ का अनुराधा नक्षत्र है, इसका रोहिणी नक्षत्र के साथ मेलापक बनता है इसलिए इष्ट नक्षत्र-संख्या ४ हुई, और इष्ट आय सिंह मान लिया इसकी संख्या ३ हुई। इष्ट नक्षत्र-संख्या ४ में १ घटाकर शेष ३ से १५२ को गुणा किया तो ४५६ हुआ, इसमें इष्टाय ३ में १ घटाकर शेष २ से ८१ को गुणा कर १६२ को जोड़ दिया तो ६१८ हुआ। इसमें १७ और जोड़ दिया तो ६३५ हुआ। इसमें २१६ का भाग दिया तो शेष २०३ यही पिंड अर्थात् क्षेत्रफल हुआ। इसमें दैर्घ्य २९ से भाग दिया तो विस्तार ७ हुआ और विस्तार से भाग दिया तो २९ दैर्घ्य हुआ।

इसी प्रकार से गज, फुट आदि से भी पिंड बनाना चाहिये। यदि क्षेत्रफल अर्थात् पिंड में दैर्घ्य आदि से भाग देने से अल्प विस्तार या दैर्घ्य बचता हो तो पिंड में तब तक २१६ जोड़ता जाय जब तक अपना अभीष्ट दैर्घ्य-विस्तार न प्राप्त हो।

आय के अनुसार द्वार का विचार—

ध्वजादिकाः सर्वदिशि ध्वजे मुखं कार्यं हरौ पूर्वयमोत्तरे तथा ।
प्राच्यां वृषे प्राग्यमयोर्गजेऽथ वा पश्चादुदक्पूर्वयमे द्विजादितः ॥ ५ ॥

अन्वयः—ध्वजे सर्वदिशि मुखं कार्यम्, हरौ पूर्वयमोत्तरे तथा वृषे प्राच्यां गजे प्राग्यमयोः मुखं कार्यम्, अथवा द्विजादितः क्रमेण पश्चादुदक् पूर्वयमे द्वारं शुभं स्यात् ॥ ५ ॥

भा० टी०—यदि पिंड में ध्वज आय हो तो सभी दिशा में प्रधान द्वार कर सकते हैं। सिंह आय हो तो पूर्व, दक्षिण और उत्तर दिशा में. वृष आय हो तो पूर्व दिशा में, गज आय हो तो पूर्व-दक्षिण दिशा में गृह का प्रधान मुख (दरवाजा) करना चाहिये। अथवा ब्राह्मण पश्चिम मुख, क्षत्रिय उत्तर मुख, वैश्य पूर्व मुख और शूद्र दक्षिण मुख का दरवाजा करे ॥ ५ ॥

गृहारम्भ में विशिष्ट काल का निषेध—

गृहेशतत्स्त्रीसुतवित्तनाशोऽर्केन्द्वीज्यशुक्रे विबलेऽस्तनीचे ।
कर्तुः स्थितिर्नो विधुवास्तुनोर्भे पुरःस्थिते पृष्ठगते खनिः स्यात् ॥ ६ ॥

अन्वयः—अर्केन्द्वीज्यशुक्रे विबले अस्तनीचे क्रमात् गृहेशतत्स्त्रीसुतवित्तनाशः स्यात्। विधुवास्तुनोर्भे पुरःस्थिते कर्तुः स्थितिः नो भवेत्, पृष्ठगते खनिः स्यात् ॥६॥

भा० टी०—घर बनानेवाले की राशि से यदि सूर्य, चन्द्रमा, गुरु और शुक्र निर्बल (अनिष्ट स्थान में) हों, अस्त हों, नीच राशि में हों तो क्रम से गृहेश का, उसकी स्त्री का, उसके पुत्र का और धन का नाश होता है। चन्द्रमा का नक्षत्र, वास्तु का नक्षत्र (जो पिंड में है) यदि सम्मुख हो तो कर्त्ता की स्थिति घर में नहीं होती है। पीछे हो तो उस घर में चोरी होती है। यह गृहारम्भ के समय देखना चाहिये। घर का दरवाजा जिस दिशा का हो उसी से सम्मुख और पृष्ठ का विचार परिघ दंड में स्थापित नक्षत्रों से करना चाहिये ॥ ६ ॥

गृह में व्यय और अंश का विचार—

भं नागतष्टं व्यय ईरितोऽसौ ध्रुवादिनामाक्षरयुक् सपिण्डः ।
तष्टो गुणैरिन्द्रकृतान्तभूपा ह्यंशा भवेयुर्न शुभोऽन्तकोऽत्र ॥ ७ ॥

अन्वयः—भं नागतष्टं व्यय ईरितः। असौ ध्रुवादिनामाक्षरयुक् सपिण्डः गुणैः तष्टः क्रमेण इन्द्रकृतान्त-भूपाः अंशाः भवेयुः अत्र अन्तकः न शुभः ॥ ७ ॥

भा० टी०—पिंड में जो नक्षत्र है उसमें ८ से भाग देने से शेष व्यय होता है, इस व्यय में घर के नाम की अक्षर-संख्या को जोड़कर इसमें पिंड को जोड़कर ३ का भाग देने से १।२।० शेष बचने से क्रम से १ शेष में इन्द्र का, २ शेष में यम का और ० शेष में राजा का अंश होता है। यहाँ पर यम का अंश गृह में शुभ नहीं होता है ॥७॥

उदाहरण—जैसे इष्ट नक्षत्र रोहिणी की संख्या ४ में आठ का भाग देने से शेष ४ बचा यह व्यय हुआ। इसमें घर के नाम सुमुख की अक्षर-संख्या ३ जोड़ दिया तो ७ हुआ। इसे पिंड २०३ में जोड़कर तीन से भाग दिया तो शेष शून्य ० बचा, इसलिए राजा का अंश हुआ ॥ ७ ॥

शालाध्रुवाङ्कानयन—

दिक्षु पूर्वादितः शालाध्रुवा भूद्वौ कृता गजाः ।
शालाध्रुवाङ्कसंयोगः सैको वेश्म ध्रुवादिकम् ॥ ८ ॥

अन्वयः—पूर्वादितः दिक्षु क्रमेण भूः, द्वौ, कृताः, गजाः (शालाध्रुवाः) स्युः। शालाध्रुवाङ्कसंयोगः सैकः ध्रुवादिकं वेश्म स्यात् ॥ ८ ॥

भा० टी०—पूर्व आदि दिशाओं में क्रम से १।२।४।८ शाला का ध्रुवा होता है। जिन-जिन दिशाओं में शाला हो उनके ध्रुवांकों का योग कर एक जोड़ देने से ध्रुव आदि सोलह घर होते है ॥ ८ ॥

नोट—यहाँ शाला शब्द से कोई-कोई घर के सामने के बरामदा को कहते है और कोई-कोई घर के दरवाजे को लेते हैं। दोनों पक्ष हैं, किन्तु अधिकतर दरवाजा ही लिया जाता है ।

ध्रुवाङ्क के योग से गृहों के नाम में अक्षर-संख्या—

तिथ्यर्काष्टाष्टिगोरुद्रशक्रे नामाक्षरं त्रयम् ।
भूद्वचब्धीष्वङ्गदिग्वह्निविश्वेषु द्वौ नगेऽब्धयः ॥ ९ ॥

अन्वयः—तिथ्यर्काष्टाष्टिगोरुद्रशक्रे नामाक्षरं त्रयं स्यात्। भूद्वचब्धीष्वङ्ग-दिग्वह्निविश्वेषु नामाक्षरं द्वयम्, नगे अब्धयः ॥ ९ ॥

भा० टी०—पूर्वोक्त ८वें श्लोक में सभी संख्याओं का योग यदि १५।१२।८। १६।९।११।१४ हो तो गृह का नाम तीन अक्षर का होता है। और १।२।४।५।६। १०।३।१३ हो तो दो अक्षर का और ७ हो तो चार अक्षर का नाम होता है ॥

षोडश गृहों के नाम—

ध्रुव-धान्ये जय-नन्दौ-खर-कान्त-मनोरम-सुमुख-दुर्मुखोग्रं च ।
रिपुदं वित्तद-नाशे चाक्रन्द-विपुल-विजयाख्यं स्यात् ॥ १० ॥

अन्वयः—स्पष्टम् ॥१०॥

भा० टी०—ध्रव, धान्य, जप, नन्द, खर, कान्त, मनोरम, सुमुख, दुर्मुख, उग्र, रिपुद, वित्तद, नाश, आक्रन्द, विपुल और विजय ये १६ गृहों के नाम हैं ॥१०॥

उदाहरण—जैसे पूर्वोक्त पिंड में उत्तर दिशा को छोड़कर शेष तीनों दिशाओं में गृह का दरवाजा करना है तो शालाध्रुवांक क्रम से १ + २ + ४ मिला। तीनों का योग ७ हुआ। इसमें एक और जोड़ने से ८ हुआ। अतः ८ वाँ सुमुख नाम का गृह हुआ ॥ १० ॥

विशेष—

प्रकारान्तर से गृह-नाम जानने की विधि—

गृहपिण्डं युगैर्हत्वा षट्चन्द्रैर्भागमाहरेत् ।
शेषाङ्के तु स्मृतं नाम ध्रुवादिक्रमतो बुधैः ॥ १ ॥

अर्थ—गृहपिण्ड को ८ से गुणा कर १६ से भाग देने से शेष के अनुसार सोलह गृह के नाम होते हैं। जैसे पूर्वोक्त पिंड २०३ को ८ से गुणा किया तो १६२४ हुआ इसमें १६ का भाग दिया तो ८ बचे। अतः ८वाँ सुमुख नाम का गृह हुआ ॥१॥

प्रकारान्तर से गृह के आयादि लाने का प्रकार—

पिण्डे नवाङ्काङ्गगजाग्निनागनागाब्धिनागैर्गुणिते क्रमेण।
विभाजिते नागनगाङ्क-सूर्य-नागर्क्षतिथ्यृक्ष-ख-भानुभिश्च ॥ ११ ॥
आयो वारोंऽशको द्रव्यमृणमृक्षं तिथिर्युतिः।
आयुश्चाथ गृहेशर्क्षगृहभैक्यं मृतिप्रदम् ॥ १२ ॥

अन्वयः—पिण्डे नवाङ्काङ्गगजाग्निनागनागाब्धिनागैः गुणिते क्रमेण नागनगाङ्कसूर्यनागर्क्षतिथ्यृक्षखभानुभिः विभाजिते (सति) आयः, वारः, अंशकः, द्रव्यं, ऋणं, ऋक्षं, तिथिः, युतिः, आयुश्च भवति। अथ गृहेशर्क्षगृहभैक्यं मृतिप्रदं ज्ञेयम् ॥११-१२॥

भा० टी०—गृहपिण्ड को ९ स्थानों में रखकर क्रम से ९।९।६।८।३।८।८।४।८ से गुणा कर क्रम से ८।७।९।१२।८।२७।१५।२७।१२० से भाग दें तो क्रम से आय, वार, अंश, द्रव्य, ऋण, नक्षत्र, तिथि, योग और आयु होता है। गृहस्वामी का नक्षत्र और गृह का नक्षत्र एक ही हो तो गृहेश की मृत्यु होती है ॥११-१२॥

उदाहरण—पूर्वोक्त पिण्ड २०३ को ९ से गुणा कर १८२७ इसमें ८ का भाग दिया तो शेष ३ आय हुआ ॥ १ ॥

पिण्ड को ९ से गुणा कर ७ का भाग दिया तो शेष शून्य वार हुआ ॥ २ ॥
पिण्ड २०३ को ६ से गुणा कर ९ से भाग दिया तो शेष ३ अंश हुआ ॥ ३ ॥
पिण्ड २०३ को ८ से गुणा कर १२ से भाग दिया तो शेष ४ द्रव्य हुआ ॥ ४ ॥
पिण्ड २०३ को ३ से गुणा कर ८ से भाग दिया तो शेष १ ऋण हुआ ॥ ५ ॥
पिण्ड २०३ को ८ से गुणा कर २७ से भाग दिया तो शेष ४ नक्षत्र हुआ ॥ ६ ॥
पिण्ड २०३ को ८ से गुणा कर १५ से भाग दिया तो शेष ४ तिथि हुई ॥ ७ ॥
पिण्ड २०३ को ४ से गुणा कर २७ से भाग दिया तो शेष २ योग हुआ ॥ ८ ॥
पिण्ड २०३ को ८ से गुणा कर १२० से भाग दिया तो शेष ६४ आयु हुआ ॥९॥

गृहारंभ में वृषवास्तुचक्र—

गेहाद्यारम्भेऽर्कभाद्वत्सशीर्षे रामैर्दाहो वेदभैरग्रपादे।
शून्यं वेदैः पृष्ठपादे स्थिरत्वं रामैः पृष्ठे श्रीर्युगैर्दक्षकुक्षौ ॥ १३ ॥
लाभो रामैः पुच्छगैः स्वामिनाशो वेदैर्नैःस्वं वामकुक्षौ मुखस्थैः।
रामैः पीडा सन्ततं वार्कधिष्ण्यादश्वै रुद्रैर्दिग्भिरुक्तं ह्यसत्सत् ॥ १४ ॥

अन्वयः—गेहाद्यारम्भे अर्कभात् वत्सशीर्षे रामैः दाहः, वेदभैः अग्रपादे शून्यं, वेदैः पृष्ठपादे स्थिरत्वं, पृष्ठे रामैः श्रीः, युगैः दक्षकुक्षौ लाभः, पुच्छगैः रामैः स्वामि-

नाशः, वेदैः वामकुक्षौ नैःस्वं, मुखस्थैः रामैः सन्ततं पीडा स्यात्। वा अर्कधिष्ण्यात् अश्वैः रुद्रैः दिग्भिः क्रमात असत सत् उक्तम ॥१३-१४॥

भा० टी०—गृहादि के आरंभ में सूर्य के नक्षत्र से तीन नक्षत्र वत्स (बैल) के सिर पर स्थापित करे, उसमें गृहादि का आरम्भ करने से दाह होता है। इसके बाद चार नक्षत्र अगले पैर में स्थापित करे, इसमें आरम्भ करने से शून्य फल होता है। इसके बाद ४ नक्षत्र पिछले पैर में कल्पना करे, इसमें आरम्भ करने से स्थिरता होती है। इसके बाद तीन नक्षत्र पीठ पर कल्पना करे, इसमें आरम्भ करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। आगे के ४ नक्षत्र दाहिनी कुक्षि में कल्पना करे, इसमें आरम्भ करने से लाभ होता है। फिर ३ नक्षत्र पूछ में कल्पना करे इसमें आरम्भ करे तो गृहस्वामी का नाश होता है। फिर आगे के ४ नक्षत्र बाईं कुक्षि में कल्पना करे। इसमें आरम्भ करने से दरिद्रता होती है। फिर आगे के ३ नक्षत्र मुख में कल्पना करे। इसमें आरम्भ करे तो निरन्तर पीड़ा होती है। अथवा सूर्य के नक्षत्र से ७ नक्षत्र अशुभ, इसके आगे के ११ नक्षत्र शुभ और इसके आगे १० नक्षत्र अशुभ होते हैं॥१३-१४॥

विशेष—जिस दिन गृहारम्भ करना हो उस दिन जो नक्षत्र हो उस नक्षत्र तक सूर्य के नक्षत्र से गिनना चाहिये। यदि उक्त चक्र से वह नक्षत्र शुभ फलदायक हो तो उस दिन गृहारम्भ करे।

गृहद्वार के अनुसार मास और गृहारम्भ के नक्षत्र—

कुम्भेऽर्के फाल्गुने प्रागपरमुखगृहं श्रावणे सिंहकर्क्योः
पौषे नक्रे च याम्योत्तरमुखसदनं गोजगेऽर्के च राधे।
मार्गे जूकालिगे सद्ध्रुवमृदुवरुणस्वातिवस्वर्कपुष्यैः
सूतीगेहं त्वदित्यां हरिभविधिभयोस्तत्र शस्तः प्रवेशः॥१५॥

अन्वयः—कुम्भे अर्के फाल्गुने, सिंहकर्क्योः अर्के श्रावणे, नक्रे अर्के पौषे च प्रागपरमुखगृहं सत् स्यात्। तथा गोजगेऽर्के राधे, जूकालिगे अर्के मार्गे याम्योत्तरमुखसदनं सत् स्यात्। ध्रुवमृदुवरुणस्वातिवस्वर्कपुष्यैः (गृहारम्भः) शुभः। सूतीगेहं तु अदित्यां सत् स्यात्, तत्र हरिभविधिभयोः प्रवेशः शस्तः स्यात् ॥१५॥

भा० टी०—कुम्भ के सूर्य फाल्गुन में हों, सिंह-कर्क के सूर्य श्रावण में और मकर के सूर्य पौष मास में हों तो पूर्व-पश्चिम मुख के घर को आरंभ करना चाहिये। वृष, मेष के सूर्य वैशाख मास में; तुला, वृश्चिक के सूर्य मार्गशीर्ष में हों तो दक्षिण-उत्तर दिशा के मुख वाले गृह का आरम्भ करना चाहिये। ध्रुव संज्ञक, मृदु संज्ञक, शतभिषा, स्वाती, धनिष्ठा, हस्त, पुष्य नक्षत्र में गृहारम्भ करना चाहिये। और पुनर्वसु में सूतिका-गृह का आरम्भ करना चाहिये और श्रवण, रोहिणी नक्षत्र में सूतिका-गृह में प्रवेश करना चाहिये ॥१५॥

पूर्व कहे हुए मासों को प्रकारान्तर से शुभकथन—

कैश्चित् मेषरवौ मधौ वृषभगे ज्येष्ठे शुचौ कर्कटे
भाद्रे सिंहगते घटेऽश्वयुजि चोर्जेऽलौ मृगे पौषके ।
माघे नक्रघटे शुभं निगदितं गेहं तथोर्जे न सत्
कन्यायां च तपा धनुष्यपि न सन् कृष्णादिमासाद्भवेत् ॥ १६ ॥

अन्वयः—कैश्चित् मेषरवौ मधौ, वृषभगे ज्येष्ठे, कर्कटे शुचौ, सिंहगते भाद्रे, घटे अश्वयुजि, च (पुनः) अलौ ऊर्जे, मृगे पौषके, नक्रघटे माघे गेहं शुभं निगदितम् । तथा च कन्यायां ऊर्जे न सत् । धनुषि तपाः अपि न सत् । अत्र कृष्णादिमासाद् भवेत् ॥१६॥

भा० टी०—कोई आचार्य मेष के सूर्य में चैत्र मास में, वृष के सूर्य में ज्येष्ठ मास में, कर्क के सूर्य में आषाढ़ में, सिंह के सूर्य में भाद्रपद में, तुला के सूर्य में आश्विन में, वृश्चिक के सूर्य में कार्त्तिक में, मकर के सूर्य में पौष मास में, मकर-कुम्भ के सूर्य में माघ मास में गृहारम्भ करने को श्रेष्ठ कहते हैं। तथा कन्या के सूर्य में कार्त्तिक मास और धन के सूर्य में तप (माघ) मास गृहारम्भ में शुभद नहीं है। यहाँ मास की गणना कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से समझनी चाहिये ॥१६॥

तिथि के अनुसार द्वार का निषेध—

पूर्णेन्दुतः प्राग्वदनं नवम्यादिषूत्तरास्यं त्वथ पश्चिमास्यम् ।
दर्शादितः शुक्लदले नवम्यादौ दक्षिणास्यं न शुभं वदन्ति ॥ १७ ॥

अन्वयः—पूर्णेन्दुतः प्राग्वदनं, तु (पुनः) नवम्यादिषु उत्तरास्यं, अथ दर्शादितः शुक्लदले पश्चिमास्यं, नवम्यादौ दक्षिणास्यं शुभं न वदन्ति ॥१७॥

भा० टी०—पूर्णिमा से कृष्णपक्ष की अष्टमी पर्यन्त पूर्व मुखवाला गृह, नवमी से चतुर्दशी पर्यन्त उत्तर मुखवाला गृह, अमावास्या से शुक्लपक्ष की अष्टमी पर्यन्त पश्चिम मुख का गृह और नवमी से चतुर्दशी पर्यन्त दक्षिण मुख का गृह न बनवावे ॥१७॥

गृहारंभ में पञ्चाङ्ग-शुद्धि—

भौमार्करिक्तामाद्यूने चरोनेऽङ्गे विपञ्चके ।
व्यष्टान्त्यस्थैः शुभैर्गेहारम्भस्त्र्यायारिगैः खलैः ॥ १८ ॥

अन्वयः—भौमार्करिक्तामाद्यूने, चरोने (लग्ने), विपञ्चके (नक्षत्रे) शुभैः व्यष्टान्त्यस्थैः, खलैः त्र्यायारिगैः गेहारम्भः (शुभः) स्यात् ॥१८॥

भा० टी०—भौमवार, रविवार, रिक्ता, अमावास्या, प्रतिपदा इन वारों और तिथियों को छोड़कर शेष वारों और तिथियों में, चर संज्ञक लग्न को छोड़कर शेष लग्नों में, पञ्चक के नक्षत्रों को छोड़कर शेष नक्षत्रों में, शुभ ग्रह लग्न से ८।१२ वें को छोड़कर शेष स्थानों में और पापग्रह ३।११।६ स्थानों में हों ऐसे लग्न में गृहारम्भ करना चाहिये ॥१८॥

विशेष---यहाँ धनिष्ठादि पाँच नक्षत्रों में केवल पूर्वाभाद्रपदा को त्याग देना चाहिये।

राहु के मुख का विचार---

देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शम्भुदिशो विलोमतः।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात् पृष्ठविदिक् शुभा भवेत्॥

अन्वयः---देवालये, गेहविधौ, जलाशये, मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतः त्रिभे शम्भुदिशः विलोमतः राहोः मुखं स्यात्। अत्र मुखात् पृष्ठविदिक् खाते (सति) शुभा भवेत् ॥१९॥

भा० टी०---देवालय, गृह और जलाशय बनाने में क्रम से मीन राशि के सूर्य, सिंह राशि के सूर्य, मकर राशि के सूर्य से तीन-तीन राशि के सूर्य में ईशानकोण से विलोम राहु का मुख होता है। अर्थात् मीन, मेष, वृष के सूर्य में ईशानकोण में, मिथुन,कर्क,सिंह के सूर्य में वायव्यकोण में मुख रहता है। इसी प्रकार सभी में समझना चाहिये। और मुख से पीछे की दिशा में पीठ होती है। मुख की दिशा से पीठ की दिशा में खात (नींव) करना शुभद होता है। जैसे ईशान में मुख हो तो अग्निकोण में पीठ होती है ॥१९॥

स्पष्टार्थ चक्र---

	ईशान	वायव्य	नैर्ऋत्य	अग्नि
देवालय	मी. मे. वृ. के सूर्य में राहुमुख	मिथु. क. सिं. के सूर्य में राहुमुख	कं. तुला वृश्चिक के सूर्य में राहुमुख	ध. म. कुं. के सूर्य में राहुमुख
गृह	सिं. कं. तुला के सूर्य में राहुमुख	वृ. ध. मकर के सूर्य में राहुमुख	कुं. मी. मे. के सूर्य में राहुमुख	वृ. मि. क. के सूर्य में राहुमुख
जलाशय	म. कुं. मी. के सूर्य में राहुमुख	मे. वृ. मि. के सूर्य में राहुमुख	क. सिं. कं. के सूर्य में राहुमुख	तु. वृ. ध. के सूर्य में राहुमुख

गृह से कूप का विचार---

कूपे वास्तोर्मध्यदेशेऽर्थनाशस्त्वैशान्यादौ पुष्टिरैश्वर्यवृद्धिः।
सूनोर्नाशः स्त्रीविनाशो मृतिश्च सम्पत् पीडा शत्रुतः स्याच्च सौख्यम्॥

अन्वयः---वास्तोः मध्यदेशे कूपे अर्थनाशः, तु (पुनः) ऐशान्यादौ पुष्टिः, ऐश्वर्यवृद्धिः, सूनोर्नाशः, स्त्रीविनाशः, मृतिः, सम्पत्, शत्रुतः पीडा, च सौख्यं स्यात् ॥२०॥

भा० टी०---यदि वास्तु (गृह) के मध्य में कूप हो तो धन का नाश, ईशानकोण में हो तो पुष्टि, पूर्व में ऐश्वर्य-वृद्धि, अग्निकोण में पुत्र का नाश, दक्षिण में

स्त्री का नाश, नैर्ऋत्य कोण में गृहस्वामी की मृत्यु, पश्चिम में सम्पत्ति, वायव्य में शत्रु से पीड़ा और उत्तर में सुख होता है ॥२०॥

गृह-विभाग—

स्नानाग्निपाकशयनास्त्रभुजेश्च धान्यभाण्डारदैवतगृहाणि च पूर्वतः स्युः।
तन्मध्यतस्तु मथनाज्यपुरीषविद्याभ्यासाख्यरोदनरतौषधसर्वधाम ॥२१॥

अन्वयः—पूर्वतः स्नानाग्निपाकशयनास्त्रभुजेः च (तथा) भाण्डारदैवत-गृहाणि स्युः । तन्मध्यतः मथनाज्यपुरीपविद्याभ्यासाख्यरोदनरतौपधसर्वधाम विधेयम् ॥२१॥

भा० टी०—पूर्व दिशा के क्रम से अर्थात् पूर्व में स्नानगृह, अग्निकोण में रसोई का घर, दक्षिण में शयनगृह, नैर्ऋत्य में शस्त्र का गृह, पश्चिम में भोजनगृह, वायव्य में धान्य-संग्रह-गृह, उत्तर में भांडारगृह और ईशान में देवता का गृह बनावे। और दो-दो घरों के मध्य में क्रम से मथन, घी, पैखाना, विद्याभ्यास, रोदन, रति (स्त्रीप्रसंग), औषधि और सभी वस्तुओं का घर बनावे ॥२१॥

गृहारम्भ से गृह के आयु का योग—

जीवार्कविच्छुक्रशनैश्चरेषु लग्नारिजामित्रसुखत्रिगेषु ।
स्थितिः शतं स्याच्छरदां सितार्कारिज्ये तनुत्र्यङ्गसुते शते द्वे ॥ २२ ॥

अन्वयः—जीवार्कविच्छुक्रशनैश्चरेषु लग्नारिजामित्रसुखत्रिगेषु गृहस्य शरदां शतं स्थितिः स्यात् । सितार्कारिज्ये तनुत्र्यङ्गसुते द्वे शते स्थितिः स्यात् ॥२२॥

भा० टी०—गृहारम्भ के समय गुरु, सूर्य, बुध, शुक्र, शनि ये क्रम से लग्न में छठे, सातवें, चौथे और तीसरे हों तो घर की आयु एक सौ वर्ष की होती है। और शुक्र, सूर्य, भौम, वृहस्पति क्रम से लग्न में तीसरे, छठे, पाँचवें हों तो दो सौ वर्ष की आयु होती है ॥२२॥

अन्य योग—

लग्नाम्बरायेषु भृगुज्ञभानुभिः केन्द्रे गुरौ वर्षशतायुरालयम् ।
बन्धौ गुरुर्व्योम्नि शशी कुजार्कजौ लाभे तदाशीतिसमायुरालयम् ॥२३॥

अन्वयः—भृगुज्ञभानुभिः लग्नाम्बरायेषु गुरौ केन्द्रे वर्षशतायुः आलयं स्यात् । गुरुः बन्धौ, शशी व्योम्नि, कुजार्कजौ लाभे तदा अशीतिसमा आलयं स्यात् ॥२३॥

भा० टी०—शुक्र, बुध, सूर्य ये क्रम से लग्न, दशम, एकादश में हों और गुरु केन्द्र में हों तो एक सौ वर्ष की आयु होती है। गुरु चौथे हों, चन्द्रमा दशम में हों और भौम-शनि एकादश में हों तो ८० वर्ष की आयु होती है ॥२३॥

लक्ष्मीयुक्त गृह के योग—

स्वोच्चे शुक्रे लग्नगे वा गुरौ वेश्मगतेऽथ वा ।
शनौ स्वोच्चे लाभगे वा लक्ष्म्या युक्तं चिरं गृहम् ॥ २४ ॥

अन्वयः—शुक्रे स्वोच्चे लग्नगे वा गुरौ स्वीये वेश्मगते, अथवा शनौ स्वोच्चे लाभगे सति गृहं लक्ष्म्या युक्तं चिरं स्यात् ॥२४॥

अन्वयः—शुक्र अपनी उच्च राशि (मीन) का लग्न में हो, अथवा गुरु अपने गृह (धन-मीन) का चौथे हो अथवा शनि अपनी उच्च राशि (तुला) का एकादश में हो, इन तीनों योगों में गृहारम्भ करने से बहुत समय तक लक्ष्मी से युक्त गृह रहता है ॥२४॥

गृह के अन्य मनुष्य के हाथ में जाने का योग—

द्यूनाम्बरे यद्यैकोऽपि परांशस्थो ग्रहो गृहम् ।
अब्दान्तः परहस्तस्थं कुर्याच्चेद्वर्णपोऽबलः ॥ २५ ॥

अन्वयः—यदा एकोऽपि ग्रहः परांशस्थः द्यूनाम्बरे स्थितः चेत् वर्णपः अबलः तदा अब्दान्तः गृहं परहस्तस्थं कुर्यात् ॥२५॥

भा० टी०—यदि एक भी ग्रह शत्रु के नवमांश में स्थित होकर सातवें या दशम में हो और वर्णपति यदि निर्बल हो तो वह गृह एक वर्ष के मध्य में ही दूसरे के हाथ में चला जाता है ॥२५॥

गृहारम्भ में नक्षत्र और वार से विशेष फल—

पुष्यध्रुवेन्दुहरिसपजलैः सजीवै-
स्तद्वासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात् ।
द्वीशाश्विवतक्षवसुपाशिशिवैः सशुक्रै-
र्वारे सितस्य च गृहं धनधान्यदं स्यात् ॥ २६ ॥

अन्वयः—पुष्यध्रुवेन्दुहरिसर्पजलैः सजीवैः तद्वासरेण च कृतं गृहं सुतराज्यदं स्यात्। द्वीशाश्विवतक्षवसुपाशिशिवैः सशुक्रैः सितस्य वारे च कृतं गृहं धनधान्यदं स्यात् ॥२६॥

भा० टी०—पुष्य, ध्रुव संज्ञक, मृगशिरा, श्रवण, श्लेषा, पूर्वाषाढ़ा इन पर गुरु हों और गुरुवार के दिन गृहारम्भ करने से गृह, पुत्र और राज्य को देता है। विशाखा, अश्विनी, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा, आर्द्रा इन पर शुक्र हों और शुक्रवार को गृहारम्भ करने से गृह धन-धान्य को देता है ॥२६॥

अन्य योग—

सारैः करेज्यान्त्यमघाम्बुमूलैः कौजेऽह्नि वेश्माग्निसुतार्तिदं स्यात् ।
सज्ञैः कदास्त्रार्यमतक्षहस्तैर्ज्ञस्यैव वारे सुखपुत्रदं स्यात् ॥२७॥

अन्वयः—सारैः करेज्यान्त्यमघाम्बुमूलैः कौजे अह्नि कृतं वेश्म अग्निसुतार्तिदं स्यात्। सज्ञैः कदास्त्रार्यमतक्षहस्तैः ज्ञस्यैव वारे कृतं वेश्म सुखपुत्रदं स्यात ॥२७॥

भा० टी०—हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, शतभिषा, मूल इन पर भौम हों और भौमवार का दिन हो तो गृहारम्भ करने से अग्नि और पुत्र से पीड़ा होती है। रोहिणी, अश्विनी, उत्तरा फाल्गुनी, चित्रा, हस्त इन पर बुध हों और बुध के दिन गृहारम्भ करने से गृह सुख और पुत्र को देनेवाला होता है ॥२७॥

अन्य योग—

अजैकपादहिर्बुध्न्यशक्रमित्रानिलान्तकैः ।
समन्दैर्मन्दवारे स्याद्रक्षोभूतयुतं गृहम् ॥ २८ ॥

अन्वयः—अजैकपादहिर्बुध्न्यशक्रमित्रानिलान्तकैः समन्दैः मन्दवारे कृतं गृहं रक्षोभूतयुतं स्यात् ॥२८॥

भा० टी०—पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, ज्येष्ठा, अनुराधा, स्वाती, भरणी इन पर शनि हों और शनि के दिन यदि गृहारम्भ किया जाय तो राक्षस और भूत से युक्त गृह होता है ॥२८॥

अन्य आचार्य के मत से द्वारचक्र—

सूर्यर्क्षाद्युगभैः शिरस्यथ फलं लक्ष्मीस्ततः कोणभै-
र्नागैरुद्वसनं ततो गजमितैः शाखासु सौख्यं भवेत् ।
देहल्यां गुणभैर्मृतिर्गृहपतेर्मध्यस्थितैर्वेदभैः
सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधिया द्वारं विधेयं शुभम् ॥ २९ ॥

अन्वयः—सूर्यर्क्षात् युगभैः शिरसि फलं लक्ष्मीः, अथ नागैः कोणभैः उद्वसनं, ततः गजमितैः शाखासु सौख्यं भवेत्, देहल्यां गुणभैः गृहपतेः मृतिः, मध्यस्थितैः वेदभैः सौख्यं भवेत्, इदं चक्रं सुधिया विलोक्य शुभं द्वारं विधेयम् ॥२९॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से चार नक्षत्र शिर पर कल्पना करे। इसमें द्वार बनाने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। इसके बाद आठ नक्षत्र कोणों में कल्पना करे। इसमें द्वार बनावे तो घर से उद्वास होता है। इसके बाद ८ नक्षत्र द्वारशाखा में कल्पना करे: इसमें द्वार बनाने से सुख होता है। इसके बाद ३ नक्षत्र देहली में कल्पना करे; इसमें द्वार बनाने से गृहस्वामी की मृत्यु होती है। इसके बाद के ४ नक्षत्र द्वार के मध्य में कल्पना करे; इसमें द्वार बनाने से सुख होता है। इस द्वारचक्र का विचार कर पंडितगण शुभद द्वार को बनवावें ॥२९॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ वास्तुप्रकरणम् ॥१२॥

गृहप्रवेशप्रकरणम्

गृहप्रवेश-मुहूर्त—

सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे ।
स्याद्वेशनं द्वास्थमृदुध्रुवोडुभिर्जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे ॥१॥

अन्वयः—सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे द्वास्थमृदुध्रुवोडुभिः जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे (लग्ने) यात्रानिवृत्तौ नृपतेः नवे गहे वेशनं शुभं स्यात् ॥ १ ॥

भा० टी०—उत्तरायण सूर्य में ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख मास में द्वार की दिशा में स्थित नक्षत्र (सप्तशलाका चक्र से) मृदु संज्ञक, ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में जन्मराशि वा लग्न से उपचय (३।६।१०।११) राशि स्थिर लग्न में राजा को यात्रा से लौटने पर नूतन गृह में प्रवेश करना चाहिये ॥ १ ॥

पुराने गृह के प्रवेश में विशेष—

जीर्णे गृहेऽग्न्यादिभयान्नवेऽपि मार्गोर्जयोः श्रावणिकेऽपि सन् स्यात् ।
वेशोऽम्बुपेज्यानिलवासवेषु नाऽऽवश्यमस्तादिविचारणाऽत्र ॥२॥

अन्वयः—जीर्णे गृहे, अग्न्यादिभयात् नवेऽपि गृहे मार्गोर्जयोः श्रावणिके अपि वेशः सत् स्यात्। तथा अम्बुपेज्यानिलवासवेषु वेशः सत् स्यात् । अत्र अस्तादि-विचारणा नाऽऽवश्यम् ॥ २ ॥

भा० टी०—पुराने मकान में, अग्नि आदि के भय से नवीन गृह में भी मार्गशीर्ष, कार्त्तिक, श्रावण में भी तथा शतभिषा, पुष्य, स्वाती, धनिष्ठा इन नक्षत्रों में भी प्रवेश करना शुभद होता है। इसमें गुरु शुक्र के अस्त आदि का विचार करना आवश्यक नहीं है ॥ २ ॥

गृहप्रवेश से पहले वास्तुशान्ति का मुहूर्त और प्रवेशकालिक लग्नशुद्धि—

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे वास्त्वर्चनं भूतबलिं च कारयेत् ।
त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः शुभैर्लग्ने त्रिषष्ठायगतैश्च पापकैः ॥३॥
शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भमृत्यौ व्यर्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे ।
अग्रेऽम्बुपूर्णं कलशं द्विजांश्च कृत्वा विशेद्वेश्म भकूटशुद्धम् ॥४॥

अन्वयः—मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे वास्त्वर्चनं भूतवलिं च कारयेत्। शुभैः त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः च (तथा) पापकैः त्रिषष्ठायगतैः शुद्धाम्बुरन्ध्रे विजनुर्भ-मृत्यौ लग्ने, व्यर्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे, अग्रे अम्बुपूर्णकलशं द्विजान् च कृत्वा भकूट-शुद्धं वेश्म विशेत् ॥ ३-४ ॥

भा० टी०—मृदु संज्ञक, ध्रुव संज्ञक, क्षिप्र संज्ञक, चर संज्ञक और मूल इन नक्षत्रों में वास्तुपूजन और भूतवलि करना चाहिये। शुभ ग्रह त्रिकोण, केन्द्र, एकादश, तीसरे इन भावों में और पापग्रह तीसरे, छठे, एकादश भाव में हों और लग्न से चतुर्थ, अष्टम शुद्ध हो तथा जन्मराशि जन्मलग्न से अष्टम लग्न न हो ऐसे लग्न में, रवि, मंगल वार, रिक्ता तिथि, चर लग्न, अमावास्या और चैत्र मास को छोड़कर आगे जल से पूर्ण कलश और ब्राह्मणों को करके भकूट से शुद्ध गृह में प्रवेश करे ॥ ३-४ ॥

प्रवेश में वाम रवि का विचार—

वामो रविर्मृत्युसुतार्थलाभतोऽर्के पञ्चभे प्राग्वदनादिमन्दिरे ।
पूर्णातिथौ प्राग्वदने गृहे शुभो नन्दादिके याम्यजलोत्तरानने ॥५॥

अन्वयः—मृत्युसुतार्थलाभतः पञ्चभे अर्के क्रमेण प्राग्वदनादिमन्दिरे वामः रविः स्यात् । तथा पूर्णा तिथौ प्राग्वदने गृहे, नन्दादिके क्रमेण याम्यजलोत्तरानने गृहे प्रवेशः शुभः स्यात् ॥ ५ ॥

भा० टी०—लग्न से ८।५।२।११ भावों से ५ भाव के मध्य में सूर्य के रहने से पूर्व आदि दिशा के गृह में प्रवेश करने के लिए वाम रवि होते हैं। अर्थात् लग्न से आठवें भाव से १२ वें भाव तक सूर्य हों तो पूर्व मुखवाले गृह के लिये वाम रवि होते हैं। इसी प्रकार शेष दिशाओं में भी समझना। और पूर्व दिशा के द्वारवाले गृह में पूर्णा तिथि को, दक्षिण दिशा के द्वारवाले गृह में नन्दा तिथि में, पश्चिम दिशा के द्वारवाले गृह में भद्रा तिथि में और उत्तर दिशा के द्वारवाले गृह में जया तिथि को प्रवेश करना चाहिये ॥ ५ ॥

गृहप्रवेश में कुम्भ चक्र—

वक्त्रे भू रविभात् प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाहः कृताः
प्राच्यामुद्वसनं कृता यमगता लाभः कृताः पश्चिमे ।
श्रीर्वेदाः कलिरुत्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे
रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनलाः कण्ठे भवेत् सर्वदा ॥६॥

अन्वयः—कुम्भे रविभात् भूः वक्त्रे प्रवेशसमये चेत् तदा अग्निदाहः,कृताः प्राच्यां उद्वसनं, कृताः यमगताः लाभः, कृताः पश्चिमे श्रीः, वेदाः उत्तरे कलिः, युगमिताः गर्भे विनाशः, रामाः गुदे स्थैर्यम्, अतः अनलाः कण्ठे सर्वदा स्थिरत्वं स्यात् ॥६॥

भा० टी०—सूर्य के नक्षत्र से १ नक्षत्र कुम्भ के मुख में स्थापित करे; उसमें प्रवेश करने से घर में अग्निदाह का भय होता है। फिर ४ नक्षत्र पूर्व में स्थापित करे; इसमें प्रवेश करने से उद्वास होता है। फिर ४ नक्षत्र दक्षिण में स्थापित करे; इसमें प्रवेश से लाभ होता है। फिर ४ नक्षत्र पश्चिम में स्थापित करे; इसमें प्रवेश से लक्ष्मी-प्राप्ति, फिर ४ नक्षत्र उत्तर में स्थापित करे; इसमें प्रवेश से झगड़ा होता है। फिर ४ नक्षत्र गर्भ में स्थापित करे; इसमें प्रवेश से विनाश होता है। फिर ३ नक्षत्र पेंदी में स्थापित करे; इसमें प्रवेश से स्थिरता होती है। फिर ३ नक्षत्र कण्ठ में स्थापित करे; इसमें प्रवेश करने से सर्वदा स्थिरता होती है ॥ ६ ॥

गृहप्रवेश के पश्चात् के कर्म—

एवं सुलग्ने स्वगृहं प्रविश्य वितानपुष्पश्रुतिघोषयुक्तम् ।
शिल्पज्ञदैवज्ञविधिज्ञपौरान् राजाऽर्चयेद्भूमिहिरण्यवस्त्रैः ॥ ७ ॥

अन्वयः—एवं राजा सुलग्ने वितानपुष्पश्रुतिघोषयुक्तं स्वगृहं प्रविश्य शिल्पज्ञ दैवज्ञ विधिज्ञ पौर[illegible]भूमिहिरण्यवस्त्रैः अर्चयेत ॥७॥

भा० टी०—इस प्रकार राजा सुन्दर शुद्ध लग्न में चँदवा, पुष्पमाला और वेद-घोष से युक्त अपने घर में प्रवेश कर कारीगर, ज्यौतिषी, कर्मकांड करानेवाले पुरोहित आदि और पुरवासियों का भूमि, सुवर्ण और वस्त्र आदि से पूजन करे ॥ ७ ॥

शाकेऽद्रचश्वाहीन्दुवर्षे श्रीगणेशेन धीमता ।
कृता मुहूर्त्तग्रन्थस्य टीकेयं पूर्णतामिता ॥

इति मुहूर्तचिन्तामणौ गृहप्रवेशप्रकरणम् ॥ १३॥

समाप्तश्चायं ग्रंथः

ग्रंथकार का परिचय

आसीद्धर्मपुरे षडंगनिगमाध्येतृद्विजैर्मण्डिते
ज्योतिर्वित्तिलकः फणीन्द्ररचिते भाष्ये कृतातिश्रमः ।
तत्तज्जातकसंहितागणितकृन्मान्यो महाभूभुजां
तर्कालंकृतिवेदवाक्यविलसद्बुद्धिः स चिन्तामणिः ॥ १ ॥
ज्योतिर्विद्गणवंदितांघ्रिकमलस्तत्सूनुरासीत्कृती
नाम्नाऽनन्त इति प्रथामधिगतो भूमंडलाहस्करः ।
यो रम्यां जनिपद्धतिं समकरोद्दुष्टाशयध्वंसिनीं
टीकां चोत्तमकामधेनुगणितेऽकार्षीत्सतां प्रीतये ॥ २ ॥
तदात्मज उदारधीर्विबुधनीलकंठानुजो
गणेशपदपंकजं हृदि निधाय रामाभिधः ।
गिरीशनगरे वरे भुजभुजेषुचन्द्रै(१५२२)मिते
शके विनिरमादिमं खलु मुहूर्तचिंतामणिम् ॥ ३ ॥

इति मुहूर्तचिन्तामणिः समाप्तः

* संक्षिप्त सूचीपत्र *

श्रीरामचरितमानस, भाषा टीका सचित्र तथा सजिल्द
(देवदीपिका टीका) आठ काण्ड, क्षेपक सहित
रायल चौपेजी (ग्लेज) मूल्य २५)

श्रीरामचरितमानस, भाषा टीका सचित्र तथा सजिल्द
आठ काण्ड, क्षेपक सहित रायल चौपेजी
रफ कागज मूल्य २०)

श्रीरामचरितमानस, भाषा टीका सचित्र तथा सजिल्द
(देवदीपिका टीका) आठ काण्ड बिलायती
कागज २२ × ३२ = ८ पेजी मूल्य १५)

श्रीरामचरितमानस सटीक (सचित्र तथा सजिल्द
आठ काण्ड चाँदी के ठप्पे सहित)
२२ × २९ = ८ पेजी ग्लेज कागज मूल्य १६)

श्रीरामचरितमानस सटीक (सचित्र तथा सजिल्द
आठ काण्ड चाँदी के ठप्पे सहित)
२२ × २६ = ८ पेजी रफ कागज मूल्य १२)

रामायण भाषा टीका सचित्र तथा सजिल्द ८ काण्ड
डबल क्राउन १६ पेजी ग्लेज मूल्य ८)

रामायण भाषा टीका सचित्र तथा सजिल्द ८ काण्ड
डबल क्राउन १६ पेजी रफ मूल्य ६॥)

मिलने का पता—

श्री गंगा पुस्तकालय, गायघाट, बनारस।